3.5

श्री

भुवनेश्वरी रहस्य

भाषा टीका सहित



राजगुरु पं० हरिदत्त शास्त्री

राजगुरु ग्रन्थमाला

ॐ

भुवनेश्वरी रहस्य—रहस्य प्रकासिता सहित

उद्धारकर्त्ता—
पण्डित हरिदत्त शास्त्री,
राजगुरु, विद्यारत्न, धर्मधुरीण, गढ़वाली,

"गुरुमण्डल का पञ्चम पुष्प"

भुवनेश्वरी रहस्य

राजगुरु, हरिदत्त शास्त्री







याचना

युग्मम्

भुवन मोहिनि ! भोगप्रदे ! शिवे !

सकलशोकनिवारिणि ! कामदे ! ॥

अखिललोकहिते कृपयारते !

त्रिदशमण्डलमौलिनमस्कृते ! ॥१॥

त[illegible]गयाऽनुनयं मम स्वीकुरु,

समय तापशतानि जनस्य मे ॥

इति त्वदब्जयुगे किल याचते,

तव सुतः प्रणतो "हरिदत्तकः" ॥२॥

श्री भुवनेश्वरी चरण किङ्करस्य,

श्री हरिदत्त शास्त्रिणः

प्रयोजन मुखेन मुखबन्धः

अयि महेशि ! शिवे ! भुवनेश्वरि !
हृदि निधाय पदद्वयमम्यते
प्रकटयामि त्वदीय रहस्यकम्,
स्वजन मङ्गल साधन हेतवे ॥

भूमिका

न शिवोपासना नित्या न विष्णू पासना तथा,
नित्योपासना परा देव्याः नित्या श्रुत्यैव चोदिता।
[illegible]ीयं पदाम्भोजं भगवत्याः निरन्तरम्,
[illegible] परतरं किञ्चिदधिकं जगतीतले ॥

नारायण नारद से कहते हैं कि इस धरातल में न शिव की उपासना नित्य है और न विष्णु की उपासना नित्य है, पर देवी की उपासना ही नित्य है। ऐसा वेद प्रतिपादित है। निरन्तर भगवती का चरण-कमल सेवनीय है। इससे बढ़कर संसार में कुछ भी नहीं है।

भुवनेश्वरी सौम्य-शक्ति और सत्वगुण प्रधाना हैं तथा स्त्री-पुरुष, बाल-वृद्ध सभी इसकी उपासना के अधिकारी हैं और इसकी उपासना में कोई विघ्न-बाधा कभी भी नहीं होती है संसार का यथार्थ में अभ्युदय इस विद्या से ही प्राप्त होता है और विघ्न-बाधाएँ शान्त हो जाती हैं।

भगवती भुवनेश्वरी ही सर्वसिद्धिको प्रदान करने में समर्थ हैं। जिस समय जलमग्न संसार में पुनः ब्रह्माण्ड-रचना की भावना उत्पन्न हुई उस समय प्रजापति ब्रह्मा को सृष्टि का आधार तथा आदर्श नहीं मिल रहा था तत्क्षण उन्होंने भगवती भुवनेश्वरी की स्तुति की और भगवती ने ब्रह्मा को यथापूर्व चतुर्दश भुवनों का दर्शन कराकर आदर्श और सृष्टि के रचना का आधार प्रदान किया। चतुर्दश भुवन के निर्माण में सर्वप्रथम कार्य्य सम्पादन के कारण इन देवी का नाम भुवनेश्वरी हुआ है। दस महाविद्याओं में यह चतुर्थ महाविद्या हैं अर्थात् चतुर्दश भुवनों में तेज प्रदान करनेवाली केवल भुवनेश्वरी-शक्ति ही हैं। भुवनेश्वरी महाविद्या अनेक स्थानों में [illegible] अज्ञान का नाश करनेवाली, ज्ञान और समृद्धि को देनेवाली हैं। भुवनेश्वरी को चन्द्रवदनी भी कहते हैं और इन्हीं को चतुर्दशात्मिकाविद्या के नाम से मन्त्र महार्णव ने बताया है। क्योंकि शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष, छन्दशास्त्र तथा ऋक्, साम्, यजुः, अथर्व यह चारों वेद एवं मीमांसा, न्याय, धर्मशास्त्र, पुराणसमुच्चय इन चौदहों विद्याओं को भुवनेश्वरी ही प्रदान करती है।

भगवती भुवनेश्वरी का सिद्ध पीठ टिहरी गढ़वाल राज्य अन्तर्गत त्रिकूटाचल पर्वत पर है। भगवान शङ्कराचार्य्य ने महामाया भुवनेश्वरी के इस पीठ में एक छोटा-सा मन्दिर निर्माण कराया है। इसके द्वार-देश में महाकाली और सदानन्द

भैरव विराजमान हो रहे हैं। उपासना तथा मन्त्र सिद्धि के लिये यह स्थान अनन्य है और अन्तर्मुखवृत्ति एवं समाधिनिष्ठा के लिये निम्नांकित ४ स्थान प्रशस्त हैं—

(१) गुह्यकाली, नैपाल।
(२) भुवनेश्वरी, टिहरी गढ़वाल।
(३) वज्रेश्वरी, कांगड़ा, जालन्धर पीठ।
(४) कामाख्या, आसाम।

परमपूजनीय श्रद्धेय राजगुरु पण्डित हरिदत्त शास्त्री महोदय की असीम कृपा से इस महाविद्या को हम शिष्य [illegible] कर [illegible] हुए हैं। परमपूजनीय गुरुदेव तन्त्र शास्त्र और धर्मशास्त्र के प्रगाढ़ विद्वान और उन्होंने अपने अन्वेषण और अनुभव से हमलोगों के कल्याण के लिये इस मार्ग का अतिश्रेष्ठ दिग्दर्शन कराया है जिसके हमलोग जन्मजन्मान्तर अनुगृहीत रहेंगे।

रमेशसिंह जायसवाल
सूरजमल गुप्त

* श्रीः *

भुवनेश्वरी रहस्य

——:०:——

भगवती भुवनेश्वरीका चरित्र-चित्रण व्यासदेवजीने श्रीमद्देवी भागवतमें विशदरूपसे किया है, और उन्हींके वचनोंसे यह भी प्रमाणित होता है कि जब पृथ्वी जलमग्न हो गयी तो संसारकी रचना करनेके लिये भगवतीने ही प्रथम आदेश निकाला है, यथा देवी भागवत स्कन्ध ३ अध्याय ३ श्लोक ३१—देव्युवाच। "ब्रह्मेशाः तानि कार्याणि कुरुध्वं संयतन्द्रिताः" भगवतीने ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वरको अपना अद्भुत चमत्कार भी दिखाया है। अर्थात् त्रिदेव जो अपने मनमें यह समझे बैठे थे कि सृष्टि, स्थिति संहार यह हमलोगोंके अधिकारमें है, वे यह देखकर चमत्कृत हो गये! कि जिन लोकोंको वे जलमग्न जानते थे, उन लोकोंका देवीने यथापूर्व दर्शन करा दिया।

तदनन्तर उन देवोंने भगवती भुवनेश्वरीका कैसा अपूर्वरूप देखा, इसका भी उन्होंने स्वयं उल्लेख किया है :—

रक्तमाल्याम्बरधरा रक्त गन्धानुलेपना।
सुरक्तनयनाकान्ता विद्युत्कोटिसमप्रभा॥
सुचारुवदना रक्तदन्तच्छदविराजिता।
रमाकोट्यधिका कान्त्या सूर्यबिम्बनिभाखिला॥

पाशाङ्कुशावराभीष्टधराश्रीभुवनेश्वरी ।
अदृष्ट पूर्वा दृष्टा सा सुन्दरी स्मित भूषणा ॥

रक्त-पुष्पकी माला धारण की हुई, या स्वामी शिवानन्दजी सरस्वतीके शब्दोंमें 'रक्त पुष्प गल माला' और लाल साड़ी पहनी हुई, रक्त-चन्दन लगायी हुई, लाल आंखोंवाली, करोड़ों बिजलीकी कान्तिसे जिनका शरीर चमत्कृत हो रहा है और जिनके मुखारविन्द अत्यन्त मनोहर हैं, दन्त-पङ्क्ति लाल हैं और सुशोभित हैं। कान्तिसे करोड़ों लक्ष्मीसे भी अधिक, सम्पूर्ण शरीर सूर्यबिम्बके समान रक्तवर्ण हैं तथा वर, अङ्कुश, पाश और अभीष्टको हाथोंमें धारण की हुई, उन्होंने ऐसा स्वरूप कभी देखा नहीं, ऐसी परमासुन्दरी, जिनके मुख-कमलमें हास्य रेखा प्रस्फुटित हो रही हैं, देवी भुवनेश्वरीको देखकर, वे चकित हो गये।

भगवती भुवनेश्वरीने समग्र ब्रह्माण्डकी रचना करके परम-पुरुष भगवान विष्णुको अखिल ब्रह्माण्डका दर्शन करा दिया और पालनमें पालनीया शक्तिको सृजन करके पालन कार्य सम्पादन करनेमें समर्थ हुई तथा संहारकालमें सम्पूर्ण सृष्टिको अपनी क्रीड़ास्थली बनाकर संहार करनेमें समर्थ हुई।

इससे भी चमत्कारपूर्ण भुवनेश्वरीका चरित्र है, यथा—भगवान विष्णुने स्वयं युवतीके स्वरूपको धारणकर भुवनेश्वरीकी स्तुति करके देवीसे वर याचना की है।

"परिशिष्ट"

भुवनेश्वरी रहस्यमें सर्वप्रथम एकाक्षरीविद्या स्वीकार नामक पटल है, यह विद्या इस प्रकार हैं:— "ह्रीं" यह देवीका प्रधान मन्त्र है। कारण श्रीमद्देवी भागवतमें देवी स्वमुखार-विन्दसे ही कहती है कि 'मायाबीजं हि मन्त्रो मे मुख्यः प्रियकर स्तथा' अर्थात् मायाबीज ही मेरा मुख्य एवं प्रियकर मन्त्र है। यह मायाबीज है ह्रींकार।

एकाक्षरी विद्याके स्वीकारसे ही अखिल मन्त्रोंके उपासनाका फल प्राप्त होता है, इसका प्रमाण माननीय पतञ्जलिकृत महा-भाष्यमें भी उपलब्ध है, यथा—'एकः शब्दः सम्यग् ज्ञातः सुप्रयुक्तः स्वर्गे लोके च काम धुग् भवति' अच्छी तरह जान लिया गया और समीचीन भावसे प्रयोग किया गया एक ही शब्द स्वर्ग और मर्त्य दोनों लोकमें कामनाओंको देनेवाला होता है। इसलिये ह्रींकार शब्दात्मिका एकाक्षरी विद्या ही सम्पूर्ण विद्यो-पासना जनित फलोंको देनेमें समर्थ है।

द्वितीय पटलमें भुवनेश्वरीके चौदह भेदोंका वर्णन है, जिसमें प्रथम भेद है—श्रीं ह्रीं क्लीं भुवनेश्वरी स्वाहा।

द्वितीय भेद—ॐ ह्रीं ऐं क्लीं सौः भुवनेश्वरी स्वाहा।

तृतीय भेद—ॐ ऐं श्रीं क्लीं सौः ह्रौं भुवनेश्वरी स्वाहा ।

चतुर्थ भेद—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं सौः ऐं ॐ ॐ श्रीं श्रीं भुवनेश्वरि ऐं क्लीं सौः स्वाहा ।

पञ्चम भेद—ॐ श्रीं क्लीं सौः ह्रीं भुवनेश्वरि हूं ठः ठः ठः स्वाहा ।

षष्ठ भेद—ॐ ह्रीं ऐं सौः क्लीं श्रीं भुवनेश्वरि ठः ठः स्वाहा ।

सप्तम भेद—ॐ सौः क्लीं श्रीं ऐं ह्रीं हूं भुवनेश्वरि ठः ठः स्वाहा ।

अष्टम भेद—ॐ क्लीं ऐं सौः ह्रीं क्रीं क्रीं क्रीं भुवनेश्वरि क्रीं फट् स्वाहा ।

नवम भेद—ॐ ह्रीं क्लीं हूं क्रीं ह्रीं श्रीं ऐं सौः क्लीं भुवनेश्वरि हूं फट् स्वाहा ।

दशम भेद—ॐ क्लीं श्रीं ह्रीं हूं ह्रौं भुवनेश्वरि हूं स्वाहा ।

एकादश भेद—ॐ ह्रीं श्रीं श्रीं क्रीं क्रीं ऐं ह्रीं सौः क्रीं हूं भुवनेश्वरि फट् स्वाहा ।

द्वादश भेद—ॐ ऐं सौः श्रीं क्लीं भुवनेश्वरि ॐ हूं स्वाहा ।

त्रयोदश भेद—ॐ ऐं सौः क्लीं श्रीं ह्रौं हूं हूं भुवनेश्वरि ॐ ऐं स्वाहा ।

चतुर्दश भेद—ॐ सौः क्लीं ऐं क्लीं सौः क्लीं हूं श्रीं ह्रीं क्रीं भुवनेश्वरि ॐ हूं फट् स्वाहा ।

जिस प्रकार भुवन चौदह हैं, वैसे ही भुवनेश्वरीके भी पूर्वोक्त चौदह भेद हैं और उन्हींका इस पटलमें प्रतिपादन है ।

तृतीय पटलमें किस तिथिमें कौनसे नियम के साथ कौनसे मन्त्रको जपनेसे सिद्धि प्राप्त होती है, इसीका वर्णन है। प्रथमा से लेकर पूर्णिमा तक सम्पूर्ण तिथियोंमें मन्त्र जपनेके नियम और संक्रान्तिमें मन्त्र जप करनेकी विधि इस पटलमें भैरवने भवानीको बताया है।

चतुर्थ पटलमें देवी श्रीभुवनेश्वरीका तत्व वर्णन है, जिसके जपनेमें किसी प्रकारका विघ्न नहीं होता है और इसी तत्वविद्या को पञ्चदशाक्षरीविद्या कहते हैं तथा इसके जपमें शापोद्धार कीलक आदि की आवश्यकता नहीं होती है।

पञ्चम पटलमें भुवनेश्वरीके पूजन-प्रकार हैं।

षष्ठ पटलमें साधकके पालनीय नियम और भूःशुद्धि, भूतोत्सारण, भूतशुद्धि, प्राणायाम तथा सम्पूर्ण न्यासोंके साथ पूजनकी विशदविधि आदि बताई गई है।

सप्तम पटलमें भुवनेश्वरी कवच है।

अष्टम पटलमें भुवनेश्वरी सहस्रनाम है।

नवम पटलमें तत्वविद्या स्तोत्र निरूपण हैं।

दशम पटलमें उत्कीलनक्रम वर्णित है।

एकादश पटलमें ईश्वरमन्त्र प्रकाशन है।

द्वादश पटलमें दीक्षा की विधि बतायी गयी है।

त्रयोदश पटलमें पुरश्चरण विधिका वर्णन है।

चतुर्दश पटलमें होम की विधि वर्णित है।

पञ्चदश पटलमें चक्र-पूजा-विधि है।

षोड़श पटलमें आचारविधि बतायी गयी है।

सप्तदश पटलमें सूर्यग्रहणमें पूजा करनेकी विधि वर्णित है।

अष्टादश पटलमें चन्द्रग्रहणकालीन पूजन प्रकार बताया गया है।

एकोनविंश पटलमें भूकम्पमें किस प्रकार पूजन करना चाहिये इसका स्पष्टीकरण है।

विंश पटलमें संक्रान्तिमें किस प्रकार पूजन कर्तव्य है, इस विषयका विषदी करण है।

एकविंश पटलमें शक्ति पूजन है।

द्वाविंश पटलमें शरत्कालीन नवरात्रिमें किस विधिसे कुमारी पूजन करना चाहिये, इसका वर्णन है।

भुवनेश्वरी रहस्यकी अतिप्राचीन हस्तलिखित पुस्तक शीर्ण-विशीर्णरूपमें मिली यथाशक्ति शुद्ध करनेपर भी त्रुटियां रह गई हैं जिसका शुद्धि-पत्र भी लगा दिया गया है। दशम पटलसे षोड़श पटल तक ॐकारके स्थानपर ॐ इस प्रकार छप गया है, पाठक कृपया उसे ॐकार पढ़ें और जो त्रुटियां रह गई हों उसके निमित्त क्षमा प्रदान करें। परमाराध्य शक्तिके उपासक सेठ मनसुखरायजी मोरने उपासकोंके लिये इसके प्रकाशन करनेका कार्य गुरुमण्डलके पञ्चम पुष्पके नामसे किया है इसके पूर्व गुरु-

मण्डलके चार पुष्प सेठ मनसुखरायजी मोरने ही प्रकाशित किये हैं :—

(१) श्रमजीवन जिसका तात्पर्य मानव जीवनको सफल करनेका प्रथमाध्याय श्रमजीवन है। श्रमजीवियोंको कुछ लोग अपने नेतृत्वमें लाकर उनके द्वारा अपने पक्षमें मत प्राप्तिका साधन कर रहे हैं, श्रमजीवी उनके प्रचारसे सतर्क रहें और अपना वास्तविक हित खेती करना अन्न उत्पादन, पशुपालन में ही समझें। कारखाना आदि ऐसे स्थानपर खोलें जहांपर श्रमजीवी अपनी खेती-बाड़ी कर सकें, इसीपर ध्यान दें। पूंजीपति श्रमजीवीका पितापुत्रका सम्बन्ध रहे।

(२) आहार—आहार शुद्धिसे आरोग्य और मन की पवित्रता दीर्घजीवन होता है।

(३) उपासना भगवत् भजनकी विधि बताई है जिससे दैवीय सम्पत्तिका विकाश हो।

(४) भारतीय संस्कृति भारतवर्षका संस्कार, ईश्वर बुद्धि होनेपर ही है, ईश्वर बुद्धि तथा ईश्वर ज्ञानके बिना मनुष्य संसार में शान्तिपूर्वक सफलता नहीं पा सकता है।

(५) पञ्चम पुष्प भुवनेश्वरी रहस्य इसमें दीक्षाविधि तथा उपासनाका ज्ञान है।

भुवनेश्वरी के प्रकाशन में सबसे पूर्व श्रीमती शिवकुमारी धर्मपत्नि पं० कृष्णप्रसाद भार्गव आगरेवाली एवं पं० सुरेशचन्द्र भार्गव ने भगवती सुरेश्वरी की यात्रामें प्रस्ताव किया था, इसमें सेठ सूरजमल गुप्त, रमेशसिंह जायसवाल, द्वारिकाप्रसाद सुरेका, पं० विहारी शर्मा, सेठ कमलाप्रसाद अग्रवाल ने इस कार्यमें योग दिया है इनको आशीर्वाद यही है कि भगवती की भक्तिका इनमें अधिकाधिक विकाश हो। उपासक इससे लाभ उठावें यही कामना है उसके पूर्व उपासनाका पुष्प देखनेसे पूजा-पद्धतिमें सहायता मिलेगी—सौन्दर्य लहरी के भाष्य में पूजा का विधान कुण्डलनी जागरण की सरलविधि बताई है। अब सौन्दर्य लहरी के भाष्य का द्वितोय संस्करण हो रहा है उसमें तन्त्रका वेदानुमोदित रहस्य तथा तन्त्रानुमोदित योग का विशदीकरण विशेष रूपसे किया जा रहा है।

शुभेच्छु—

हरिदत्त

सूची-पत्र



श्री भुवनेश्वरी रहस्ये शुद्धि पत्रम्

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
यद्पं	यद्रूपं	१	१
योगीगण	योगीजन	२	१
पयपृच्छन्	पर्यपृच्छन्	२	१४
ईशाण	ईशान	३	३
प्रयोजनतेहि	प्रयोजन ही है	६	१०
सादाह्णन	रुद्राह्वत	७	४
अ उ भू	अ उ म	११	१२
मदशार्ण	मदनाण	११	११
सवला	सकला	११	१६
भुवनेश्वरी	ॐ भुवनेश्वरी	१२	१०
कूचवीज	कूर्चवीज	१४	१०
शक्तिवीज	शखोज	१५	१०
ॐ सौ	ॐ ह्रौं	१५	१३
चतुदश	चतुर्दश	१५	१६
द्वयलरी	एक्षरी	१७	२६
ऐं सौं ह्रीं भु०	ऐं सौं भुवने०	१६	१७
सौं क्लीं भुवने	सौं भुवने०	२१	४
ह्रीं ह्रीं क्लीं	ह्रीं ह्रीं भुवने	२१	१४
सौं श्रीं ह्रीं क्लीं	सौं श्रीं ह्रीं भुवने	२२	५

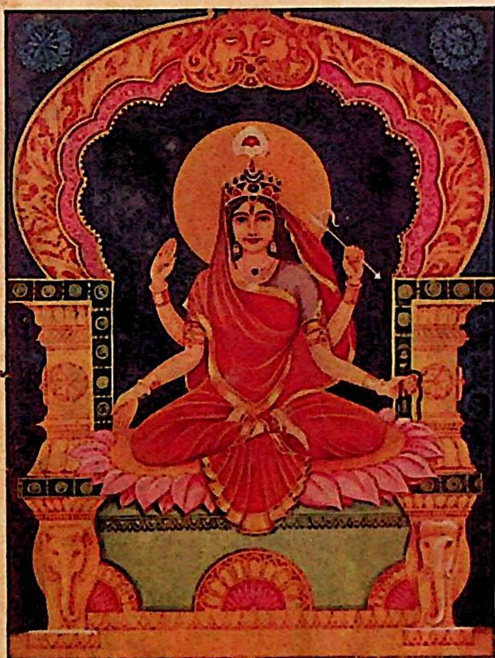
अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
ॐ श्री ॐ श्रीं ह्रीं ऐं ह्रौं ऐं क्लीं सौं ह्रौं ऐं क्लीं सौं क्लीं सौं श्रीं क्लीं ह्रौं	ॐ श्रीं ॐ श्रीं ह्रीं ऐं ह्रीं ऐं क्लीं सौं क्लीं सौं क्रीं क्रीं ह्रीं	२४	१०
ऐं क्लीं श्रीं ह्रां भुवनेश्वर्यै	ॐ ह्रां श्रीं क्लीं ऐं सौं ह्रौं ॐ ह्रौं सौं ऐं क्लीं श्रीं ह्रीं ॐ ह्रीं भुवनेश्वर्यै०	२५	१
ऊर्द्धं दलिणेदिचेच्यां	ऊर्द्धं दक्षिणचोदीच्यां	३४	२०
सद्यादि	सव्यादि	३४	२१
भीतिकरीं	भीतिकरां	३६	११
विदस्मित्	किञ्चित्स्मित	३६	१३
नीतिश्च	नीतश्च	३७	५
समचयेत्	समर्चयेत्	४१	१४
मानवे	मानवे	४८	१७
कण्टमे धूम्रवर्ण इत्यादि	(दो बार छप गया इसे छोड़ दें)	५२	८
भागस	भागशः	५७	१६
जपामन्त्र	अजपा	५८	१५
खडङ्ग	षडङ्ग	५९	१३
श्रोत्रो	श्रोत्रे	५९	२१
पानस्थान	जलकास्थान	३३	८
अन्त्यलिन	शान्त्यातीत	७५	१७

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
इं कीलिक	रं कीलकम्	८१	१२
ॐ	ॐ ८३ पृष्ठसे १०६ तक छपनेमें ॐ के स्थानमें ॐ छपगया पाठक वहाँ ॐ कहें जहाँ पर ॐ है निरर्थक है		
मातृवद्	मातृकावम्	८७	८
कपर्द्दां	कपर्दां	८७	११
विद्याविन्द	विद्यारविन्द	९६	२०
रक्तामाल्या	रक्तमाल्या	१०२	१६
द्विरण्डाय	द्विरदाय	१०४	१३
अत्युग्रासुभ्र	अत्युग्रासुग्र	१०६	२
सुरासूरित्नम्	सुरापूरीत	१०६	२
चिन्तये राकिनी	चिन्तयेत्काकिनीं	१०६	२२
इतिराकिनीं	इतिकाकिनी	१०६	२२
रां रिं रुं रें रौं रं रमल वरयूं राकिनीं मां	कां किं कूं कें कौं कं कसल वरयूं काकिनी मां	११०	१
अनाहतराकिनी	अनाहतकाकिनी	१०६	२२
ह्रां ह्रीं ह्रूं डाकिनी	ह्रां ह्रीं ह्रूं याकिनीं	११२	२०
पञ्चांशद्वर्णे	पञ्चाशत् वर्ण देवता	११३	३
दिक्षुनाता	दिक्षुनाना	११५	१३

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
प्राक्षणि	प्रोक्षणी	१२२	२
अभिसिद्धि	अभिष्टसिद्धि	१२७	२१
प्रथवावर्ण वनम्	प्रथमावरणार्चनम्	१२८	२२
समपये	समर्पये	१२६	६
सन्तप्य	सन्तर्प्य	१३१	१०
न्यूनाति०	न्यूनातिरिक्तं सर्वंपरि-पूर्णमस्तु तृप्तिरस्तु	१३४	२२
रक्षातु	रक्षरक्षतुमांस्पृशाम्	१३५	५
प्रविलच	प्रविलसचन्द्रा	१४०	५
पायनेत्रे	पायन्नेत्रे	१४३	४
पायान्यो गुह्य	पायात् गुह्यं	१४३	१४
पाया	पायात्	१४३	२२
प्रवीमीं	प्रवीम्यहमिदं	१४६	१२
मालापहा	मलापहा	१५६	१७
स्तुल्यं	स्तुत्यं	१५८	१६
मध्याह्न	मध्याह्ने	१५६	२
पठेदेय	पठेद्यस्तु	१६०	६
अदात्व	प्रदातव्य	१६०	१५
ध्यायेद् धलंक	ध्यादेद्धृत्पंकजे	१६२	१०
हिमकलाघत	हिमकला घनुगमि	१६२	१८
पावति	पार्वति	१६६	५

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
सर्वोत्तल	सर्वोत्तम	१६७	२
आयो	आढ्यो	१८७	७
मुञ्जीत	भुञ्जीत	१८६	११
कम करने	कार्य करने	१६०	१६
पुरश्चर	पुरश्चरण	१६६	४
परां	परो	१६६	७
मीश्वरी	मीश्वरि	१६६	८
दृघात्वलि	दद्यात् वलिं	२०१	१०
पञ्चाभि	पञ्चभि	२०१	११
क्षेत्रं	क्षत्रं	२०१	१५
यनाशु	येनाशु	२०१	१८
मानदेस्तु	मानन्दस्तु	२०५	१२
नंतर्या	सन्तर्प्य	२०६	८
सिद्धिमवाप्नुयात्	तेनसिद्धिमवाप्नुयात्	२१०	३
सूय	सूर्यं	२१५	३
विधिन्न	विधिवन्नत्वा	२१६	२
समपयेत्	समर्पयेत्	२२४	३
अथ	अर्थ	२३७	१७





उद्यद्दिनद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम् ।
स्मेरमुखीं वरदाङ्कुशपाशाभीतिकरां प्रभजेभुवनेशीम् ॥

ॐ

* परदेवतायै नमः *

अथ

भुवनेश्वरी रहस्य प्रारम्भः

——:*:——

ॐ चिद्रूपं यद्रूपं शून्यं स्वरूपं रूपैरूप्यं योगिभिः सर्वसंस्थम् ।
जीयाच्छम्भोस्त्रैपुराख्यं महन्तन्नासन्नोसत्सन्तसच्चित्रचित्रम् ॥१॥

दार्शनिक और वैज्ञानिक शास्त्रमें विद्या तथा अविद्या दो शब्द आये हैं। विद्या आत्मज्ञानका वाचक, अविद्या कर्मकाण्ड (जो जन्म-मरणका बोधक है) का वाचक है। तन्त्र साहित्यमें विद्याशक्ति दश प्रकरणोंमें वर्णित है।

इन महाविद्याओंमें श्रीभुवनेश्वरीकी ही प्रधानता है, जिनका रहस्य कहते हैं। गुप्त विषयको अर्थात् जो जनसाधारणके कर्ण या दृष्टिपथमें न आया हो, यह रहस्य भैरवजीने पुराकालमें पार्वतीके आग्रहसे केवल उन्हें ही कहा था।

...के तीन विशेषण कहे गये हैं, यथा सत् चित् आनन्द, सच्चिदानन्दकी चित् शक्ति वह है जिससे ब्रह्माण्डमें चित् शक्तिका स्फुर[illegible] होता है और वह सूक्ष्मातिसूक्ष्म रूप है।

चिद्रूप, शून्यस्वरूप, आत्मरूप आदि योगीगण जिसे सर्वत्र देखते हैं ऐसा भगवान शम्भुका त्रिपुररूपी प्रकाश है, जिसे न तो सत् कह सकते हैं और न असत् कह सकते तथा सदसत् भी नहीं कह सकते हैं वह स्थायी है ॥१॥

श्रीशैलराजशिखरे नानाद्रुमलताकुले ।
वसन्तलक्ष्मीनिलये समासीनमुमापतिम् ॥२॥
एकदादेवमीशानं शशिशेखरमीश्वरम् ।
उमाश्रितार्धवपुषं देवदानवसेवितम् ॥३॥
ध्यानासक्ताक्षित्रितयं जटाजूटलतारुणम् ।
भस्माङ्गरागधवलं नारायणनमस्कृतम् ॥४॥
ब्रह्मादिदेवप्रणतं गन्धर्वजनवन्दितम् ।
यक्षराक्षसनागेन्द्र दैत्येन्द्रकुलपूजितम् ॥५॥
भैरवं भैरवाकारं गिरीशं परमेश्वरम् ।
उत्थाय विनता भूत्वा पर्यपृच्छत पार्वती ॥६॥

अनेक प्रकार वृक्षोंसे खचित और वसन्तकालीन लक्ष्मीका स्थान (अर्थात् अनेक प्रकारके पुष्पोंसे सुसज्जित) हिमाचलमें विराजमान, अर्धनारीश्वररूपको धारण किये हुए, देव तथा दानवोंसे सुसेवित, जिनका तृतीयनेत्र जटाजूटरूपी लतासे अरुणाभ एवं ध्यानमग्न हैं और जिनका शरीर भस्मोद्धूलनसे धवल-वर्ण हो रहा है तथा ब्रह्मा, विष्णु आदि देवतागण जिनकी वन्दना कर रहे हैं, गन्धर्वजन जिन्हें प्रणाम कर रहे हैं, यक्ष, राक्ष

नागेन्द्र और दैत्याधिराजके कुल जिनकी उपासना कर रहे हैं, भयङ्कर तथा भयको उत्पन्न करनेवाले शरीरको धारण किये हुए, उमापति. ईशाण, गिरीश, परमेश्वर आदि विशेषण विशिष्ट शिवजीको उठके अत्यन्त नम्रभावापन्न होकर पार्वती प्रश्न करती हैं।

श्री पार्वत्युवाच ॥ श्री पार्वतीजी कहती हैं—

भगवन् सर्वलोकेश सर्वलोकनमस्कृत ।
गुणातीत गणाध्यक्ष भूतेश्वर महेश्वर ॥७॥
सृजस्यवसि नित्यं त्वं संहरस्यमिमं जगत् ।
चराचरं महेशान श्रुतं सर्वं भवन्मुखात् ॥८॥
महेश श्रोतुमिच्छामि भुवनेशीरहस्यकम् ।
वद शीघ्रं दयाम्भोधे यद्यहं प्रेयसी तव ॥९॥

हे चतुर्दशलोकेश्वर तथा लोकमण्डलसे नमस्कार किये जाते हुए, निर्गुण, गणेश्वर, भूतेश्वर, महेश्वर आदि विशेषण विशिष्ट भगवन् ! आप निरन्तर इस जगत्का सृजन, पालन और संहार करते हैं।

हे महेशान ! आपके मुखारविन्दसे सम्पूर्ण चर तथा अचर दोनोंका विषय श्रवण कर चुकी हूं।

अब मैं भुवनेश्वरी महाविद्याके रहस्यको सुनना चाहती हूँ, हे दयासागर ! यदि मैं आपकी प्रियतमा हूँ। तो शीघ्रतापूर्वक कहिये।

श्री भैरवउवाच ॥ भैरवजी उत्तर देते हैं—

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि रहस्यमिदमद्भुतम् ।
भुवनेश्याश्च सर्वस्वं सार भूतं समप्रिये ॥१०॥

हे भगवति! भगवती भुवनेश्वरीका सर्वस्व जो उसका यथार्थ सार है, ऐसे अद्भुत रहस्यको मैं कहता हूं तुम सुनो।

लक्षवार सहस्राणि वारितानि पुनः पुनः।
स्त्रीस्वभावान् महादेवि पुनस्त्वं परिपृच्छसि ॥११॥
अद्यभक्त्या तव स्नेहाद् वक्ष्यामि परमाद्भुतम्।
भुवनेशी रहस्याख्यं तन्त्रराजं महेश्वरि ॥१२॥
सर्वागमैकमुकुटं सर्वसारमयं ध्रुवम् ।
सर्वमन्त्रमयं दिव्यं सर्वैश्वर्यफलप्रदम् ॥१३॥
एकाक्षरी या देवेशी भुवनेशी महेश्वरी।
हृदि लेखेव जागर्ति प्राणशक्तिरियं परा ॥१४॥
हृल्लेखा कथ्यते तस्मान् मायानुचिन्त्य वैभवात्।
अनया रहिताः सर्वे निर्जीवा मन्त्रराशयः ॥१५॥
अतस्तु सर्वमन्त्राणामियमुद्बोधिनी मता।
शृणुष्वावहितो भूत्वा नामैकाक्षर रूपिणीम् ॥१६॥

मैंने करोड़ों बार इसके पूछनेसे तुम्हें मना भी किया है तथापि स्त्री सुलभ सरल स्वभावसे तुम प्रश्न कर रही हो। अतएव तुम्हारी भक्ति और स्नेहसे प्रेरित होकर, आज मैं

तन्त्रोंका सम्राट्, चमत्कारपूर्ण भुवनेश्वरी रहस्यको कहता हूं। हे प्रिये! जो भुवनेश्वरी रहस्य सम्पूर्ण आगमोंका मुकुट है (आगम शास्त्रोंको कहते हैं और इनकी संख्या आचार्य इस प्रकार बताते हैं यथा—

कपिलश्च कणादश्च गौतमश्च पतञ्जलिः।
व्यासश्च जैमिनि श्चैव शास्त्रकारा ह्युदाहृताः॥

भावार्थ—१ वेदान्त, २ सांख्य, ३ मीमांसा, ४ न्याय, ५ वैशेषिक, ६ योग ये ही शास्त्र और सबका सार, सम्पूर्ण ऐश्वर्यों का देनेवाला यह निश्चल मन्त्रमय, स्वर्गीय सम्पूर्ण फलोंका प्रदाता भी है और भुवनेश्वरीकी जो एकाक्षरी विद्या हृदयकी लेखाकी तरह चैतन्य रहती है और यही पराशक्ति तथा प्राणशक्ति भी है। अतः मायाबीजके चिन्तन करनेसे यह हृल्लेखा कही जाती है और इस हृल्लेखा (मायाबीज) के बिना सम्पूर्ण मन्त्र निर्जीव हैं। इसलिए यही एकाक्षरी विद्या सम्पूर्ण मन्त्रोंकी उद्बोधिनी (जाग्रत करनेवाली शक्ति है, अर्थात् इस एकाक्षरी विद्यासे हीन मन्त्रसमूह प्राणहीन हैं और जब चैतन्य ही नहीं, तो चमत्कार कहां) है। हे महेश्वरी! तुम एकान्तचित्त होकर इस एकाक्षरी विद्याको सुनो।

कथयामि महादेवि भुवनेशीं महेश्वरि।
मायाबीजं नाममध्ये नमो मन्त्रान्तिमं वदेत्॥१७॥
एकाक्षरीयं वितता भुवने भुवनेश्वरी।
अनया सदृशी विद्या नास्त्यन्या ज्ञानसाधने॥१८॥

नात्र चित्त विशुद्धिर्वा नारिमित्रारिदूषणम् ।
न वा प्रयास वाहुल्यं समया समयादिकम् ॥१६॥

हे महादेवि ! मैं भुवनेश्वरी मन्त्र सुनाता हूँ, तुम सुनो। भुवनेश्वरी नाम बीजमें मायाबीज और अन्तमें नमः संयोग करनेसे चतुर्दश भुवनमें यह एकाक्षरी विद्या विस्तृत है। इस विद्याके समान दूसरी कोई विद्या भी ज्ञानसाधनमें समर्थ नहीं है इसमें न तो चित्तशुद्धिकी आवश्यकता है और न मन्त्रोंमें मित्र, सम, अरि आदि जो दोष दिखलाये हैं वे ही हैं तथा सामयिक सम्प्रदायवालोंको भी इसमें किसी प्रकारके अधिक प्रयास करनेकी प्रयोजनीयता है।

देवैर्देवत्व विधये सिद्धैः खेचरसिद्धये ।
पन्नगैः राक्षसै-र्मर्त्यैं मुनिभिश्च मुमुक्षुभिः ॥२०॥
कामिभिर्धर्मिभिश्चार्थ लिप्सुभिः सेविता परा ।
न वसुव्ययवाहुल्यं कायक्लेशकरं तथा ॥२१॥
य एनां चिन्तयेन् मन्त्री सर्वकामार्थ सिद्धिदाम् ।
तस्य हस्ते सदैवास्ति सर्व सिद्धि न संशयः ॥२२॥
गद्यपद्यमयीवाणी सभायां तस्य जायते ।
तस्य दर्शन मात्रेण वादिनो निष्कृतादराः ॥२३॥
राजानोऽपिहि दासत्वं भजन्ते किं प्रयोजनाः ।
अग्नेः शैत्यं जलस्तम्भं गतिस्तम्भं विवस्वतः ॥२४॥
दिवारात्रिव्यत्ययं च वशीकर्तुं क्षमोभवेत् ।
सर्वस्यैव जनस्येह वल्लभः कीर्ति वर्द्धनः ॥२५॥

अन्ते च भजते देवीगणत्वं दुर्लभं नरः।
चन्द्र सूर्यसमो भूत्वा वसेत् कल्पायुतं दिवि ॥२६॥
न तस्य दुर्लभं किञ्चिद्योवेत्ति भुवनेश्वरीम्।
अस्य मन्त्रस्य देवेशि ऋपि शक्ति सदाहृतः ॥२७॥
छन्दश्च देवदेवेशि गायत्री देवतास्मृता।
भुवनेशि महेशानि सुरसङ्घनिषेविता ॥२८॥
शिवोबीजं स्मृतं देवि ईकारः शक्तिरुच्यते।
रकारः कीलकं देवि धर्मकामार्थ मुक्तये ॥२९॥
विनियोगो महादेवि कीर्तितोप्यङ्गकल्पनाम।
षड्दीर्घयुक्त बीजेन कुर्याच्च साधकोत्तमः ॥३०॥
इदं रहस्यं परमं सर्वतन्त्र रहस्यकम्।
ना भक्ताय प्रदातव्यं गोपनीयं स्व योनिवत् ॥३१॥

देवोंसे देवत्व प्राप्तिके लिये, सिद्धोंसे आकाश गतिके लिये, तथा पन्नग, राक्षस, मर्त्य, मुनि एवं मुमुक्षु कामना सिद्धार्थी, अर्थार्थी, धर्मार्थी आदियोंसे अपनी अपनी कामना सिद्धिके निमित्त पुराकालमें इस पराशक्तिकी उपासना की गयी है।

इस उपासनामें धन व्ययकी बहुलता नहीं है तथा शारीरिक कष्टको भी यह देनेवाली नहीं है। समग्र कामना और आर्थिक सिद्धि प्रदात्री इस विद्याका जो मन्त्रार्थ-ज्ञाता चिन्तन करता है, उसके हाथमें निरन्तर सब सिद्धियां विराजती हैं इसमें सन्देह नहीं।

इस एकाक्षर मन्त्रके जपनेवालेके मुखसे सभामें गद्यपद्यमयी वाणी निकलती रहती हैं और विवाद करनेवाले उसके दर्शनमात्रसे ही सम्मान रहित हो जाते हैं। जब राजन्य मण्डल भी उसके दास हो जाते हैं, तो जनसाधारणकी गणना ही क्या है।

इस मन्त्रका सिद्धि प्राप्त मनुष्य अग्निको शीतल करनेमें समर्थ होता है, जलवृष्टिको रोक सकता है, भगवान् सूर्यकी गतिरोध कर सकता है, दिनको रात्रि तथा रात्रिको दिनमें परिणत कर सकता है और वशीकरण विद्यामें प्रवीण होकर सम्पूर्ण जगतको अपने वशमें कर सकता है।

वह मनुष्य जोकि इस एकाक्षरी विद्याका उपासक है इस संसारमें सबका प्यारा होकर कीर्तिको बढ़ानेवाला होता है, और अपने अन्तकालमें भी त्रैलोक्य-दुर्लभ देवीगणकी पदवीको प्राप्त होता है और चन्द्र तथा सूर्यके समान होकर अयुतकल्प पर्यन्त स्वर्गमें निवास करता है।

भुवनेश्वरी विद्यामें सिद्धि प्राप्त मानवके लिये संसारमें कुछ भी दुष्प्राप्य नहीं है।

हे देवेशि! इस एकाक्षरी मन्त्रके ऋषि शक्ति हैं, गायत्री छन्द है तथा त्रयस्त्रिंशदमरसुसेविता भुवनेश्वरी देवता हैं और ह कार बीज है, ई कार शक्ति है एवं र कार कीलक है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष साधनके लिये इसका प्रयोग किया जाता है।

इस बीजाक्षरके दीर्घ षट् वर्णोंसे करन्यास और अङ्गन्यास किया जाता है।

यह उत्तम रहस्य सम्पूर्ण तन्त्रोंमें गुप्त है, जो भक्त न हो उसे सर्वथा न कहना चाहिये, जैसे तुम अपनी योनिको प्रकाशित नहीं करती हो तद्वत् उसी प्रकार इसे भी प्रकट न करना।

भुवनेश्वरी रहस्य एकाक्षरी विद्या स्वीकार नामक
प्रथम पटल समाप्त ।

१—तन्त्रोंके नाम क्रमसे यह हैं यथा—ब्रह्मयामल, विष्णुयामल, रुद्रयामल, लक्ष्मीयामल, उमायामल, स्कन्दयामल, गणेशयामल, जयद्रथयामल, चन्द्रज्ञान इसमें षोड़श नित्याओंका वर्णन है, भेरुण्डा, भगमालिनी, शिवदूती, मालिनीविद्या, महासम्मोहन, वामजुष्टा, महादेव, वातुला, वातुलोत्तरा, कामिका, हृदयभेदतन्त्र, तन्त्रभेद, गुह्यतन्त्र, कलावाद, कलासागर, कुण्डिकामत, मतोत्तरा, विनाख्या, तारोत्तला, तरोत्तलोत्तरा, पञ्चामृत, रूपभेद, भूतोड्डामरा, कुलसार, कुलोद्दिशा, कुलचूड़ामणि, सर्वज्ञानोत्तरा, महाकालिमता, अरुणेश्वर, मोदिनीशा, विकुण्ठेश्वर, पूर्वाम्नाय, पश्चिमाम्नाय, दक्षिणाम्नाय, उत्तराम्नाय, निरुत्तराम्नाय, विमला, विमलोत्तरा, देवीमाता, अन्तिममाता।



द्वितीय पटल प्रारम्भः

—:०:—

श्री देव्युवाच ॥ भगवती भैरवजी से प्रश्न करती हैं—

भगवन्सर्वधर्मज्ञ सर्वलोकनमस्कृत ।
तत्वं यद् भुवनेश्वर्या स्तत्त्वं वद जगत्प्रभो ॥१॥

अखिल जगत् नमस्कृत! समग्रधर्मज्ञ! हे जगन्नाथ! आप भुवनेश्वरी देवीके तत्वको कहिये।

श्री भैरवउवाच ॥ भैरवजी बोले—

चतुर्दशात्मिका विद्या भुवने भुवनेश्वरी ।
तस्या श्री भुवनेश्वर्या भेदा भुवि चतुर्दश ॥२॥

हे लोकेश्वरि! पृथ्वीमें और चतुर्दश भुवनोंमें पूर्वोक्त चतुर्दशात्मिका भुवनेश्वरी—विद्याके चौदह भेद हैं।

ॐ रमार्णं समस्ताक्षरं कामराजं
तथा पञ्चवर्णाङ्कितं नाम देव्याः।
ततो ठद्वयं देवि मन्त्रावसाने
स्मृतो भेद मन्त्रो मयाद्यो दशार्णः ॥३॥

भुवनेश्वरीका प्रथम भेद यथा—रमाबीज, भुवनेश्वरीबीज, भुवनेश्वरीका सम्पूर्ण नाम दो ठकार (स्वाहा) जिसका अर्थ यह है—श्रीं ह्रीं क्लीं भुवनेश्वरी स्वाहा।

तारं माया वाग्भवं कामराजं
शक्तिर्मध्ये नाम पञ्चाक्षरीयम् ।
अन्ते दद्यात्सोरमेपस्मृतस्ते
मन्त्रोद्धारो देविभेदो द्वितीयः ॥४॥

द्वितीयभेद यथा—प्रथम प्रणव तब मायाबीज, वाग्भवबीज, कामराज, शक्तिबीज, भुवनेश्वरीका नाम अन्तमें स्वाहा, फलितार्थ—ॐ ह्रीं ऐं क्लीं सौं भुवनेश्वरी स्वाहा ।

त्र्यक्ष वाग्भव रमामदशार्णं
शक्ति शून्य शरदूर्ध्वं मातृका ।
नाम ठद्वय मथो महेश्वरी
भेद एष गदित स्तृतीयकः ॥५॥

तृतीय भेद—अ. उ, मू, ये तीन अक्षर अर्थात् प्रणव, वाग्भवबीज, रमाबीज, कामबीज, शक्तिकूट, शून्य, शर, भुवनेश्वरीका नाम और दो ठकार यथा—ॐ ऐं श्रीं क्लीं सौं ह्सौं भुवनेश्वरी स्वाहा ।

तारार्णं सबला रमार्णं मदनौ शक्तिस्तथा वाग्भवं,
तारद्वन्द्वमथो रमार्णद्वितयं मध्येऽभिधां विन्यसेत् ।
अन्ते वाग्भवमन्मथौ शरद्वयो नीरध्वभेदस्मृतो,
मन्त्राणां भुवनेश्वरी प्रियतरो दुर्गं चतुर्थोमया ॥६॥

चतुर्थ भेद—पहले प्रणव फिर वधूबीज, रमाबीज, कामबीज, शक्तिकूट, वाग्भवकूट, दो प्रणव, रमाबीजद्वय, भुवनेश्वरीका नाम

पुनः वाग्भवबीज, कामबीज, शर, शक्तिबीज (स्वाहा) अर्थात् ॐ ह्रौं श्रौं क्लीं सौं ऐं ॐ ॐ श्रीं श्रीं भुवनेश्वरी ऐं क्लीं सौं स्वाहा।

तारं लक्ष्मीमन्मथः शक्तिबीजं
मायाबीजं नाममध्ये शिवायाः।
तारं कूर्चं त्रिष्ठकारं वन्हं च
भेदः प्रोक्तः पञ्चमो विश्वमातः ॥७॥

पञ्चम भेद—प्रणव, रमाबीज, कामबीज, शक्तिबीज, पुनः मायाबीज, भुवनेश्वरीका नाम, प्रणव, कूर्चबीज, तीन ठकार अन्तमें स्वाहा, अर्थात् ॐ श्रीं क्लीं सौं ह्रीं भुवनेश्वरी हूं ठः ठः ठः स्वाहा।

त्र्यक्षर माया वाग्भव शक्ति
मन्मथ लक्ष्मीर्नाम च मध्ये।
ठद्वयमन्ते पार्वति भेदः
षष्ठो गोप्यो निगदित एष ॥८॥

षष्ठम भेद—ओंकार, मायाबीज, वाग्भवबीज, शक्तिबीज, कामबीज, लक्ष्मीबीज, भुवनेश्वरीका नाम, दो ठकार और स्वाहा यथा ॐ ह्रीं ऐं सौं क्लीं श्रीं भुवनेश्वरी ठः ठः स्वाहा।

तारक शक्तिर्मन्मथ लक्ष्मी
वाग्भवमाया विगलितकूर्चम्।
नाम च ठद्वय मन्ते
भेदः प्रोक्तः सप्तम एषः ॥९॥

सप्तम भेद—ओंकार, शक्तिबीज, कामबीज, लक्ष्मीबीज, वाग्भवबीज, मायाबीज, कूर्चबीज, भुवनेश्वरी शब्द, दो ठकार और स्वाहा यथा—ॐ सौं क्लीं श्रीं ऐं ह्रीं हूं भुवनेश्वरि ठः ठः स्वाहा।

त्रासोल्लसन् मदन वाग्भव शक्ति माया,
काली तवत्रययुगं ह्यभिधा च मध्ये।
काली ठकार त्रितयं तुरगं वनस्थ
भेदोऽष्टमो निगदितस्तव प्रीति वृद्ध्यै ॥९॥

अष्टम भेद—प्रणव, कामबीज, वाग्भवबीज, शक्तिबीज, वधूबीज, कालीबीजत्रय, भुवनेश्वरीका नाम, पुनः कालीबीज, दो ठकार, स्वाहा, फलितार्थ यथा—ॐ क्लीं ऐं सौं ह्रीं क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं भुवनेश्वरि क्रीं ठः ठः ठः फट् स्वाहा।

त्रासो माया मन्मथं कूर्च काली
माया लक्ष्मीर्वाग्भवंशक्तिकामा।
न्यासार्णं वै कूर्च फट् नीरमन्ते
भेदः प्रोक्तो नवमो गोपनीयः ॥१०॥

नवम भेद—ओंकार, मायाबीज, कामबीज, कूर्चबीज, कालीबीज, पुनः मायाबीज, लक्ष्मीबीज, वाग्भवबीज, शक्तिबीज, कामबीज, भुवनेश्वरीका नाम, कूर्चबीज, फट्कार स्वाहा यथा—ॐ ह्रीं क्लीं हूं क्रीं क्रीं ह्रीं श्रीं ऐं सौं क्लीं भुवनेश्वरि हुं फट् स्वाहा।

तार सारं कमला सकला च कूर्चं शून्यं शरदाख्यमीश्वरि।
तोर नीर मवसानके मनोर्भेद निगदितः शुभदस्ते ॥११॥

दशम भेद—प्रणव, कामबीज, रमाबीज, वधूबीज, कूर्चबीज, आकाशबीज, भुवनेश्वरीका नाम, हुंकार, स्वाहा यथा—ॐ क्लीं श्रीं ह्रीं हूं ह्सौः भुवनेश्वरि हूँ हूँ स्वाहा।

त्र्यक्ष माया रमालक्ष्मी तटश्च काली
युवाग्भवं वासना शक्तिनाम।
काली कूर्चं फट् हरं देवतायाः
मन्त्रः प्रोक्तो देवि चैकादशोऽयम् ॥१२॥

एकादश भेद—प्रणव, मायाबीज, रमाबीज, पुनः रमाबीज, कालीबीजद्वय, वाग्भवबीज, वासनाबीज, शक्तिबीज, भुवनेश्वरीका नाम, कालीबीज, कूर्चबीज, फट्कार यथा—ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं हूं क्रीं क्रीं ऐं सौः भुवनेश्वरी क्रीं हूं फट् स्वाहा।

त्र्यक्षवाग्भवशरत्कमलार्णं कामनाम भुवनेश्वरिन्यसेत्।
तारकूर्चं हरनोरकमन्ते भेद एष गदितस्तुद्वादशः ॥१३॥

द्वादश भेद—प्रणव, वाग्भवबीज, शरबीज, लक्ष्मीबीज, कामबीज, भुवनेश्वरीका नाम, ओंकार, कूर्चबीज, फलितार्थं यथा ॐ ऐं सौं श्रीं क्लीं भुवनेश्वरि ॐ हूँ स्वाहा।

ततस्त्रयोदश भेद उच्यते तद् यथा—उसके अनन्तर त्रयोदश भेद कहा जा रहा है, वह इस प्रकार है—

ततः प्रणववाग्भवः शरदनङ्गमायारमा,
वियद्गतगताशरन् तटयुगश्चमध्येऽभिधाम्।
पुनः प्रणववाग्भवमहरवने तव प्रीतये,
त्रयोदशतमो मया निगदितस्तु भेदोत्तमः ॥१४॥

त्रयोदश भेद—प्रणव, वाग्भवबीज, वाणबीज, कामबीज, मायाबीज, रमाबीज, आकाशबीज, पुनः वाणबीज, हुंकार भुवनेश्वरीका नाम, प्रणव, वाग्भवबीज, अन्तमें स्वाहा, इससे सम्पूर्ण मन्त्र इस प्रकार बनता है यथा—ॐ ऐं सौं क्लीं श्रीं ह्सौः हूं हूं भुवनेश्वरि ॐ ऐं स्वाहा।

तारं शरन्मदन वाग्भव काम राजम्
शक्तिर्वधूस्तटरमा सकला च काली।
मध्ये भिधां प्रणवकूर्चं हरं तथाऽयं,
भेदश्चतुर्दशतमो गदितो भवान्याः ॥१५॥

चतुर्दश भेद—ओंकार, शक्तिबीज, कामबीज, वाग्भवबीज, कामराजबीज, शक्तिबीज, वधूबीज, कूर्चबीज, रमाबीज, कला, कालीबीज, भुवनेश्वरीका नाम, पुनः प्रणव, कूर्चबीज, फट्कार, स्वाहा, सम्पूर्ण मन्त्र यथा—ॐ सौं क्लीं ऐं क्लीं सौः स्त्रीं हूं श्रीं ह्रीं क्रीं भुवनेश्वरि ॐ हूं फट् स्वाहा।

इति श्री भुवनेश्वर्याः सर्वतन्त्रेषु गोपिताः।
चतुर्दश मया भेदाः कथिताः परमेश्वरि ॥१६॥

हे परमेश्वरि! पूर्वोक्त चतुर्दश भेद तन्त्रोंमें गुप्त हैं, जो मैं ने भुवनेश्वरीके चौदहों भेद तुम्हें कहा है।

एतेषां देवदेवेशि ऋष्यादि पूर्ववत्स्मृतम्;
इदं रहस्यं परमं भक्त्या तव मयोदितम्।
सर्वस्वं भुवनेश्वर्याः गोपनीयम् प्रयत्नतः ॥१७॥

इन मन्त्रोंके ऋषि, छन्द, देवता आदि जैसे प्रथम पटलमें वर्णन किये गये हैं, वैसे ही हैं। हे भगवति! यह अतीव अप्रकाश्य और देवी श्री भुवनेश्वरीका सर्वस्व रहस्य तुम्हारी भक्तिसे प्रेरित होकर मैं ने तुम्हें बताया है, इसे यत्नपूर्वक गुप्त रखना (अर्थात् प्रकाश न करना) इस प्रकार श्री भुवनेश्वरी रहस्यका चतुर्दश भेदात्मक द्वितीय पटल समाप्त हुआ।



तृतीयः पटलः प्रारम्भः

—:•:—

श्री भैरवउवाच ॥ भैरवजी बोले—

ॐ शृणुदेवि प्रवक्ष्यामि भेदानन्यान्महेश्वरि ;
एकादि षोड़शार्णान्तान्सर्वकामार्थं सिद्धिदान्।
प्रयोग सहितान्देवि भुवनेशी प्रियात् प्रियम् ॥

हे देवि, हे महेश्वरि! भुवनेश्वरीके एकसे आरम्भ कर सोलह पर्यन्त जो धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष तथा सिद्धिप्रद भेद हैं उन्हें मैं प्रयोग सहित कहता हूं तुम सुनो।

रवौ दर्शदिने मन्त्री प्राङ्मुखः साधकोत्तमः।
एकाक्षरीं जपेद्विद्यां धर्मकामार्थ सिद्धये ॥

मन्त्रार्थज्ञ साधक प्रथमा तिथियुत रविवारके दिन पूर्वाभिमुख होकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी सिद्धि प्राप्त करनेके निमित्त एकाक्षरी विद्याको जपे।

हकारो वह्निसंयुक्तो वामनेत्रेन्दु संयुतः।
ततोऽभिधां नमः प्रान्ते प्रोक्तयमेकवर्णिका॥

एकाक्षरी विद्याका यह उद्धरण है। हकारमें अग्निबीज अर्थात् रेफ युक्त कर उसमें ईकार और अर्द्धचन्द्र मिलानेसे पश्चात् भुवनेश्वरीका नामयोजित करके यह विद्या बनती है, यथा—ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः। वर्ण १ आ० प्र०।

आग्नेयाभिमुखो भूत्वा चन्द्रे भद्रादिने शुभे।
द्व्यक्षरीं साधको जप्त्वा सर्वान्कामानवाप्नुयात्॥

साधक भद्रा तिथियुत सोमवारके दिन आग्नेय दिशाकी ओर मुख करके द्व्यक्षरी विद्याको जपकर सम्पूर्ण कामनाओंको प्राप्त करता है।

लक्ष्मीं मायां महादेवि ततो नाम वदेत्ततः।
नतिरियं महेशानि द्व्यक्षरी परिकीर्तिता॥

प्रथम लक्ष्मीबीज, मायाबीज, फिर भुवनेश्वरीका नाम अन्तमें नमः उच्चारण करे। हे महेशानि! यही द्व्यक्षरी विद्याका उद्धरण है। फलितार्थ श्रीं ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः। चं० द्वि० वर्ण २।

दक्षिणाभिमुखो भूत्वा भौमे जयाह्नि साधकः।
त्र्यक्षरीं प्रजपेद् भक्त्या सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥

साधक मङ्गलवारके दिन दक्षिणाभिमुख होकर त्र्यक्षरी विद्याको जपकर समग्र कामनाओंको प्राप्त होता है।

तारं रमा कामराज इत्थं नाम समुद्धरेत्।
प्रान्ते नति समाख्याता त्र्यक्षरीयं महेश्वरि ॥

त्र्यक्षरी विद्याका उद्धरण—प्रणव, रमाबीज, कामराज, भुवनेश्वरीका नाम और अन्तमें नमः यथा—ॐ श्रीं क्लीं भुवनेश्वर्यै नमः। वर्ण ३ भौ० तृ०।

नैऋत्याभिमुखो भूत्वा चतुर्थ्यां सौम्यवासरे।
चतुर्वर्णात्मिकां विद्यां जपेन्मन्त्री स्वशक्तितः ॥

साधक चतुर्थी तिथियुत बुधवारके दिन नैऋत्याभिमुख होकर चतुरक्षरी विद्याको यथाशक्ति जपकर सर्वसिद्धिको प्राप्त होता है।

प्रणवश्च तथा माया कमला मन्मथस्तथा।
अन्ते विश्वं नाम मध्ये विदध्याच्च सुरेश्वरि ॥

चतुरक्षरी विद्या यथा ओंकार, मायाबीज, श्रीबीज, कामबीज, भुवनेश्वरीका नाम और अन्तमें नमः। स्पष्ट—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं भुवनेश्वर्यै नमः। वर्ण ४ बु० च०।

पश्चिमाभिमुखो भूत्वा पञ्चम्यां गुरुवासरे।
पञ्चाक्षरीं जपेन् मन्त्री कलावीप्सितदायिनीम् ॥

साधक पञ्चमो त्रिथियुत गुरुवारके दिन पश्चिमाभिमुख बैठकर कलियुगमें अभोष्ट फलदायिनी पञ्चाक्षरी विद्याका जप करे।

तारं लक्ष्मीं वाग्भवं कामो मायाभिधातथा।
ङेन्तानतिरियं प्रोक्ता देवि पञ्चाक्षरी मया॥

प्रणव, लक्ष्मीबीज, वाग्भवबीज, कामबीज और मायाबीज, चतुर्थ्यन्त नमः युक्त नाम, सम्पूर्ण मन्त्र इस प्रकार है यथा—ॐ श्रीं ऐं क्लीं ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः। वर्ण ५ वृ० पं०।

वायव्याभिमुखो भूत्वा शुक्रे षष्ठ्यां सुरेश्वरि।
षष्ठाक्षरीं महाविद्यां प्रजपेत्साधकोत्तमः॥

साधक षष्ठो तिथियुक्त शुक्रवारके दिन वायव्य दिशाकी ओर मुख करके षष्ठाक्षरी विद्याको सिद्ध करे।

तारं लक्ष्मीः पराकामो वाग्भवं शक्तिरेवच।
अभिधानतिः संयुक्ता प्रोक्ता षष्ठाक्षरो परा॥

प्रणव, रमाबीज, मायाबीज, कामबीज, वाग्भवबीज, शक्तिबीज और चतुर्थ्यन्त भुवनेश्वरीका नाम, यथा ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौः ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः। वर्ण ६ शु० प०।

उत्तराभिमुखो भूत्वा सप्तम्यां शनिवासरे।
सप्ताक्षरीमिमां विद्यां प्रजपेत्साधकोत्तमः॥

साधक सप्तमो तिथियुत शनिवारके दिन उत्तराभिमुख होकर इस सप्ताक्षरी विद्याको सिद्ध करे।

प्रणवं कमला माया कामो वाग्भव एव च ।
शक्तिर्माया भिधाप्रान्ते नतिः सप्ताक्षरी मता ॥

प्रणव, रमाबीज, मायाबीज, कामबीज, वाग्भवबीज, शक्ति-बीज, पुनः मायाबीज तथा चतुर्थ्यन्त नाम. यथा—ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौं ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः। वर्ण ७ श० स० ।

ईशानाभिमुखो भूत्वा अष्टम्यां रविवासरे ।
अष्टाक्षरीं महाविद्यां प्रजपेत् साधकोत्तमः ॥

साधक रविवारको अष्टमीके दिन ईशानाभिमुख होकर अष्टा-क्षरी महाविद्याका जप करे ।

तारं लक्ष्मीः पराकामो वाग्भव शक्तिरेव च ।
कामोमायाभिधा प्रान्ते नतिरष्टाक्षरी मता ॥

प्रणव, रमाबीज, भुवनेश्वरीबीज, कामबीज, वाग्भवबीज, शक्तिबीज, पुनः कामबीज, मायाबीज, भुवनेश्वरीका नाम अन्तमें नमः। यथा—ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौं क्लीं ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः !

प्राङ्मुखस्तु पुनर्भूत्वा नवम्यां चन्द्रवासरे ।
देवीं नवाक्षरीं जप्त्वा लभते सिद्धिमुत्तमाम् ॥

पुनः साधक सोमवारकी नवमीके दिन पूर्वाभिमुख होके नवाक्षरी विद्याको जपकर परमसिद्धि प्राप्त करता है ।

तारं लक्ष्मीः पराकामो वाक्कामो शक्तिरेव च ।
वाच्छक्ति रभिधाविश्वं सम्प्रोक्तेयं नवाक्षरी ॥

नवाक्षरो विद्या यथा—प्रणव, रमाबीज, भुवनेश्वरीबीज, कामबीज, वाग्भवबीज, पुनः कामबीज, शक्तिबीज, भुवनेश्वरीका नाम अन्तमें नमः। फलितार्थ—ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं क्लीं सौं ऐं सौं क्लीं भुवनेश्वर्यै नमः। वर्ग ६ च० न०।

दशम्यामग्निकोणस्थो मङ्गले साधको जपेत्।
दशाक्षरीं महाविद्यां साक्षाद्ब्रह्मस्वरूपिणीम्॥

साधक दशमी तिथियुत मङ्गलके दिन आग्नेय कोणकी तरफ मुखकर साक्षाद्ब्रह्मस्वरूपिणीम् दशाक्षरी विद्याको सिद्ध करे।

प्रणवं सकला लक्ष्मीः कामोवाच्छक्ति कालिके।
कूर्चमायाद्वयं नाम विश्वप्रोक्ता दशाक्षरी॥

दशाक्षरी विद्या यथा—प्रणव, भुवनेश्वरीबीज, लक्ष्मीबीज, कामबीज, वाग्भवबीज, शक्तिबीज, कालिकाबीज, कूर्चबीज, पुनः मायाबीजद्वय, पुनः विश्वबीज, भुवनेश्वरीका नाम अन्तमें नमः। फलितार्थ यथा—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं सौंः क्रीं हूं ह्रीं ह्रीं ग्लौं भुवनेश्वर्यै नमः।

एकादश्यां बुधदिने दक्षिणाभिमुखो नरः।
एकादशाक्षरीं विद्यां प्रजपेद् भक्तिपूर्वकम्॥

मनुष्य एकादशी तिथियुत बुधवारके दिन दक्षिणाभिमुख होकर भक्तिपूर्वक एकादशाक्षरी विद्याको जपे।

तारं माया रमा कामो वाक् शक्ति काम वाग्भवाः।
शक्तिर्माया कला नाम विश्वमेकादशाक्षरी॥

एकादशाक्षरी विद्याका उद्धरण यथा—ओंकार, मायाबीज, रमाबीज, कामबीज, वाग्भवबीज, शक्तिबीज, कामबीज, पुनः वाग्भवबीज, शक्तिबीज, लक्ष्मीबीज, भुवनेश्वरीबीज, विश्वबीज नाम अन्तमें नमः। फलितार्थ—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं सौंः क्लीं ऐं सौंः श्रीं ह्रीं क्लीं भुवनेश्वर्यै नमः। बु० ए० वर्ण ११।

नैर्ऋत्याभिमुखो भूत्वा द्वादश्यां गुरुवासरे।
साधकः प्रजपेद् विद्यां द्वादशाक्षररूपिणीम्॥

साधक द्वादशी तिथियुत गुरुवारके दिन नैर्ऋत्याभिमुख होकर द्वादशाक्षरी विद्याको सिद्ध करे।

तारद्वयं परायुग्मं लक्ष्मी युगल मेवच।
२ नाम ङेतं विश्वमन्ते प्रोक्तेयं द्वादशाक्षरी॥
१ कामे वाग्भव शक्ति सर्वयुगल मेवच।

दो प्रणव, भुवनेश्वरीबीजद्वय, रमाबीजद्वय, कामबीजयुगल, वाग्भवबीज, शक्तिबीजद्वय। फलितार्थ—ॐ ॐ ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं क्लीं क्लीं ऐं ऐं सौंः सौंः क्लीं भुवनेश्वर्यै नमः।

सर्वकामप्रदादेवि सर्वदुःख निवारिणी॥

हे देवि यह द्वादशाक्षरी विद्या सम्पूर्ण कामनाओंको देनेवाली तथा समग्र दुःख निवारिणी है।

पश्चिमाभिमुखो भूत्वा त्रयोदश्यां कवेर्दिने।
साधको देवतां ध्यात्वा जपेत् त्रयोदशाक्षरीम्॥

साधक शुक्रवारकी त्रयोदशीके दिन पश्चिमाभिमुख होकर देवीका ध्यान करके त्रयोदशाक्षरी विद्याको जपे।

प्रणवं शिववह्नी च द्वितीयस्वर संयुते।
बिन्दुयुक्ते कालिका च माया श्रीवाक् शरस्तथा॥

प्रणव, शिवबीज, वह्निबीज, रमाबीज, वाग्भवबीज, शक्तिबीज, कामबीज, रमाबीज, भुवनेश्वरीबीज, पुनः वाग्भवबीज, शक्तिबीज, कामबीज, शर, यथा—ॐ ह्रां क्रीं ह्रीं श्रीं ऐं सौं क्लीं श्रीं ह्रीं ऐं सौं क्लीं भुवनेश्वर्यै नमः। वर्ण १३ शु० त्र०।

उत्तराभिमुखो भूत्वा साधकः शनिवासरे।
चतुर्दशात्मिकां विद्यां जपेत्साधकसिद्धिदाम्॥

साधक शनिवार चतुर्दशी तिथिके दिन उत्तराभिमुख होकर साधकको सिद्धि प्रदान करनेवाली चतुर्दशाक्षरी विद्याको जपे।

तारद्वयं कामयुग्मं शक्तिद्वन्द्वं रमायुगम्;
वाग्युगं शक्तियुग्मं च मायायुग्मं तथैव च।
नाम ङेन्तश्च विश्वश्च प्रोक्ता चतुर्दशाक्षरी॥

दो प्रणव, कामबीजयुगल, शक्तिबीजद्वय, दो रमाबीज, वाग्भवबीजद्वय, पुनः दो शक्तिबीज, मायाबीजद्वय, फलितार्थ—ॐ ॐ क्लीं क्लीं सौंः सौंः श्रीं श्रीं ऐं ऐं सौंः सौंः ह्रीं ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः।

अमायां पूर्णिमायाञ्च जपेत्पञ्चदशाक्षरीम्।
ईशानाभिमुखो भूत्वा रविवारे च साधकः॥

साधक अमावास्या और पूर्णिमायुक्त रविवारके दिन ईशानाभिमुख होकर पञ्चदशाक्षरी विद्याको जपे।

तारं रमा प्रणवो लक्ष्मीर्माया वाक् कला तथा।
वाणीकामौ शक्तिकामौ शक्तिः कालीयुगं परा॥
नामङेन्तनमो देवि प्रोक्ता पञ्चदशाक्षरी।

यथा—प्रणव, रमाबीज, पुनः प्रणव, रमाबीज, मायाबीज, वाग्भवबीज, कला, वाग्भवबीज, कामबीज, शक्तिबीज, पुनः कामबीज, शक्तिबीज, कालीबीजद्वय, पराविद्या और भुवनेश्वरीका नाम अन्तमें नमः। उद्धरण यथा—ॐ श्रीं ॐ श्रीं ह्रीं ऐं ह्रीं ऐं क्लीं सौः ह्रीं ऐं क्लीं सौः क्लीं सौः क्रीं क्रीं ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः। वर्ण १५ आ० पू० अमा।

विद्यां यो जपते भूमाविमाञ्च षोड़शात्मिकाम्।
तस्य देवि कलौ देवी स्वपदं भुवि दास्यति॥

इस षोड़शाक्षरी विद्याको इस कलिकालमें जो साधक जपते हैं, उन्हें भगवती भुवनेश्वरी इस भूलोकमें ही उन्हें अपना धाम देती है।

प्रणवं सकला लक्ष्मीमारो वाग्भवशक्तिके।
प्रासादः प्रणवश्चैव प्रासादशक्तिवाग्भवाः॥
कामोमासकलातारं माया नाम नतिस्तथा।
महादेवि गुह्यतरा प्रोक्तेयं षोडशाक्षरी॥

उद्धरण यथा—प्रणव, कला, लक्ष्मी, काम, वाग्भव, शक्ति, आकाश, प्रणव, आकाश, शक्ति, वाग्भव, काम, लक्ष्मी, कला,

नाम, अन्तमें नमः यथा—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं सौः ग्लौं ॐ ग्लौं सौः ऐं क्लीं श्रीं ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः।

सर्वदिनेषु इयं षोड़शाक्षरी पठनीया॥

इस षोड़शाक्षरी विद्याको प्रत्येक दिन अभ्यास करे।

राज्यं देयं शिरो देयं न देया भुवनेश्वरी।
भुक्ति मुक्ति प्रदातस्य षोड़शी भुवनेश्वरी॥

साधकको चाहिये कि राज्य दे और अपना शिर भी दे दे। परन्तु भोग और मोक्षको देनेवाली षोड़शाक्षरी भुवनेश्वरी विद्याको न दे।

इत्येवं पटलो देवि गुह्याद् गुह्यतरोमतः।
अभक्ताय न दातव्यो गोपनीयः स्वयोनिवत्॥

हे देवि यह पटल अत्यन्त गुप्त है, जो भक्त न हो उसे न देना और अपनी योनिकी तरह इसकी रक्षा करना।

इस प्रकार भुवनेश्वरी रहस्यमें एकसे लेकर सोलह अक्षर पर्यन्त कथन नाम तृतीय पटल समाप्त हुआ।

चतुर्थः पटलः प्रारम्भः

—:o:—

श्री देव्युवाच ॥ पार्वतीजी प्रश्न करती हैं :—

देवदेवमहेशान दयात्रैगुण्यमानस ।
श्रीदेव्या भुवनेश्वर्या स्तत्वविद्यां ब्रवीषिमे ॥

हे देवाधिदेव ! हे त्रिगुणात्मक मनके धारणकर्त्ता, हे महेश्वर ! भुमनेश्वरी देवीकी तत्वविद्या मुझे बतावें।

श्री भैरवउवाच ॥ भैरवजी बोले :—

तत्वविद्यां ब्रवीम्यद्य तव भक्त्या वरानने ।
कलावीप्सित दात्रीयं न कस्य कथिता मया ॥

हे वरानने ! मैं आज तुमको भुवनेश्वरीकी तत्व विद्याका उपदेश करता हूं। कलियुगमें मनोभिलषित कामनाको प्रदान करनेवाली इस तत्वविद्याको किसीसे भी नहीं कहा। परन्तु तुम्हारी भक्तिसे प्रेरित होकर तुम्हें बता रहा हूं।

एकाक्षरीति विख्याता भुवने भुवनेश्वरी ।
अत ऊर्ध्वं परं बीजं तत्स्वरूपं न विद्यते ॥

इस एकाक्षरी भुवनेश्वरी विद्याके आगे कोई श्रेष्ठ बीजमंत्र इस लोकमें नहीं है।

परन्तु तव भक्त्याद्य तत्वविद्यां ब्रवीम्यहम् ।

परन्तु तुम्हारी भक्तिसे आज मात्र तुम्हें ही मैं इस तत्वविद्या को कहता हूं।

श्रुत्वा परस्मै नो वाच्या तत्वविद्या सुरेश्वरि !
चेद्वदिष्यसि देवेशि नतत्फलमवाप्स्यसि ॥

हे सुरेश्वरि ! इस भुवनेश्वरी विद्याको जानकर किसी और को न बताना, यदि तुमने यह मन्त्र दूसरोंको बता दिया तो इसका फल न होगा।

चन्द्रशक्तिः परावीजं तथैव तत्वरूपिणो ।
मायावीजं समुद्धृत्य सकलागमनिश्चिता ॥
ततश्च साधको दद्यात्तथैव भुवनेश्वरि ।
मायावीजं समुद्धृत्य तत्वविद्येयमाहृता ॥

इस मन्त्रका उद्धरण इस प्रकार है—वाग्भवबीज, शक्तिबीज, मायाबीज, तत्वरूपिणी, पुनः मायाबीज, तत्वविद्या यथा—ॐ ऐं सौः ह्रीं तत्वरूपिणी ह्रीं भुवनेश्वरी ह्रीं।

अस्य श्री भुवनेश्वर्याः स्तत्वविद्यामनोस्मृतः ।
भैरवो ऋषिराख्यात श्छन्दोनुष्टुप्प्रकीर्तितः ॥
श्रीतत्व रूपिणी देवो भुवनेशी प्रकीर्तिता ।
देवता चैव ह्रीं बीजं हूं शक्तिः समुदीरिता ॥
हः कीलकं महादेवि प्रोक्तं च वीरसाधने ।
विनियोगः स्मृतो देवि तत्वविद्या जपस्य वै ॥

पुनः दाहिने हाथमें जल लेकर पात्रमें छोड़ देना चाहिये, इसे ही विनियोग कहते हैं। विनियोगका मन्त्र यथा—ॐ अस्य

श्री भुवनेश्वरी तत्त्वविद्या मन्त्रस्य भैरवमृषिः अनुष्टुपछन्दः श्री तत्त्वरूपिणी भुवनेश्वरी देवता ह्रौं बीजं हूं शक्ति ह्रः कीलकम् वीरसाधने विनियोगः।

इस विनियोगके पूर्व न्यास करना चाहिये। न्यास यथा—ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः, ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः, ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः, ह्रः करतलकर-पृष्ठाभ्यां नमः।

ह्रामित्यादि चरेन्न्यासं हृदयादि षडङ्गकम्।
अन्यां देवि प्रवक्ष्यामि तत्वविद्यां महेश्वरि॥

भैरवजी भगवतीसे कहते हैं कि हे महेश्वरि! देवी भुवनेश्वरीकी एक और तत्त्वविद्या तुम्हें बताता हूं।

दण्डिकेश्वर शरत्परा स्ततो देविनाम भुवनेश्वरीक्षरा।
तत्वरूपिणि पराक्षरं शिवे तत्त्वमूलकमनुस्थिति संशयः।

यथा—आकाशबीज, शक्तिबोज, मायाबीज, भुवनेश्वरीके नामद्वय, सम्पूर्ण मन्त्र—ह्रौं सौः ह्रीं भुवनेश्वरी ह्रीं तत्वरूपिणी ह्रीं।

अस्याः ध्यानं प्रवक्ष्यामि सर्वैः ज्ञातं सुरेश्वरैः॥

अब मैं तुम्हें भुवनेश्वरीका ध्यान कहता हूँ, जिसे समग्र देवेश्वर जानते हैं।

ध्यानम्—करे रवीन्द्वग्नि विलोचनान्तां,
सत्पुस्तकं जाप्य वटीं दधानाम्।
सिंहासनांमध्यमपत्र संस्थां,
श्रीतत्त्वविद्यां परमां भजामि॥

सूर्य, चन्द्र और अग्नि ये तीन जिनके नेत्र हैं तथा एक हाथमें पुस्तक दूसरे हाथमें मालाको लिये हुए सिंहासनके मध्यमें बैठी हुई परम तत्वविद्याका मैं स्मरण करता हूँ।

तत्वविद्येय माख्याता मया पञ्चदशाक्षरी।
राज्यं देयं शिरो देयं न देया भुवनेश्वरी॥

यह पन्द्रह अक्षरोंकी भुवनेश्वरी विद्या है, जो तुमको मैंने कह दिया। साधक राज्य दे दे, और शिर भी दे दे। परन्तु भुवनेश्वरी देवीकी इस पञ्चदशाक्षरी विद्याको न दे।

अस्याः श्रीतत्वविद्याया न विघ्नो न च दूषकः।
अन्या दोषा न विज्ञेया उत्कीलनादि कर्मणाम्॥
विना देवि महेशानि पुरश्चरण कर्मणा।
पञ्चदश च लक्षाणि सहस्राणि तथैव च।
अस्याः श्रीतत्वविद्यायाः पुरश्चरण मुच्यते॥
नातः परतराविद्या ऽप्यन्या कास्ति महीतले।
विख्याता तत्व विद्येयं प्रभावसहिता कलौ॥

इस तत्वके जप करनेमें न किसी प्रकारका विघ्न है और न सिद्ध साध्यादि दोषही है तथा उत्कीलन शाप आदि भी नहीं है। विना शापोद्धार और उत्कीलनके इस पञ्चदशाक्षरी विद्याका १५ लाख और १५ हजार जप करनेसे इसका पुरश्चरण होता है। इस पञ्चदशाक्षरी विद्यासे कोई श्रेष्ठ विद्या पृथ्वीमें दूसरी नहीं है। यह तत्वविद्या कलियुगमें प्रभावको देनेवाली है।

देव्युवाच ।। पार्वतीजी बोलीं—

क्रीतास्मि भवता शम्भो विद्यायाः कथनेन च ।
धन्यास्मिकृतकृत्यास्मि प्रसादात्तवशङ्कर ।।

हे शम्भो ! इस विद्याके कहनेसे मैं आपकी क्रीता दासी हो गयी हूं और हे शङ्कर ! आपके प्रसादसे मैं धन्य और कृतकृत्य हो गयी हूं ।

भैरवउवाच ।। भैरवजी बोले—

इत्येषः पटलो देवि तत्वविद्या प्रकाशकः ।
न देयः कस्यचिद्देवि गोपनीयः प्रयत्नतः ।।

हे देवि यह पटल तत्वविद्याका प्रकाशक है, इसे किसीको न देना और यत्नसे इसकी रखवाली करना ।

इस प्रकार भुवनेश्वरी रहस्यमें तत्वविद्या प्रकाशक नाम चतुर्थ पटल समाप्त हुआ ।

पञ्चमः पटलः प्रारम्भः

—:o:—

देव्युवाच ॥ पार्वतीजी भैरवजीसे प्रश्न करती हैं—

देवदेव महादेव यद्यहं प्रेयसी तव ।
पटलं भुवनेश्वर्याः पूजाया मे प्रकाशय ॥

हे देवाधिदेव महादेव! यदि मैं आपकी प्रेयसी हूं, तो भुवनेश्वरीके पूजनका पटल मुझे बतावें।

भैरवउवाच ॥ भैरवजी उत्तर देते हैं—

अथातः संप्रवक्ष्यामि देवि गुह्य तमोत्तमः ।
येन विज्ञानमात्रेण साधको भैरवो भवेत् ॥

हे देवि इसके अनन्तर अतिउत्तम और अप्रकाशित रहस्य मैं तुम्हें बताता हूँ, जिसके जाननेमात्रसे ही साधक भैरवके समान हो जाता है।

एकाक्षरी महाविद्या श्रीविद्या भुवनेश्वरी ।
चतुर्दशात्मिका देवि तथा च षोड़शात्मिका ॥

एकाक्षरी महाविद्या, श्रीविद्या, भुवनेश्वरीविद्या, चतुर्दशात्मिकाविद्या और षोड़शात्मिकाविद्या।

तत्वविद्यात्मिका देवि महारत्नेश्वरीति च ।
विद्येयं भुवनेश्वर्याः प्रभाव सहिता कलौ ॥

तत्वविद्या, महारत्नेश्वरीविद्या, भगवती भुवनेश्वरीकी उपरोक्त विद्याएँ कलियुगमें प्रभावशालिनी हैं।

स्वर्गभोग प्रदाचैव राज्य भोग प्रदा तथा।
सकृदुच्चारिताविद्या ब्रह्महत्यां व्यपोहति ॥

स्वर्ग और राज्यको देनेवाली इस विद्याको एक बार उच्चारण करनेसे ब्रह्महत्याको दूर करती है।

सर्वसौख्यप्रदादेवि लोके सौभाग्यदायिनी।
अस्याः स्मरण मात्रेण सिद्धयोऽष्टौ करेस्थिता ॥

दुर्भगा सुभगानूनं दुःखिता सुखिता भवेत्।
वन्ध्यापि लभते पुत्रं स्ववंश परिवर्द्धनम् ॥

निर्धनो धनमाप्नोति मूकोवाचमवाप्नुयात्।
मूर्खोपियाति चैतन्यं सुविद्यात्वमवाप्नुयात् ॥

यां यां प्रार्थयते सिद्धिं हठानां तां समाप्नुयात् ॥

हे देवि यह विद्या सम्पूर्ण सुखोंको देनेवाली है तथा संसारमें सौभाग्य-प्रदात्री है, इस विद्याके स्मरणमात्रसे ही अष्ट-सिद्धियाँ कर गत हो जाती हैं। अभागा मानव भाग्यवान हो जाता है और दुःखमें पड़ा हुआ सुखी हो जाता है। वन्ध्या वंशको उन्नत करनेवाले सन्तान प्राप्त करती हैं। गरीब भी धनी होता है, मूक भी वाचाल होता है। मूर्ख अच्छी विद्याको प्राप्त करता है। जिन-जिन सिद्धियोंको साधक चाहता है, उन्हें प्राप्त करता है।

देवि सिद्धिर्भवेत्पुंसां जरामरणवर्जिता।
विधानञ्च प्रवक्ष्यामि शृणु देवि यथाक्रमम् ॥

हे देवि ! इस विद्याका साधक जरा और मरण रहित होनेकी सिद्धि प्राप्त करता है। अब मैं इसका विधान यथाक्रम कहता हूँ, उसे तुम सुनो।

ब्राह्मे मुहूर्ते प्युत्थाय साधको भक्ति संयुतः।
प्रक्षाल्य पाणिपादौ च स्वासनोपरि संविशेत् ॥

साधक ब्राह्ममूहुर्तमें शय्या त्यागकर हाथ पैर धो कर भक्ति-पूर्वक अपने आसन पर बैठ जाय।

स्वशिरस्थं गुरू शान्तं ध्यायेत्तन्नाम पूर्वकम्।
सप्रियं तन्मनु जप्त्वा स्तुत्वा स्तोत्रेण वै तथा ॥
तदाज्ञां शिरसा लब्ध्वा ध्यायेत्कुण्डलिनीं ततः।
तामारोहावरोहेण क्रमेण परि भाव्य च ॥
जप्त्वा स्वमन्त्रो च ततो जपांश्चैवबहिस्ततः।
गच्छेन्मूत्रादिकं कृत्वा दन्तधावनमाचरेत् ॥
नदीतीरं ततो गत्वा स्नान संध्यादिकं चरेत्।
गृहीत्वा जल कुम्भं वै गृह यागं समर्चयेत् ॥

पुनः अपने शिरस्थ श्वेतवर्ण गुरूका ध्यान उनका नामोच्चारण पूर्वक करे। फिर गुरूका स्तोत्र और मन्त्रका जप करे। श्री गुरुदेवकी आज्ञाको शिरोधार्य कर, कुण्डलिनीका चिन्तन करे। आरोह और अवरोह क्रमसे भावना करे, अर्थात् कुण्डलिनीका उत्थान कर सहस्रदलमें ले जाना और उसी मार्गसे षट्चक्रोंको भेदन करते हुए कुण्डलिनीको मूलाधारमें लाना, तब अपने इष्ट-

मन्त्रको जप कर, शौचादि कर, दन्तधावन करे, पुनः स्नानागार अथवा नदीतीरमें जाकर स्नान सन्ध्या आदि समाप्त कर हाथमें जलपूर्ण कलशको लेकर अपने घरमें आकर, पहले अपनी गृहदेवीका पूजन करे।

द्वारपाल प्रविश्यान्तः स्वासनं साधयेत् सुधीः।
स्वीकृतं संविदं कृत्वा भूतोपसरणं ततः॥

द्वारपाल का पूजन कर आसन शुद्धि करके भूतोत्सारण करे। पुनः शान्तिके साथ संविदको स्वीकार करे।

प्राणायाम त्रिकं कुर्यात् साधको नन्दनं युतः।
भूत शुद्धि ततः कुर्यात् प्राणान् प्राणविधिं ततः॥

साधक आनन्दमय होकर पूरक, कुम्भक और रेचक इन तीनों प्राणायामों को करे।

ततः ऋष्यादिकं कृत्वा मातृकान्यास माचरेत्।
सारस्वतेन मार्गेण दशधा सर्वसिद्धये॥
मन्त्रन्यासं ततः कुर्याद्देवता भावसिद्धये।

तदनन्तर मन्त्रन्यास करे जिससे अपनेमें देवताकी भावना आ जावे।

हृल्लेखां मूर्ध्निवदने गगनां हृदयाम्बुजे।
रक्तां करालिकां गुह्ये महोच्छुष्मां पदद्वये॥
ऊर्ध्वं दक्षिणोचोदीच्यां पश्चिमेषु मुखेषुच।
सद्यादि ह्रस्वबीजाढ्या न्यस्तव्या भूतसप्रभा॥

अङ्गानि विन्यसेत्पश्चात् द्धातियुक्तानिदृक्रमात् ।
ब्रह्माणं विन्यसेद्भाले गायत्र्या सह संयुतम् ॥
सावित्र्यासहितं विष्णुं कपोले दक्षिणे न्यसेत् ।
वागीश्वर्या समायुक्तं वामाङ्गश्च महेश्वरम् ॥
श्रिया धनपतिन्यासे वामनासाग्रके पुनः ।
रत्यास्मरं मुखे न्यस्य पुष्न्यां गणपतिं न्यसेत् ॥
सव्यकर्णे परिनिधो कर्णगण्डान्तरालयोः ।
न्यस्तव्यं वदने मूलं पुनः श्चेतांस्तनौ न्यसेत् ॥
कण्ठमूले स्तनद्वन्द्वे वामांसे हृदयाम्बुजे ।
सव्यांसे पार्श्वयुगले नाभिदेशे च देशिकः ॥
भालांस पार्श्वं जठरे पार्श्वांस परिकेहृदि ।
ब्रह्माण्याद्यास्तनौ न्यस्या विधिनाप्रोक्तलक्षगा ॥
मूलेन व्यापकं देहे पीठन्यासं ततश्चरेत् ।
पुनश्च व्यापकं देहे न्यस्यदेवीं विचिन्तयेत् ॥

न्यास इस प्रकार करें—हृल्लेखायै नमः मूर्ध्नि, गगनायै नमः हृदयाम्बुजे, रक्तकरालिकायै नमः गुह्ये, महोच्छुष्मायै नमः पदद्वये, ऊपर दक्षिण उत्तर पश्चिम मुखों में न्यास करे।

पुनः गायत्री सहित ब्रह्मणे नमः भाले, सावित्र्यासह विष्णवे नमः कपोले, वागीश्वरी सहित महेश्वराय नमः दक्षिण नासायां श्री सहित धनपतये नमः वाम नासायां, रति सहित काम देवाय नमः मुखे, गणपतये नमः नासिकापुटे, सव्यकर्णोपरि निधये नमः।

पुनः इन्हीं देवताओंको गण्डान्तरालमें और मुखमें मूल-मन्त्रसे फिर गणपति और निधि इन दोनोंसे स्तनद्वन्द्वमें, वामांसमें, हृत्कमलमें, सव्यांसमें, उभयपार्श्वमें, नाभिदेशमें, कपालमें, उदरमें, हृदयमें ब्रह्माणी आदि देवियोंके नामोच्चारण पूर्वक न्यास करे।

पुनः मूल-मन्त्रसे सारे शरीरमें व्यापक करे। अनन्तर पीठन्यास करके अपने शरीरको देवी रूपसे भावना करे।

ततो ध्यायेद्यथा—उद्यद्दिनद्युति मिन्दु किरीटां,
तुङ्गकुचां नयनत्रय युक्ताम्।
स्मेर मुखीं वरदाङ्कुशपाशां,
भीतिकरीं प्रभजे भुवनेशीम्॥

प्रातःकालीन सूर्यकी कान्तिके समान कान्तिमती किरीटमें चन्द्रमा मुखपर विहस्मित अर्थात् किंचित् हास्य युक्त है, एक हाथमें वर, एकमें अङ्कुश, एकमें पाश और एकमें अभय जिनके विराज रहे हैं ऐसी भुवनेश्वरी देवीका ध्यान करे।

सिन्दूरारुणविग्रहां त्रिनयनां माणिक्य मौलिस्फुरत्।
तारानायकशेखरां स्मितमुखी मापीन वक्षोरुहाम्॥
पाणिभ्यामलिपूर्णरत्नचषकं संबिभ्रतीं शाश्वतीं।
सौम्यां रत्नघटस्थमध्यचरणां ध्यायेत्परामम्बिकाम्॥

जिनका शरीर सिन्दूरसे अरुणवर्ण हो रहा है, तीन नयनों-वाली, जिनके मुकुटमें माणिक्य, मुक्ता तथा चन्द्रमा विराजमान

हो रहे हैं, स्मितमुखी, आपीन वक्षोरुहको धारण की हुई, दोनों हाथोंमें रत्ननिर्मित सुरापानपात्रको धारण की हुई और सौम्य-मूर्ति रत्नके घटमध्यमें विराजित हैं चरण जिनके ऐसी पराम्बिका भुवनेश्वरीका ध्यान करता हूं।

अन्यच्च—श्यामाङ्गीं शशिशेखरां निजकरैर्नीलिश्थरक्तोत्पलम्।
रत्नाढ्यं चषकं गुणं भयहरं संबिभ्रतीं शाश्वतीम्॥
मुक्ताहारलसत्पयोधर नतां नेत्रत्रयोल्लासिनीं।
वन्देऽहं सुरपूजितां हरवधूं रक्तारविन्दस्थिताम्॥

श्यामवर्णा, मुकुटमें जिनके चन्द्रमा विराजमान हैं, अपने हाथोंसे रक्तकमल और रत्नजटित सुरापान पात्रको धारण की हुई तथा वक्षस्थल पर्यन्त जिनके मुक्ताहार सुशोभित हैं, तीन नेत्रोंसे समलंकृता, देवताओं द्वारा पूजित की गयी, रक्तकमल पर बैठी हुई, महादेवकी परा पट्टभट्टारिकाका मैं ध्यान करता हूं।

अन्यच्च—उद्यचन्द्र सहस्र रश्मि सदृशीं वह्नीन्दुसूर्येक्षणां,
माद्यादिन्दुविघूर्णितेक्षणयुगां वीणारवत्याकुलाम्।
मालापुस्तकसिन्धुपात्रकमलं दोर्भिर्वहन्तीं मुदा,
ध्यायेऽहं भुवनेश्वरीं शवगतां सर्वादिदेवैः स्तुताम्॥

उद्दीयमान हजारों चन्द्रमाके समान कान्तिमती, अग्नि, चन्द्र और सूर्यरूपी नेत्रत्रयको धारण की हुई, कमलकि समान नेत्रोंवाली, वीणाके शब्दमें संलग्न माला तथा पुस्तकको धारण की हुई, शवके ऊपर बैठी सब देवताओंसे स्तुति की जाती हुई भुवनेश्वरीका मैं ध्यान करता हूं।

यद्वासरोजनयनां चलत्कनककुण्डलां शोशवौं,
धनुर्जपवटोकरामुदित सूर्यकोटिप्रभाम् ।
शशाङ्ककृतशेखरां शवशरीर संस्थां शिवाम्,
स्मरामि भुवनेश्वरीं विमुख वाङ्मुखस्तम्भिनीम् ॥

कमलके पत्र सदृश चञ्चल नेत्रोंवाली, स्वर्ण ताटङ्कको धारण की हुई, धनुष और जपमालाको हाथमें ली हुई, उदयकालीन कोटि सूर्यके समान कान्तिमती, जिनके मुकुटमें चन्द्रमा विराज रहे हैं ऐसी प्रेतासन पर बैठी हुई, शत्रुके वाणी और मुखको स्तम्भन करनेवाली भुवनेश्वरीको मैं स्मरण करता हूं।

अपिच—वीणावादनतत्परां त्रिनयनां त्रैलोक्यरक्षापरां,
माध्वीपानपरायणां शवगतां मन्दस्मितां चिन्मयीम्।
मायाबीज विभूषितां शशिकलां चूड़ां च सत्कुण्डलां,
ध्यायेऽहं भुवनेश्वरीं भगवतीं शैव्येन सम्पूजिताम् ॥

वीणा-वादनमें तत्पर, तीन नेत्रोंवाली, त्रैलोक्य रक्षामें लीन, माध्वीरस पान करनेमें चतुरा, ईषद्धास्यमुखो, चित्स्वरूपा, माया-बीजसे समलंकृता, चन्द्रकलाको धारण की हुई, कानोंमें ताटङ्क धारण की हुई, शिवसे पूजित की गयी, शवासनपर विराजमान भगवती भुवनेश्वरीका मैं ध्यान करता हूँ। इति ध्यात्वा इस प्रकार ध्यान करके।

हृदम्भोजे देवीं श्री भुवनेश्वरीं मानसै रुपचारैश्च पूजयित्वा
यथाविधि कृत्वान्तर्यजनं देवि सामान्यार्घं ततश्चरेत् ॥

हृत्कमलमें देवी भुवनेश्वरीको यथाविधि मानसिक उपचारों से पूजन कर, अन्तर्याग करके सामान्यार्घकी स्थापना करे।

घटपूजादिकं कृत्वा यन्त्रपूजां समाचरेत्।
यन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि शृणुदेवि फलप्रदम्॥
यन्त्रं मन्त्रं तथा पूजां गुप्तां गोप्यतमां कुरु।
त्रिकं षट्कोणमुद्धृत्य नागपत्रञ्च षोड़शम्॥

भैरवजी कहते हैं कि हे देवि घटस्थापन और उसका पूजन करके, यन्त्र पूजाको आरम्भ करे, सम्पूर्ण फलप्रद यन्त्रोद्धारको मैं कहता हूं तुम सुनो। यन्त्र, मन्त्र और पूजा ये अत्यन्त गुप्त हैं। अतः इन्हें प्रकट न करना। त्रिकोण, षट्कोण, अष्टदल, षोड़श-दल, वृत्त, चतुर्द्वार यही यन्त्रका उद्धारक्रम है।

अथवान्य प्रकारेण कथयामि सविस्तरम्।
पद्ममष्टदलं बाह्ये पद्मषोड़शभिर्दलैः॥
विलिखेत् कर्णिका मध्ये षट्कोणमति सुन्दरम्।
ततः सम्पूजयेत्पीठं नवशक्ति समन्वितम्॥

अथवा यन्त्रका विस्तार प्रकारान्तरसे कहता हूं। पहले अष्टदल कमल उसके बाहर षोड़शदल कर्णिकाके मध्यमें षट्कोण, अनन्तर नवशक्तियोंका मन्त्रसे पूजन करे।

पूजन प्रकार यथा :—

जयाख्या विजयापश्चा दजिताख्या पराजिता,
नित्या विलासिनी दोग्ध्रीत्वघोरा मङ्गला नव॥

सर्वं शक्ति पदं प्रोच्य ङेतं च कमलासनम्।
नमः इत्यासनं पूज्य तत् तद्बीजादिकं शिवे ॥
बीजाद्य मासनं दत्वा मूर्तिं तेनैव कल्पयेत्।
तस्यां सम्पूजयेद्देवी मावाह्यावरणैः क्रमात् ॥

ॐ जयायै नमः, ॐ विजयायै नमः, ॐ अजितायै नमः, ॐ अपराजितायै नमः, ॐ नित्यायै नमः, ॐ विलासिन्यै नमः, ॐ दोगुध्र्यै नमः, ॐ घोरायै नमः। ॐ मङ्गलायै नमः (सबमें शक्तिपद लगाकर अर्थात् ह्रींकार युक्त चतुर्थ्यन्त करना)। यथा—ह्रीं कमलासनायै नमः इत्यादि। उन उन देवियोंके बीजोंसे आसन आवाहनादिसे उस यन्त्रमें मूर्तिकी कल्पना करे, उसमें भगवती भुवनेश्वरीदेवीका आवाहन करके—

मध्यमात् प्राक् याम सौम्य पश्चिमेषु यथा क्रमम्।
हृल्लेखाद्यासमभ्यर्च्य पञ्च भूतसमप्रभाः ॥
वरपाशाङ्कुशाभीति धारिण्यो शित भूषणाः।
आग्नेयादिषु स्थानेषु पूजयेदङ्गदेवता ॥
त्रिकं सम्पूज्य षट्कोणे यजेन् मिथुन देवताः।

पुनः मध्यम से लेकर पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर यथाक्रम पञ्चभूतोंके समान कान्तिमती हृल्लेखादियोंका पूजन करना। वर, पाश, अङ्कुश, अभीति आयुधोंको धारण की हुई, शुभ्रभूषणोंवाली, आग्नेयादि चारों स्थानोंमें अङ्गदेवतोंका पूजन करे। षट्कोणमें इन तीन शक्तियोंका पूजन करे तथा शक्तियुगलका पूजन करे।

इन्द्रकोणे लसद्दण्ड कुण्डिकाक्ष गुणाभयाम् ।
गायत्र्यीं पूजयेन्मन्त्री ब्रह्माणमपितादृशम् ॥
रक्षकोणे चक्र शङ्ख गदापङ्कजधारिणीम् ।
सावित्रीं पीतवसनां यजेद्विष्णुश्चतादृशम् ॥
वायुकोणे परस्वक्ष मालाभयवरान्विताम् ।
यजेत् सरस्वतीमच्छां रुद्रं तादृशलक्षणम् ॥
वह्निकोणे यजेद्रत्न कुंभ रत्न करण्डकम् ।
कराभ्यां विभ्रतं पीनं तुन्दिलं धननायकम् ॥
आलिंग्य सव्यहस्तेन वामेनाम्बुजधारिणीम् ।
धनदाङ्कसमारूढ़ां महालक्ष्मीं प्रपूजयेत् ॥
वारुणे मदनं वाण पाशाङ्कुश शरासनाम् ।
धारयन्तं जयारक्तं पूजयेद्रक्त भूषणाम् ॥
सव्येनपतिमाश्लिष्य वामेनाम्बुज धारिणीम् ।
पाणिना रमणाङ्कस्थां रतिं सम्यक् समर्चयेत् ॥
ईशाने पूजयेत् सम्यक् विघ्नराजं प्रियान्वितम् ।
शृणिपाशधरं कान्ता वराङ्गस्पृक्करांगुलिम् ॥
माध्वीपूर्णं कपालाढ्यं विघ्नराजं दिगम्बरम् ।
पुष्करं विगलद्रत्नं स्फुरचम्पक धारिणम् ॥
सिन्दूर सदृशाकार मुद्दाम मद विभ्रमम् ।
धृतरक्तोत्पलामन्यत्पाणिना तद्ध्वजंस्पृशन् ॥
आश्लिष्टकान्तामरुणं पुष्टि मर्चे दिगम्बराम् ।
कर्णिकायां निधी पूज्यौ षट्कोणस्याथ पार्श्वयोः ॥

इन्द्रकोण में ब्रह्माके साथ गायत्री का पूजन करे, नैऋत्यकोण में शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये हुए पीत वस्त्रवाले, सावित्री के सहित विष्णुका पूजन करे, वायव्यकोण में परसु, अक्षमाला, अभय, वर चारों आयुधों को धारण की हुई स्वच्छ सरस्वती के साथ रुद्र का पूजन करे, आग्नेयकोण में रत्न के कुंभ और रत्न की पेटिका दोनों हाथों में धारण की हुई धनके स्वामी कुवेर को दाहिने हाथा से आलिङ्गन को हुई और वायें हाथ में जिनके कमल विराजमान हैं तथा कुवेर के गोदपर बैठी हुई महालक्ष्मी का पूजन करे, पश्चिम दिशा में वाण, पाश, अङ्कुश, शरको धारण की हुई, रक्त आभरणों से अलंकृता दाहिने हाथ से पति को आलिङ्गन कर वायं हाथ में कमल को ली हुई मदन के गोदमें बैठी रति का पूजन करे, ईशानकोण में ऋद्धि और सिद्धि के साथ गणपति का पूजन करे, वाण और पाश को धारण किये हुए तथा वर, अंकुश, माध्वीरस से पूर्ण नर कपालधारी, दिगम्बरमूर्ति, जिनके अनेक रत्न चमक रहे हैं तथा चमकीले चम्पकपुष्को धारण किये हुए, सिन्दूर के समान जिनकी आकृति रक्त है, दूसरे हाथ में रक्तकमल को धारण कर ध्वज को स्पर्श करते हुए, कान्ता को आलिङ्गन किये हुए, ऐसे दिगम्बर को षट्कोण के पार्श्वों में पूजन करना, षट्कोण के दोनों पार्श्वों में निधि का पूजन करना ।

अनङ्गानि केशरेष्वेताः पश्चात्पत्रेषु पूजयेत् ।
अनङ्गकुसुमापश्चादनङ्गकुसुमातुरा ॥

अनङ्ग मदनाद्वन्द अनङ्गमदनातुरा।
भुवनपाला गगनवेगा चैव ततः परम्॥
शशिशेखा गगनरेखा चेत्यष्ट शक्तयः।
पाशांकुशवरा भीति धारिण्योऽरुणविग्रहा॥

ये शक्तियां उनके पत्रोंमें पूजनीया हैं, पीछे इन्हींका पूजन करे, यथा—अनङ्गकुसुमायै नमः, अनङ्गकुसुमातुरायै नमः, अनङ्गमदनायै नमः, अनङ्गमदनातुरायै नमः, भुवनपालायै नमः, गगनवेलायै नमः, शशिशेखरायै नमः, गगनरेखायै नमः। अब पाश, अंकुश, वर, अभयको धारण की हुई, अरुण विग्रहा देवियोंका पोड़शपत्रोंमें पूजन करे।

यथा—ततः पोड़शपत्रेषु कराली विकराल्युमा।
सरस्वती श्री दुर्गापा लक्ष्मीः श्रुतिः धृतिस्मृतिः॥
श्रद्धामेधामतिः कान्तिरार्या पोड़श शक्तयः।

ॐ ईशायै नमः, ॐ उमायै नमः, ॐ कराल्यै नमः, ॐ विकराल्यै नमः, ॐ सरस्वत्यै नमः, ॐ श्रियै नमः, ॐ दुर्गायै नमः, ॐ लक्ष्म्यै नमः, ॐ श्रुत्यै नमः, ॐ स्मृत्यै नमः, ॐ धृत्यै नमः, ॐ श्रद्धायै नमः, ॐ मेधायै नमः, ॐ मत्यै नमः, ॐ कान्त्यै नमः, ॐ आर्यायै नमः इस प्रकार पोड़श शक्तियोंका पूजन करे।

खड्गखेटक धारिण्यः श्यामापूज्याश्चमातरः।
पद्माद्बहिः समभ्यर्च्याः शक्तयः परिचारिकाः॥

भगवतीको परिचारिका शक्ति खड्ग और खेटकको धारण की हुई, कृष्णाङ्गी इन षोड़श माताओंका षोड़शदल पद्मके बाहर पूजन करे।

प्रथमानङ्गरूपाख्या दनङ्गमदनातुरा ।
अनङ्ग भुवनावेगानङ्गा भुवन पालिका ॥
स्यात्सर्वं मदनाङ्गवेदनानङ्गमेखला
चषकंतालवृन्तंच ताम्बूलं छत्रमुज्वलम् ॥
चामरे किंशुकं पुष्पं बिभ्राणा करपङ्कजैः ।
सर्वाभरण संदीप्तां गुरुपंक्तित्रयं यजेत् ॥
सर्वाभरण संदीप्तान् लोकपालान् वहिर्यजेत् ।
वज्रादीनपि तद् बाह्ये देवी प्रीत्यर्थ मर्चयेत् ॥
इत्थं सम्पूज्य देवेशीं पुनर्विन्दौ प्रपूजयेत् ।
आसनाद्यै रूपचारैर्नानानैवेद्य संयुतैः ॥
ततो होमविधिं कुर्याद् बटुकादींश्च तर्पयेत् ।

अनङ्गरूपायै नमः, अनङ्गमदनातुरायै नमः, अनङ्गभुवनवेगायै नमः, अनङ्गभुवनपालिकायै नमः, अनङ्गमदनाङ्गायै नमः, अनङ्गवेदनायै नमः, अनङ्गमेखलायै नमः।

तीन वृत्तोंके पास चषक, ताम्बूल, छत्र, चामर, वस्त्र, पुष्प, हाथोंमें कमलको धारण किये हुए, सर्वाभरण संदीप्त गुरुपंक्तित्रयका पूजन करे, सम्पूर्ण आभरणोंसे उज्वल लोकपालोंका बाहर पूजन करे, पुनः उसके बाहर देवी प्रीत्यर्थ वज्रादि आयुधोंका पूजन करे।

इस प्रकार देवदेवेशीका पूजन कर, फिर बिन्दुमें आसनादि नानोपचार तथा नाना प्रकारके नैवेद्योंसे महापूजा करके, होमविधि समाप्त कर सुवासिनी, बटुक, कुमारी आदिको पूजन एवं वायन दानसे संतुष्ट करे।

ऋष्यादिकं पुनः कृत्वा जपं कुर्याद्यथाविधि।

पुनः ऋष्यादि न्यास और विनियोग करके यथाविधि जप करे।

पठित्वा कवचं नाम सहस्रं स्तोत्रमेव च।

कवच, सहस्रनाम, स्तोत्र जपान्त में करे।

गुह्येति मन्त्रराजेन फलं समर्पयेत्ततः।
गुह्याति गुह्य गोप्त्रीत्वं गृहाणास्मत्कृतं जपं।
सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि।

इस मन्त्रसे देवीको फल समर्पण करे।

पात्राण्युत्साद्यविधिव दितः पूर्वं ततः पठेत्।
गुरुस्तोत्रं पुनर्जप्त्वा पात्र वन्दन माचरेत्॥
वहिर्गत्वा समभ्यर्च्य संतर्प्योच्छिष्ट भैरवम्।
पूजागृहे समागत्य शान्ति स्तोत्रं पठेत्ततः॥
श्रीवीर वन्दन स्तोत्रं पठित्वा हृदयाम्बुजे।
देवीमुद्वास्य विहरेद्यथावत्साधकोत्तमः॥

अनन्तर जो पात्र पूजनके लिये रखे हुए हैं उन्हींका विधिवत् उत्सादन कर, गणेशग्रह नक्षत्र इत्यादि गुरुस्तोत्र जपके पात्र वन्दना

करे, पुनः बाहर जाके उच्छिष्ट भैरवका पूजन कर और उन्हें बलि करके हाथ पैर धो कर पूजा घरमें आकर शान्ति स्तोत्र और वीर वन्दना स्तोत्रका पाठ करे।

इत्येपपटलोदेवि पूजायाः सर्वसाधनः।
गुह्याद्गुह्यतरोदेवि गोपनीय स्वयोनिवत्॥

हे भवतारिणि देवि! यह पूजाका पटल जो समग्र साधनोंका दाता है, मैंने तुम्हें बताया, यह अत्यन्त गुप्त है, अपनी योनिकी तरह इसे प्रकाशित न करना।



षष्ठः पटलः प्रारम्भः

—:०:—

श्री भैरवउवाच॥ भैरवजी बोले—

श्रृणुदेवि प्रवक्ष्यामि पूजापद्धतिमुत्तमाम्।
तत्वं श्रीभुवनेश्वर्याः गद्यपद्यस्वरूपिणीम्॥

हे देवि! जिसके स्वरूप गद्यपद्यात्मक हैं ऐसी सर्वोत्तम पूजा-पद्धतिको कहता हूं तुम सुनो।

तत्रश्रीमान् साधकेन्द्रः ब्राह्मे मुहूर्त्ते शयनतलादुत्थाय कर-चरणौ प्रक्षाल्य, निजासने समुपविश्य, निजशिरसि श्वेतवर्णाधो-

मुख सहस्रदलकमलकर्णिकान्तर्गत चन्द्रमण्डलोपरि स्वगुरुं, शुक्ल-वर्णं शुक्लालङ्कारभूषितम्, ज्ञानन्दमुदितमानसं सच्चिदानन्द विग्रहम्, चतुर्भुजं, ज्ञानमुद्रापुस्तकवराभयकरं, त्रिनयनं, प्रसन्नवदनेक्षणं. सर्वदेवदेवं, वामांगे वामहस्तधृत कमलया रक्तवसनाभरणया. स्वप्रियया दक्षभुजे नालंकृतं, परम शिवस्वरूपं, ध्यात्वा तच्चरणयुगलकमल विगलदमृत धारया स्वात्मानं प्लुतं विभाव्य, मानसोपचारैराराध्य ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें सहक्षमलवरयूँ ह्सौंः स्हौंः श्रीमच्छ्री अमुकानन्दनाथ श्रीपादुकां श्रीअमुकदेव्यां श्रीपादुकां च पूजयामि नमः इति दशधा विमृश्य, दण्डवत् प्रणामं मनसा कुर्यात्।

साधक श्रेष्ठ ब्राह्ममुहूर्त्त में शय्या त्याग कर, हाथ, पैर धो कर, अपने आसन पर बैठ, अपने शिर में श्वेतवर्ण अधोमुख सहस्रदल कमल की कर्णिका के मध्यगत चन्द्रमण्डल के ऊपर, शुक्लवर्ण. स्वच्छ अलङ्कारों से अलंकृत, ज्ञानानन्द से प्रसन्नचित्त, सच्चिदानन्दस्वरूप, चतुर्भुज, ज्ञानमुद्रा. पुस्तक. वर और अभय को धारण किये हुए, तीननेत्र, प्रसन्नमुख. सम्पूर्ण देवताओं के देवता, बायें हाथ में कमल और दाहिने हाथ से शक्तिको आलिङ्गन किये हुए, परमशिवस्वरूप गुरूका ध्यान कर. उनके चरणकमलों से निकली हुई अमृत की धारा से अपने को आप्लावित कर मानस उपचार से आराधना कर इस मन्त्रसे गुरुपादुका का पूजन करे—

गुरुपादुका पूजन का मन्त्र यथा—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हसखफ्रें ह्सौंक्षमलवरयूँ सहखफ्रें सहक्षमलवरयूँ ह्सौंः स्हौंः श्रीमच्छ्री

अमुकानन्दनाथा श्रीपादुकां अमुकदेव्यां श्रीपादुकां च पूजयामि नमः, इस प्रकार दस बार जप करके मनसे दण्डवत् प्रणाम करे।

प्रणाम करनेका मन्त्र यथा—

ॐ नमामि सद्गुरुं शान्तं प्रत्यक्षं शिवरूपिणम्।
शिरसा योग पीठस्थं मुक्तिकामार्थं सिद्धये॥
श्रीगुरुं परमानन्दं वन्दे स्वानन्द विग्रहम्।
यस्य सान्निध्यमात्रेण चिदानन्दायते परम्॥
अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन शलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः॥
अखण्ड मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः॥
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुः साक्षान्महेश्वरः।
गुरुरेव जगत्सर्वं तस्मै श्री गुरवे नमः॥
नमस्ते नाथ भगवन् शिवाय गुरु रूपिणे।
विद्यावतार संसिद्ध्यै स्वीकृतानेक विग्रहः॥
नवाय नवरूपाय परमार्थैकरूपिणे।
सर्वज्ञानतमो भेद मानवे चिद्घनायते॥
स्वतन्त्राय दयाक्लृप्तं विग्रहाय परात्मने।
परतन्त्राय भक्तानां भव्यानां भव्यरूपिणे॥
ज्ञानिनां ज्ञानरूपाय प्रकाशाय प्रकाशिनाम्।
विवेकिनां विवेकाय विमर्शाय विमर्शिनाम्।

पुरस्तत्पार्श्वयोः पृष्ठे नमस्कुर्या मुपर्यधः ।
सदामचित्त रूपेण विधेहि भावनाश्रयम् ॥ १० ॥

प्रत्यक्ष शिवरूप, शान्त शिवरूप योगपीठमें विराजमान, ऐसे सद्गुरुका मुक्तिकामकी सिद्धिके लिये मैं नमन करता हूं ॥

आनन्दरूप शरीरको धारण किये हुवे, जिनके सान्निध्य मात्रसे ही परमानन्दकी प्राप्ति होती है, ऐसे परमानन्दमय सद्गुरुको मैं प्रणाम करता हूं ॥

अज्ञानरूपी अन्धकारको जिसने ज्ञानाञ्जन सलाकासे दूरकर नेत्रोंको खोलकर दिव्यज्ञानमय प्रकाश प्राप्त कराया है, उस सद्-गुरुको मैं प्रणाम करता हूं ।

अखण्ड मण्डलाकार इस चराचर ब्रह्माण्डमें व्याप्त उस भग-वत्पदको दिखलानेवाले, सद्गुरुको मैं प्रणाम करता हूं ।

ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर स्वरूप तथा परब्रह्म स्वरूप गुरुको मैं नमस्कार करता हूं । हे भगवन् गुरुरूपी जो आप शिव हैं और जिन्होंने विद्याके अवतार सिद्धिके लिये अनेक शरीरोंको धारण किये हैं ऐसे गुरुदेवको मैं प्रणाम करता हूं ।

नवीन शरीरको धारण करनेवाले, परमार्थमें एकरूप, अज्ञान-रूपी अन्धकारको भेदन करनेमें सूर्यसदृश ऐसे चैतन्यस्वरूप सद्गुरुको मैं प्रणाम करता हूं ।

दयाकी मूर्ति, स्वतन्त्र परतन्त्र भक्तके लिये सदा परतन्त्र अर्थात् सद्गुरु सदा ही स्वतन्त्र हैं, परन्तु भक्तोंके लिये नितान्त

परतन्त्र याने भक्तके अधीन हैं ऐसे गुरुदेवको मैं नमस्कार करता हूं।

ज्ञानियोंके लिये ज्ञानस्वरूप और प्रकाशवालोंके लिये प्रकाश-स्वरूप विवेकियोंके लिये विवेकस्वरूप, विमर्शियोंके लिये विमर्श-स्वरूप सद्गुरुको आगे, पीछे, ऊपर, नीचे नमस्कार करता हूं।

हे सद्गुरो! आप सदा मेरे चित्तमें निवासकर सांसारिक विविध भावनाओंके नाशकी शक्ति दीजिये।

इति श्री गुरुं प्रणम्य। इस प्रकार अपने गुरुदेव को प्रणाम कर—

सुप्रसन्नं विभाव्य मनसा तदाज्ञां गृहीत्वा, मूलाधारे स्वर्णवर्ण-चतुर्दल कर्णिकान्तर्गत त्रिकोण चक्र शृङ्गाटकोपरि परां शक्ति कुण्डलिनीं उद्यद्दिनकर सहस्र भास्करां विद्युत्कोटि सन्निभां सकल मन्त्रमातरं पञ्चाशद्वर्णविग्रहामष्टत्रिंशत्कलारूपिणीं सर्व-प्राणिजीवानां त्रिधामाधानं सर्पाकारामूर्ध्वमुखीं सार्द्धत्रिवलयां बिसतन्तु तनीयसीं सुप्तां विभाव्य गुरूपदिष्ट निजसहजानन्देन प्रबोधयित्वा।

ऐसी भावना करे कि गुरु प्रसन्न हो गये, मनसा गुरुकी आज्ञा लेकर—मूलाधारमें सोनेकी तरह चमकती हुई चारदल वाले कमलके भीतर त्रिकोण शृङ्गाटकके ऊपर परमाशक्ति कुण्डलिनी जो उदयकालीन हजारों सूर्यके समान कान्तिमती और कोटि-कोटि विद्युत् प्रकाशसदृशी, पञ्चाशद्वर्णात्मिका, सम्पूर्ण मन्त्रोंकी माता, अड़तीस कलारूपिणी, प्राणीमात्रकी जीवस्वरूपिणी, तीनों

जगहके प्रकाशकी भूमि, सर्पाकार, जिसका मुख ऊपरकी ओर हैं, साढ़े तीन फेरा लगायी हुई कमलनालकी तन्तु सम सूक्ष्मरूपिणी, ऐसी स्वरूपवाली उपरोक्त सुप्त कुण्डलिनीको गुरोपदिष्ट द्वारा सहजानन्दसे जागृत करे, वहां वं नमः शं नमः इन मन्त्रों से मूलाधारके चारों दलोंमें पूजन करे, अर्थात् मूलाधारके चारों दलोंसे ही उपरोक्त चारों अक्षर निकलते हैं।

मध्ये मूलेन च प्राग्दक्षिणेन सम्पूज्य हंसः इति मन्त्रेण सर्वतो स्थाप्य ततः स्वाधिष्ठाने लिङ्गमूले विद्रुमवर्णे षट्दलकमले तां नीत्वा—

बीचमें मूलमन्त्रसे पूर्वसे दक्षिणकी तरफ हंसः इस मन्त्रसे कुण्डलिनीका उत्थान करे, तब स्वाधिष्ठानचक्र जो लिङ्गमूलमें रहता है, विद्रुमकी तरह जिसका वर्ण है—उस षट्दलमें कुण्डलिनीको लाकर वहां बं नमः भं नमः मं नमः यं नमः रं नमः लं नमः इस प्रकार षट्दलमें पूजन करे।

ततो मणिपूरे नाभौ नीलवर्णो दशदलकमले तां नीत्वा—

बीचमें मूलमन्त्रसे कुण्डलिनीका पूजन करके, पुनः नाभिमें नीलवर्णका जो मणिपूर कमल है उसमें कुण्डलिनीको खींचकर डं नमः ढं नमः णं नमः तं नमः थं नमः दं नमः धं नमः नं नमः पं नमः फं नमः इस प्रकार उन पत्रोंमें पूजन करे, पुनः मध्यमें मूलसे पूजन करे—

इसके अनन्तर वक्षस्थलमें पिङ्गलवर्ण, द्वादशदल अनाहतचक्र है उसमें कुण्डलिनीको लेजाकर वहां कं नमः खं नमः गं नमः

घं नमः ङं नमः चं नमः छं नमः जं नमः झं नमः ञं नमः टं नमः ठं नमः इस प्रकार पत्रोंमें पूजनकर मध्यमें मूलमन्त्रसे पूजन करे।

तदनन्तर कण्ठमें धूम्रवर्ण षोडशदल जो विशुद्धचक्र है उसमें कुण्डलिनीको लाकर वहां अं नमः आं नमः इं नमः ईं नमः उं नमः ऊं नमः ऋं नमः ॠं नमः ऌं नमः ॡं नमः एं नमः ऐं नमः ओं नमः औं नमः अं नमः अः नमः इन दलोंमें पूजनकर तब कण्ठमें धूम्रवर्ण षोडशदल कमल युक्त जो विशुद्धिचक्र है उसमें कुण्डलिनीको लाकर, वहां अं नमः आं नमः इं नमः ईं नमः उं नमः ऊं नमः ऋं नमः ॠं नमः ऌं नमः ॡं नमः एं नमः ऐं नमः ओं नमः औं नमः अं नमः अः नमः इस प्रकार षोडश स्वरोंसे षोडश दलोंमें पूजन कर, पुनः मध्यमें मूलमन्त्रसे पूजन करे।

तदनन्तर—भ्रूमध्यमें विद्युद्वर्ण द्विदल आज्ञाचक्रमें कुण्डलिनीको लाकर, हं क्षं इससे पत्रके मध्यमें पूजन कर मध्यमें मूलसे पूजन करे, पुनः सहस्रदल कमल कर्णिकान्तर्गत विन्दुरूप तेजोमय परम शिवके साथ कुण्डलिनीको एकाकार करके वहां पर निकलते हुए अमृतसे द्रवित कुण्डलिनीको विद्युद्वर्ण आज्ञाचक्रमें पुनः लाकर हं नमः क्षं नमः इससे पत्रके मध्यमें पूजन करके मध्यमें मूलमन्त्रसे पूजन करे।

तब धूम्रवर्ण षोडशदल जो कण्ठमें विशुद्धचक्र है उसमें कुण्डलिनीको लाकर वहां अं नमः आं नमः इं नमः ईं नमः उं नमः

ऊं नमः ऋं नमः ॠं नमः लृं नमः लॄं नमः एं नमः ऐं नमः ओं नमः औं नमः अं नमः अः नमः इस प्रकार दक्षिण क्रमसे पत्रोंमें पूजन कर मध्यमें मूलमन्त्रसे पूजन करे।

तब पिङ्गलवर्ण वक्षस्थलमें जो द्वादश दलवाला अनाहतचक्र है उसमें कुण्डलिनीको लाकर—कं नमः खं नमः गं नमः घं नमः ङं नमः चं नमः छं नमः जं नमः झं नमः ञं नमः टं नमः ठं नमः इस प्रकार पत्रोंमें पूजनकर मध्यमें मूलमन्त्रसे पूजन करे।

तदनन्तर नीलवर्ण दशदलवाला मणिपूर नाभिमें जो कमल है उसमें कुण्डलिनीको लाकर—डं नमः ढं नमः णं नमः तं नमः थं नमः दं नमः धं नमः नं नमः पं नमः फं नमः इस प्रकार पत्रोंमें पूजन करके मध्यमें मूलसे पूजन करके, पुनः लिङ्गमूलमें चित्र म-वर्ण जो षट्दल स्वाधिष्ठानचक्र है, उसमें कुण्डलिनीको लाकर बं नमः भं नमः मं नमः यं नमः रं नमः लं नमः इस तरह पूजन कर मध्यमें मूलमन्त्रसे पूजन करे।

पुनः स्वर्णवर्ण चतुर्दल युक्त मूलाधारमें कुण्डलिनीको लाकर, वं शं षं सं इस प्रकार पूजन कर मध्यमें मूलमन्त्रसे पूजन करे।

इस प्रकार आरोह और अवरोह क्रमसे कुण्डलिनीका उत्थान करके प्राणायाम करे। प्राणायामका प्रकार दक्षिणांगुष्ठसे दाहिने नाकको बन्दकर बायीं नासिकासे षोड़शवार प्रणवका जप करते हुए, पूरक करे फिर ६४ बार प्रणवको जप करते हुए कुंभक करे, फिर वाम नासापुटको बन्दकर दक्ष नासापुटसे ३२ वार प्रणवको

जपता हुआ, रेचक करे इस प्रकार पूरक, कुम्भक और रेचकात्मक ३ प्राणायामको करके ऋष्यादि स्मरण करे।

यथा—अस्य श्रीभुवनेश्वरी मन्त्रराजस्य श्रीशक्ति ऋषिःगायत्री छन्दः श्रीभुवनेश्वरी देवता, ह्रीं बीजं ईं शक्तिः रकार कीलकं श्रीचतुर्विध पुरुषार्थ साधने विनियोगः। इस मन्त्रको दाहिने हाथमें जल लेकर पढ़े और विनियोगः यहाँ तक पढ़कर जल पात्रमें छोड़ देवे।

तब ऋष्यादिन्यास करे यथा—श्रीशक्ति ऋषये नमः शिरसि, गायत्री छन्दसे नमः मुखे श्रीभुवनेश्वरी देवतायै नमः हृदि, ह्रीं बीजाय नमः गुह्ये, ईं शक्तये नमः पादयोः, रकार कीलकाय नमः नाभौ, श्रीपुरुषार्थ साधने विनियोगः इति सर्वाङ्गेषु।

इस प्रकार अङ्गन्यास करके तब करन्यास करे। यथा—ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः ह्रूं मध्यमाभ्यां वौषट्, ह्रैं अनामिकाभ्यां हूं, ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्, ह्रः करतल कर पृष्ठाभ्यां फट्।

इस प्रकार पूर्वोक्त करन्यास करके तब षड़ङ्गन्यास करे।

यथा—ह्रां हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रूं शिखायै वषट्। ह्रैं कवचाय हूं। ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रः अस्त्राय फट्। इस प्रकार षड़ङ्गन्यास करके ध्यान करे।

यथा—उद्यद्दिनद्युति मिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रय युक्तां स्मेरमुखीं वरदाङ्कुश पाशां भीतिकरां प्रभजेत् भुवनेशीम्।

उदयकालीन सूर्यके समान कान्तिवाली और चन्द्र जिनके मुकुटमें विराजमान हैं तथा जिनके मुखारविन्दमें स्मित अर्थात् मुस्कुराहट मालूम पड़ रहा है वर, अङ्कुश, पाश, अभयको चारों हाथोंमें धारण की हुई भुवनेश्वरीका मैं ध्यान करता हूँ।

इस प्रकार ध्यान करके यथा शक्ति जप समापन कर पुनः प्राणायामादि करके हाथमें जल लेकर—

गुह्यातिगुह्य गोप्त्रीत्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मेदेवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि॥

इस मन्त्रको पढ़ते हुए भगवतीके बायें हाथमें जप समर्पण कर देवे।

प्रकाशमानां प्रथमे प्रयाणे, प्रतिप्रयाणेऽप्यमृताय मानाम्।
अन्तः पदव्या मनुसञ्चरन्ती, मानन्द रूपा मवलां प्रपद्ये॥

प्रथम स्पन्दनमें प्रकाशको देती हुई, प्रत्येक स्पन्दनमें अमृतको प्रवाहित करती हुई अन्तःकरणमें सञ्चार करती हुई आनन्दमयीके आनन्दको मैं प्राप्त होता हूं।

अहं देवी न चान्योऽस्मि ब्रह्म ैवाहं न शोकभाक्।
सच्चिदानन्द रूपोऽहं स्वात्मानमिति चिन्तयेत्॥

साधक अपने आपको मैं देवी हूँ, ब्रह्म हूँ दूसरा दुःखको भोगनेवाला संसारी न हूँ और सत्‌चित् आनन्द स्वरूप हूँ इस प्रकार भावना करे।

प्रातः प्रभृति सायांतं सायादिप्रातरन्ततः।
यत्करोमि जगद्योने तदस्तु तव पूजनम्॥

हे जगद्योने !

प्रातःकालसे सायंकाल पर्यन्त और सायंकालसे प्रातःकाल तक जो कुछ कर्म मैं करता हूँ, वह भगवतीका पूजन हो इस प्रकार भावना करे।

इस प्रकार समर्पण कर अपना कार्यानुष्ठान करके।

त्रैलोक्यचैतन्यमयी सुरेशि
भुवनेश्वरि त्वच्चरणाज्ञयैव।
प्रातः समुत्थाय तव प्रियार्थं
संसारयात्रा मनुवर्तयिष्ये॥
संसारयात्रा मनुवर्तमानं
त्वदाज्ञया श्रीत्रिपुरेश्वरेशि।
स्पर्धातिरस्कारकलिप्रमाद
भयानि मां माभिभवन्तु मातः॥

तीनों लोकको चैतन्य प्रदान करनेवाली हे भगवति भुवनेश्वरि! तुम्हारे चरणारविन्दकी आज्ञासे ही मैं प्रातःकाल उठकर संसारयात्रामें लग जाता हूँ। हे भुवनेश्वरि! तुम्हारी आज्ञासे संसारके काममें लगे हुए मुझे स्पर्द्धा, तिरस्कार आदि जो कलिके प्रमाद हैं ये मुझे पराभव न दिलावें।

जानामि धर्मं नचमे प्रवृत्ति,
जानाम्यधर्मं नचमे निवृत्तिः ।
त्वया हृषीकेश हृदिस्थितेन
यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि ॥

मैं धर्मको और अधर्मको जानता हूँ तथा प्रवृत्ति निवृत्तिको भी जानता हूँ, परन्तु हे हृदयस्थ इन्द्रियोंके स्वामी तुम जैसी आज्ञा करोगे वैसा करूंगा।

इति देवाज्ञां प्राथ्यं अजपाजपं सहज सिद्धम्। तत्तद्देवेभ्यः संकल्प्य समर्पयेत्।

इस तरह भगवतीकी आज्ञाको लेकर स्वाभाविक सिद्धियोंको देनेवाला अजपाजप जिन-जिन देवताओंके लिये जितने लिखे हैं उतना करना।

पुनः संकल्पके लिये हाथमें जल लेकर संकल्प करे, यथा—ॐ अद्य पूर्वेद्युरहोरात्राचरित मुच्छ्वास निच्छ्वासात्मकं षट्शताधिक मेकविंशति सहस्रसंख्यक मजपाजपं मूलाधार स्वाधिष्ठान-मणिपूरानाहतविशुद्धाज्ञाब्रह्मरन्ध्रेषु चतुर्दल, षट्दल दशदल द्वादशदल षोड़शदल द्विदल सहस्रदलेषु स्वर्णविद्रुम नील पिङ्गल धूम्र विद्युत्कर्बुरवर्णेषु स्थिताभ्यो गणपति ब्रह्म विष्णु रुद्र जीवात्म परमात्म गुरुपादुकाभ्यो तथा भागसः समर्पयामिनमः इति संकल्पं कृत्वा समर्पयेत्। इस प्रकार संकल्प करके समर्पण कर देवे।

पुनः संकल्प करे यथा ॐ ऐं ह्रीं श्रीं मूलाधार चक्रस्थाय गणपतये अजपाजपं षट्शतं समर्पयामि नमः। इसे भी पूर्वोक्त प्रकारसे समर्पण कर देवे।

तदनन्तर पुनः संकल्प करे, यथा—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं स्वाधिष्ठान चक्रस्थाय ब्रह्मणे अजपाजपानि षट्सहस्राणि समर्पयामि नमः। यह पढ़कर इसे भी पहलेकी तरह समर्पण करे।

ततः अनाहतचक्रस्थाय रुद्राय अजपाजपानां षट्सहस्राणि समर्पयामि नमः। इसे उपरोक्त प्रकारसे समर्पण कर देवे।

पुनः विशुद्धचक्रस्थाय जीवात्मने अजपाजपानामेकसहस्रं समर्पयामि नमः। इसका पाठ करके समर्पण करे।

ततः आज्ञाचक्रस्थाय परमात्मने अजपाजपानामेकसहस्रं समर्पयामि नमः इसे भी समर्पण करे।

अनन्तर—सहस्रदलकमलकर्णिकामध्यस्थायै श्रीगुरुपादुकायै अजपाजपानामेकसहस्रं समर्पयामि नमः इसे भी समर्पण करे।

इस प्रकार अजपाजप समर्पण करके जपा मन्त्र से प्राणायाम करके संकल्प करे।

यथा—अस्य श्रीअजपा गायत्रीमन्त्रस्य हंस ऋषिः अव्यक्त गायत्रीछन्दः परमहंसो देवता, हं बीजं सः शक्तिः सोऽहं कीलकम् ॐकारस्तत्वं उदात्तः स्वरः हैमोवर्णः ममभोक्षार्थे अजपा जपे विनियोगः। इसे पढ़कर अञ्जलिबद्ध होके संकल्पको रख देवे।

इसके बाद न्यास करे यथा—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसात्मने ऋषये नमः शिरसि। अव्यक्त गायत्री छन्दसे नमः मुखे। परमहंस-

देवतायै नमः हृदये। हं बीजाय नमः मूलाधारे। सः शक्त्ये नमः पादयोः। सोऽहं कीलकाय नमः नाभौ। ॐकारतत्वाय नमः हृदये। उदात्तस्वराय नमः कण्ठे। हैमवर्णाय नमः सर्वाङ्गे। इस प्रकार न्यास करके कृताञ्जलि होके यह कहना चाहिये यथा—ममभोक्षार्थे विनियोगः।

तव करन्यास करे यथा—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः सूर्यात्मने स्वाहा अंगुष्ठाभ्यां नमः। हं सौं सोमात्मने स्वाहा तर्जनीभ्यां स्वाहा। हं सूं निरञ्जनात्मने स्वाहा मध्यमाभ्यां वषट्। हं सौं निराभासात्मने स्वाहा अनामिकाभ्यां हुं। हसौं अनन्ततनुः सूक्ष्मादेवी प्रचोदयात् स्वाहा कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। हसः अव्यक्तबोधात्मने करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। इस प्रकार करन्यास करके—

तव खड्ङ्गन्यास करे यथा—ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः सूर्यात्मने स्वाहा हृदयाय नमः। हं सौं सोमात्मने स्वाहा शिरसे स्वाहा। हंसः निरञ्जनात्मने स्वाहा शिखायै वषट्। हसौं निराभासात्मने स्वाहा कवचाय हुं। हसौं अनन्ततनु सूक्ष्मादेवी प्रचोदयात् स्वाहा नेत्रत्राय वौषट्। हंसः बोधात्मने स्वाहा अस्त्राय फट्। इस प्रकार षड्ङ्गन्यास करके तव ध्यान करे।

यथा—द्यौ मूर्धानं यस्यविप्रा वदन्ति
खं वै नाभि चन्द्र सूर्यौ च नेत्रे।
दिग्भिः श्रोत्रो यस्य पादौ क्षितिश्च
ध्यातव्योसौ सर्वभूतान्तरात्मा॥

यह भगवानके विराट् रूपका ध्यान है, यथा—द्युलोक जिनका शिर है और आकाश जिनकी नाभि है, चन्द्र, सूर्य जिनके नेत्र हैं, दिशायें जिनके कर्ण हैं, पृथ्वी जिनको पैर है, ऐसे प्राणीमात्रके हृदयमें निवास करनेवाले भगवान ध्यान करने योग्य हैं।

इस प्रकार विराट् रूपका ध्यान कर, अर्थात् तद्रूप अपनेको समझ कर, उसका अनुसन्धान करते हुए प्रणव अर्थात् अ, उ, म् के सम्मिश्रणको ध्यान कर श्वास और प्रश्वासके साथ हंसः इस मन्त्रको पचीस बार जप कर उसे समर्पण करके—

गुरोपदिष्ट मार्गसे अन्तर्नादके अनुसन्धान द्वारा समस्त उपाधियोंको दूरकर, चित् अर्थात् चैतन्यमय जो ब्रह्मका विलास है उससे ही तुम प्रवर्तमान हो ऐसी अपनी आत्माको समझ कर, तब अपने कार्यका अनुष्ठान करे—

समुद्र मेखले देवि पर्वतस्तनमण्डले ।
विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ॥

हे भगवति वसुन्धरे ! समुद्र जिनकी मेखला है, पर्वत जिनके स्तनमण्डल हैं और जो विष्णुकी पत्नी हैं ऐसी आप मेरे पैरके रखनेका जो स्पर्श आपको होता है, इसे क्षमा करें।

इस प्रकार पृथ्वीकी प्रार्थना करके दाहिना या बायाँ जो श्वास चलता हो तदनुकूल पैरको रखे अर्थात् दाहिना श्वास चलता हो तो दाहिना पैर और बायाँ चलता हो तो बायें पैरको रखे।

पुनः बाहर जाकर मलमूत्र को त्याग कर—क्लीं काम देवाय सर्वजन मोहनाय नमः। इस मन्त्रको उच्चारण करके दन्तधावन करे।

तदनन्तर—नदी, तड़ाग या स्नानागारमें जाकर वैदिक स्नान समाप्त कर, तान्त्रिक स्नानको आरम्भ करे यथा मूलमन्त्रसे हाथ, पैर, मुखको धोकर—मणिधरि वज्रिणि महाप्रतिसरो रक्ष हुं फट् स्वाहा, इस मन्त्रसे शिखा बन्धन करके—मूलमन्त्रसे आत्म तत्वं शोधयामि स्वाहा, विद्यातत्वं शोधयामि स्वाहा, शिवतत्वं शोधयामि स्वाहा इस प्रकार तीन आचमन करके मलनिर्मोच-नार्थं उबटन या साबुन आदिसे स्नान कर फिर आचमन करके हाथमें जल लेकर इस संकल्पको करे—

ॐ अद्येत्यादि देशकालौ स्मृत्वा श्रीभुवनेश्वरी प्रीत्यर्थं तान्त्रिकस्नानमहं करिष्ये। इसके बाद मूलमन्त्रसे ऋषि आदि षड़ङ्गन्यास करके सामने जो स्नानका पात्र रखा हुआ है, उसमें अपनी अङ्गुलीसे चौकोण बनावे, वहाँ तीर्थकी कल्पना इस प्रकार करे—

कुरुक्षेत्रं गयागङ्गा प्रभासं पुष्कराणि च।
एतानि पुण्यक्षेत्राणि स्नानकाले भवन्त्विह॥
ॐ ब्रह्माण्डोदर तीर्थानि करैः स्पृष्टानि तेरवे।
तेन सत्येन देवेश तीर्थान् देहि दिवाकर॥

ब्रह्माण्डके उदरमें जितने तीर्थ सूर्यके रश्मियोंसे स्पर्श किये हुए हैं, हे नारायण दिवाकर! उन तीर्थोंका फल मुझे दो।

क्रों इस मन्त्रयुक्त अङ्कुशमुद्रासे मण्डलको भेदन कर—

ॐ गङ्गे च यमुनेचैव गोदावरि सरस्वति ।
नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ॥

इस प्रकार सूर्यमण्डलसे तीर्थोंका आवाहन कर, जिन तीर्थों की तुम कल्पना कर रहे हो उन्हींका पूजन करो ।

पुनः सूर्यमण्डलसे ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः इस मन्त्रसे सर्वानन्दमय तीर्थमण्डलमें तीर्थोंका ध्यान करें ।

ध्यान यथा—सर्वानन्दमयी मशेषदुरितध्वंसांसृगाङ्कप्रभां त्र्यक्षांमुर्ध्वकरद्वयेन दधतीं पाशान् सृणिं च क्रमात् । दोर्भ्यांचामृतहेमपूर्णकलशं शुक्लाक्षमालां वरं गङ्गासिन्धु सरिद्वरादि सहितां श्रीतीर्थशक्ति भजे । इस प्रकार ध्यान करके—

पुनः ॐ नमोभगवति अम्बे अम्बिके अम्बालिके महामालिनि एह्येहि भगवति अशेषतीर्थालवाले ह्रीं शिवजटाधिरूढे गङ्गे गङ्गाम्बिके स्वाहा इस मन्त्रसे सात वार जलाभिमन्त्रित करके ह्रीं इस मन्त्रसे जलको चलाकर वं इस अमृतमुद्रासे अमृतीकरण करके ॐ आत्मतत्वात्मने नमः ॐ विद्यातत्वात्मने नमः ॐ शिवतत्वात्मने नमः इन मन्त्रोंको जपके जलसे त्रिन्यासकर वहां अपने चक्रकी भावना करके हृत्कमलसे देवीका आवाहनकर षड्ङ्गसे भेदनकर उन्हीं मन्त्रोंको प्रथम स्नान कराके योनिमुद्रासे उसी जलको आठ वार अभिमन्त्रित करके वहां मूलमन्त्र स्मरणपूर्वक स्नानकर, तब कुम्भमुद्रासे मूलको पढ़ता हुआ अपने शिरपर तीन

बार अभिषेक करे, मूलसे देवीका तीन बार तर्पणकर देवीको अपने हृदयमें लाके मूलं आत्मतत्वं शोधयामि स्वाहा, मूलं विद्यातत्वं शोधयामि स्वाहा, मूलं शिवतत्वं शोधयामि स्वाहा इस प्रकार तीन आचमन करके तीरमें आके पवित्र वस्त्र पहनके ऊर्ध्वंत्रिपुण्ड तिलककर वैदिक सन्ध्या करके तान्त्रिक सन्ध्याको आरम्भ करे।

यथा—पूर्ववत् आचमन करके मूलमन्त्रसे शिखा-बन्धन कर, प्राणायाम और ऋषि आदि षड्ङ्गन्यास करके अपने आगे धेनु-मुद्रासे पूर्वोक्त तीर्थजलकी रचना कर, उसका अमृतीकरण करके आठ बार उस जलको अभिमन्त्रित करके उस जलसे—अं नमः आं नमः इं नमः ईं नमः उं नमः ऊं नमः ऋं नमः ॠं नमः ऌं नमः ॡं नमः एं नमः ऐं नमः ओं नमः औं नमः अं नमः अः नमः कं खं नमः गं नमः घं नमः ङं नमः चं नमः छं नमः जं नमः झं नमः ञं नमः टं नमः ठं नमः डं नमः ढं नमः णं नमः तं नमः थं नमः दं नमः धं नमः नं नमः पं नमः फं नमः बं नमः भं नमः मं नमः यं नमः रं नमः लं नमः वं नमः शं नमः षं नमः सं नमः हं नमः ळं नमः क्षं नमः इन मातृकाक्षरों द्वारा अपने शिरपर जलसेचन करके पुनः मूलसे तीन बार जलसिक्त करके दाहिने हाथमें जल लेके उसे बायें हाथसे ढककर लं वं यं हं इस पञ्च-भौतिक मन्त्रसे सात बार अभिमन्त्रित कर पुनः मूलसे तीन बार अभिमन्त्रित करके अभिषिक्त तीन बार करना चाहिये, उस जलबिन्दुसे वामहस्तकृततत्वमुद्रासे मूलोच्चारणपूर्वक शिरपर

तीन बार प्रोक्षणकर बाकी बचे हुए जलको बायें हाथमें लेकर तेजोरूप उस जलको इडासे आकर्षणकर अपने देहके सम्पूर्ण पापोंको धोकर पिंगलासे निकले हुए उस जलको कृष्णवर्ण जानकर पुनः दाहिने हाथमें लेकर अपने वामभागमें प्रज्वलित वज्रशिलाको ध्यानकर, ॐ श्लीं पशु हूं फट् इस पशुपास्त्र मन्त्रसे उस शिलामें आस्फालन कर हाथ धोके मूलमन्त्रसे जल लेकर ब्रह्मनाड़ीसे सहस्रदलमें परमामृतसे ऐक्य भावनाकर निर्गमासे उस जलमें अमृतमालिनी स्वाहा इस मन्त्रसे कुश देके उन कुशोंसे तीन बार शिरका प्रोक्षण करके ॐ आत्मतत्वं शोधयामि स्वाहा, ॐ विद्यातत्वं शोधयामि स्वाहा, ॐ शिवतत्वं शोधयामि स्वाहा, ॐ विद्यातत्वं शोधयामि स्वाहा, ॐ आत्मतत्वं शोधयामि स्वाहा, मूलम्—ॐ सर्वतत्वं शोधयामि स्वाहा, इस प्रकार अभिमन्त्रित जलसे नौ बार आचमन करके—

अञ्जलिमें जल लेकर उठके—ॐ ह्रां ह्रीं हंसः श्रीमार्तण्ड भैरवाय प्रकाशशक्ति सहिताय इस प्रकार कुल सूर्यको तीन अर्घ्य देके हृत्कमलसे मूल देवीको सूर्यमण्डलमें लाकर विधिवत् ध्यान कर धंधनाये विद्महे श्रीरति प्रियाये धीमहि ह्रीं स्वाहा प्रचोदयात्। यह गायत्री अथवा ऐं ह्लेखायै विद्महे ह्रीं भुवनायै धीमहि श्री तन्नः शक्ति प्रचोदयात् इस मूल गायत्रीसे चारों सन्ध्याओंमें देवीके लिये सूर्य-बिम्बमें अर्घ्य देकर, उसके बाद चारों सन्ध्याओंमें क्रमशः मूलाधार, हृत् आज्ञा ब्रह्मरन्ध्रोंसे देवीके तेजको आकृष्ट कर कल्पित वह्नि, सूर्य, चन्द्र और तारा मण्डलोंमें

निक्षेप कर वहाँ बाला, प्रौढ़ा और चैतन्यरूपिणी देवीका ध्यानकर ऐं ह्रल्लेखायै विद्महे भुवनायै धीमहि तन्नः शक्तिः प्रचोदयात्। यह मन्त्र प्रातःकाल और ह्रीं लेखायै विद्महे भुवनायै धीमहि तन्नः शक्तिः प्रचोदयात्। यह मन्त्र मध्याह्नमें तथा श्रीं लेखायै विद्महे ह्रीं भुवनायै धीमहि तन्नः शक्तिः प्रचोदयात्। यह मन्त्र सायं-कालमें और ऐं लेखायै विद्महे ह्रीं भुवनायै धीमहि तन्नशक्तिः प्रचोदयात्। यह मन्त्र अर्द्ध-रात्रिमें इस प्रकार स्वगायत्रीसे अर्घ्य प्रदान कर यथाशक्ति जप करके प्राणायाम ऋष्यादि, कर-न्यास तथा षड्ङ्गन्यास कर यथाशक्ति स्वमूलमन्त्र और स्वगायत्री जप करके पुनरपि प्राणायाम ऋष्यादि कर षड्ङ्गन्यास कर जप समर्पण करके मण्डलोंसे देवी तेजको स्वस्थानमें और देवीको अपने हृदयमें लाकर ध्यान करे इति सन्ध्याविधिः ।

अथ तर्पणम्—

पूर्ववत् आचमन, प्राणायाम, ऋष्यादि करन्यास, षड्ङ्ग-न्यास करके तीर्थोंका पूर्ववत् आवाहन कर मूलमन्त्रसे जलको सात बार अमृतीकरण मुद्रासे अमृत कर उस जलमें यन्त्रका ध्यान कर वहाँ देवीको हृदयसे परिवार समेत लाकर षड्ङ्ग-योगसे एकाकार कर कुण्डलिनीके प्रयोगरूपी अमृतसे अभिषिक्त कर विधिवत् पूजनके अनन्तर ईशान में ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अमुकानन्दनाथ भैरव स्तृप्यताम्। वह्निमें परमगुरु स्तृप्यताम्। नैर्ऋत्यमें परमेष्ठिगुरु स्तृप्यताम्। वायव्यमें परमाचार्यगुरु स्तृप्य-ताम्। तीन बार अथवा एक बार तर्पण करके। बिन्दुमूलमें

श्रीभुवनेश्वरी भगवती सेश्वरा सवाहना सपरिवारा तृप्यताम्।
इस प्रकार तीन बार तर्पण करे।

पुनः निम्नोक्त क्रमसे परिवार देवताका तर्पण करे, यथा—ह्रां हृदयं तृप्यताम्। ह्रीं शिरस्तृप्यताम्। ह्रूं शिखा तृप्यताम्। ह्रैं कवचाय तृप्यताम्। ह्रौं नेत्रत्रयं तृप्यताम्। ह्रः अस्त्रं तृप्यताम्। ह्रीं हृल्लेखा तृप्यताम्। ऐं गगना तृप्यताम्। डं रक्ता तृप्यताम्। ईं करालिका तृप्यताम्। औं महोच्छुष्मा तृप्यताम्। गं गङ्गा तृप्यताम्। यं यमुना तृप्यताम्। सं सरस्वती तृप्यताम्। गायत्री सहित ब्रह्मा तृप्यताम्। सावित्री सहित विष्णुस्तृप्यताम्। सरस्वती सहित रुद्रस्तृप्यताम्। लक्ष्मी सहित कुबेरस्तृप्यताम्। रति सहित मदन स्तृप्यताम्। पुष्टि सहित विघ्नराज स्तृप्यताम्। शङ्खनिधि स्तृप्यताम्। पद्मनिधि स्तृप्यताम्। अनङ्गकुसुमा स्तृप्यताम्। अनङ्गकुसुमातुरा स्तृप्यताम्। अनङ्गमदना स्तृप्यताम्। अनङ्गमदनातुरा तृप्यताम्। अनङ्गमेखला तृप्यताम्। भुवनपाला तृप्यताम्। गगनवेगा तृप्यताम्। शशिशेखरा तृप्यताम्। कराली तृप्यताम्। विकराली तृप्यताम्। उमा तृप्यताम्। सरस्वती तृप्यताम्। श्रीस्तृप्यताम्। दुर्गा तृप्यताम्। उषा तृप्यताम्। लक्ष्मी स्तृप्यताम्। सत्या तृप्यताम्। श्रुति स्तृप्यताम्। स्मृति स्तृप्यताम्। धृति स्तृप्यताम्। श्रद्धा तृप्यताम्। मेधा तृप्यताम्। मति स्तृप्यताम्। कीर्ति स्तृप्यताम्। आर्या तृप्यताम्। अनङ्गरूपा तृप्यताम्। अनङ्गमदना तृप्यताम्। अनङ्गमदनातुरा तृप्यताम्। भुवनवेगा तृप्यताम्। भुवनपालिका तृप्यताम्। सर्व-

शिशिरा तृप्यताम्। अनङ्गवेदना तृप्यताम्। अनङ्गमेखला तृप्यताम्। इन्द्र स्तृप्यताम्। अग्नि स्तृप्यताम्। यम स्तृप्यताम्। निऋृति स्तृप्यताम्। वरुण स्तृप्यताम्। वायु स्तृप्यताम्। कुबेर स्तृप्यताम्। ईशान स्तृप्यताम्। ब्रह्मा स्तृप्यताम्। अनन्त वज्र स्तृप्यताम्। शक्ति स्तृप्यताम्। दण्ड स्तृप्यताम्! खड्ग स्तृप्यताम्। पाश स्तृप्यताम्। ध्वजा तृप्यताम्। गदा तृप्यताम्। त्रिशूल स्तृप्यताम्। ब्राह्मी तृप्यताम्। माहेश्वरी तृप्यताम्। वाराही तृप्यताम्। ऐन्द्री तृप्यताम्। चामुण्डा तृप्यताम्। महालक्ष्मी स्तृप्यताम्। पद्मास्तृप्यताम्। चक्रं तृप्यताम्। इस प्रकार परिवार देवताका तर्पण कर पुनः प्रणायामादि करके देवीको अपने हृदयमें विसर्जित कर तीर्थोंको अपने-अपने स्थानमें विसर्जित करें।' इति तर्पणम्॥

इसके अनन्तर वज्रोदक हूं फट् स्वाहा इस मन्त्रसे जलपूर्ण घटको लेकर मूलमन्त्रको स्मरण करता हुआ यज्ञ-मण्डपमें आकर ॐ ह्रीं विशुद्ध सर्वपापानि शमयाशेषं विकल्पमपनय हुं इस मन्त्रसे हाथ पैर धोकर—

पूर्व प्रकार से आचमन कर द्वारके अग्रभागमें स्थित होकर अपने दाहिनी ओर आगे बतलाये हुए क्रमसे सामान्य अर्घ निर्माण कर उस जलसे द्वारस्थ देवताका पूजन करे. यथा—द्वारोर्ध्वे गं गणपतये नमः। दक्षे वं वटुकाय नमः। वामे क्षां क्षेत्रपालाय नमः। अधः यां योगिनीभ्यो नमः। दक्षे गं गंगायै नमः।

वामे यं यमुनायै नमः। पुनर्दक्षे श्रीं श्रियै नमः। वामे सरस्वत्यै नमः। इस प्रकार पूजन कर, वामाङ्गको सङ्कुचित करते हुए मण्डपके अन्दर जाके, वहाँ पुनः पूजन करे, यथा—नैऋत्ये ब्रह्मणे नमः। वास्तु पुरुषाय नमः। इस तरह पूजनकर उसके आगे कुशासन देके अञ्जलिबद्ध होकर हाथमें जल लेकर विनियोग करे।

यथा—अस्य श्रीआसन मन्त्रस्य मेरुपृष्ठऋषिः सुतलछन्दः कूर्मो देवता आसने विनियोगः। यह पाठकर जल छोड़ देना चाहिये।

तदन्तर न्यास करे—मेरुपृष्ठ ऋषये नमः शिरसि। सुतलछन्दसे नमः मुखे। कूर्मो देवतायै नमः हृदि। आसनोपवेशने विनियोगः। इससे सम्पूर्ण अङ्गोंका न्यासकर आसनका पूजन करे।

आसन पूजनका प्रकार यथा—मस्तुकाय नमः। कालाग्नि रुद्राय नमः। आधार शक्तये नमः। मूलप्रकृत्यै नमः। कूर्माय नमः। अनन्ताय नमः। पृथिव्यै नमः। सुधासमुद्राय नमः मणिद्वीपाय नमः। चिन्तामणिगृहाय नमः। पारिजाताय नमः रत्नवेदिकायै नमः। पूर्वोक्त मन्त्र पाठकर जल, गन्ध, अक्षत, पुष्प आदिसे आसनका पूजन करके वीरासन पर बैठकर।

इस प्रार्थनाका पाठ करे—

यथा—ॐ पृथ्वि त्वयाधृता लोका देवि त्वं विष्णुनाधृता।
त्वञ्चधारय मां नित्यं पवित्रं कुरुचासनम्॥

हे वसुन्धरे ! तुमने इस मर्त्यलोकको धारण किया है और तुम भगवान् विष्णुसे धारण की हुई हो, तुम मुझे धारण करो और मेरे आसनको पवित्र करो।

ॐ संविदे ब्रह्मसंभूते ब्रह्मपुत्रि सदानघे।
ब्रह्मणानां च तृप्त्यर्थं पवित्राभव सर्वदा॥
ॐ ब्रह्मण्यै नमः स्वाहा॥

हे ब्रह्मसे उत्पन्न हुई संविद् वि ! हे निरन्तर पाप रहिते तुम ब्राह्मणोंकी तृप्तिके लिये सर्वदा पवित्र हो।

ॐ सिद्धमूलेऽक्षये देवि ! हीनबोधप्रबोधिनी।
राजप्रजावशकरि ! शत्रुपक्ष निषूदिनी॥ ऐं क्षत्रियायै नमः॥

हे सिद्धमूले ! हे अविनाशिनि ! अज्ञानियोंको ज्ञान देनेवाली ! राजा तथा प्रजाओंको वश करनेवाली, और शत्रुओंके कण्ठोंको संचरण शून्य करनेवाली क्षत्रिया तुम्हें प्रणाम है, तुम पवित्र हो।

ॐ अज्ञानेन्धनदीप्ताग्नौ ज्ञानाग्नि ब्रह्मरूपिणि !
आनन्द स्याहुतिप्रीतिं सम्यग्ज्ञानं प्रयच्छ मे॥ ह्रां वैश्यायै नमः

अज्ञानरूपी काष्ठको जलाकर प्रदीप्त ज्ञानाग्निमें यह आनन्दको आहुति मैं देता हूं मुझे प्रीति और समीचीन ज्ञान प्रदान करो।

ॐ नमस्यामि नमस्यामि योगमार्ग प्रबोधिनी !
त्रैलोक्य विजये मातः समाधि फलदा भव॥ क्लीं शूद्रायै नमः

हे योगमार्गको जाग्रत करनेवाली और तीनोंलोकमें विज[य]
प्रदान करनेवाली मैं तुम्हे नमस्कार करता हूं, तुम समाधि[के]
फलको प्रदान करो।

इस प्रकार जलको शुद्ध करके पुनः इस मन्त्रका पाठ
करे, यथा—

अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतमाकर्षय २ सिद्धिं दे[हि]
श्रीभुवनेश्वरीपदं मे वशमानय स्वाहा।

हे अमृतस्वरूपिनि! अमृतसे उत्पन्न हुई! अमृतको वर्ष[ण]
करनेवाली मुझे सिद्धि प्रदान करो। और भुवनेश्वरी पदको मेरे
वशवर्ती करो।

पुनः संविद्के ऊपर मूलमन्त्रको सात बार जपके ततः मूलं
आगच्छ २, मूलं संतिष्ठ २, मूलं संनिधत्स्व २, मूलं संनिधेहि २।
इस प्रकार आवाहन आदि मुद्राओंको दिखलाकर—

पुनः चुटकीसे दशों दिशाओंका बन्धनकर तीन तालीके साथ
तीन पदाघातसे विघ्नोंका निवारण करके—सहस्रारपद्ममें तत्व-
मुद्रासे श्रीगुरुपादुकाका तीन बार तर्पणकर और अपने हृदयमें
सात बार देवीकी भावनाकर—

तब इस मन्त्रको पढ़े—ऐं वद वद वाग्वादिनि मम जिह्वाग्रे
स्थिरा भव सर्वसत्ववशंकरी स्वाहा।

हे वाणीको विकास करनेवाली मेरी जिह्वाके अग्रभागमें तु[म]

स्थिर हो और सम्पूर्ण प्राणियोंको मेरे वशमें कर इस पूर्वोक्त मन्त्र से संविदको अपने मुखमें रखे। इति संविद्विधिः।

अनन्तर आनन्दमय होकर बायें कानके ऊपर श्रीगुरुदेवका नाम लेकर उनकी पादुकाका पूजन करे, यथा—श्रीमच्छ्री अमुकानन्दनाथ पादुकाभ्यां नमः। दाहिने—गं गणपतये नमः। इस मन्त्रसे गणपतिको प्रणाम करे। मध्यमें इस मन्त्रसे भगवती भुवनेश्वरीको प्रणाम करे, यथा—श्रीभुवनेश्वर्यै नमः। इस प्रकार प्रणाम कर मूलमन्त्र से पूजोपकरण को अभिमन्त्रित करके—

अपने दाहिनी ओर गन्ध-पुष्पादिको रखके और अपने बायीं ओर सुगन्ध, जल, पुष्पादिको रख, देवताके पश्चिममें कुल द्रव्यों को स्थापन कर पुष्पादिका शोधन करे।

पुष्प शोधन करनेका मन्त्र, यथा—ॐ शताभिषेके शताभिषेके हूं फट् स्वाहा, ॐ पुष्पकेतु राजाहशिताय सम्यक् संबद्धाय हूं फट् स्वाहा, पुष्पे पुष्पे महापुष्पे सुपुष्पे पुष्पसंभवे पुष्पप्रचयावकीले हूं फट् स्वाहा। इससे फूलोंको अभिमन्त्रित करे। गन्धादिकों को मूलमन्त्र से अभिमन्त्रित कर—

पुनः विघ्नोत्सारण करे—इसे ही भूतोत्सारण भी कहते हैं, यथा—अपसर्पन्तु ते भूताः ये भूताः भूमि संस्थिता।
ये भूता विघ्नकर्तार स्तेनश्यन्तु शिवाज्ञया॥

पाखण्डकारिणो भूताः ये च भूम्यन्तरिक्षगाः ।
दिवि लोके स्थिता ये च ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥

जो भूत पृथ्वीमें हैं और जो विघ्नोंको करनेवाले हैं, वे शिवजी की आज्ञासे नाश हो जावें तथा पाखण्डकारी जो भूत, वैताल, भूमि और आकाशमें गमन करनेवाले हैं और स्वर्गलोक में भी विघ्नकारी भूत वेताल हैं वे भी शिवजी की आज्ञासे लोप हो जावें।

तदनन्तर पूर्वोक्त मन्त्र पाठपूर्वक तर्जनी और मध्यमासे ऊपर २ तीन ताल देकर बायीं एड़ीसे जमीनपर तीन प्रहारकर दिव्यदृष्टि प्राप्तकर छोटिका (चुटकी) से दशो दिशाओंका बन्धन करके चारो दिशाओंमें वह्नि प्रकारको चिन्तन कर निम्नोक्त प्रकारसे तीन प्राणायाम करे, यथा इडासे १६ पूरक, ६४ कुंभक, ३२ रेचक पहले बताये हुए क्रमसे प्रणवको १६ बार जप करता हुआ दाहिने अंगुष्ठ से दक्षनासापुट को बन्दकर बायीं नासिकासे पवनका पूरन करे, पुनः दोनों नासापुटोंको बन्दकर ६४ बार प्रणवको जपता हुआ कुम्भक करे, पुनः दाहिनी नासिकासे ३२ बार प्रणवको जपता हुआ चक्कर फेर कर रेचक करे। इसे एक प्राणायाम कहते हैं। पुनः बायेंसे पूरक और दाहिनेसे रेचक, तब पहले जैसा। इस प्रकार प्राणायामत्रयसे अपने शरीरस्थ पापोंको दूरकर अपने शरीरको देवताके आराधन करने योग्य समझकर भूतशुद्धि करे, यथा—

पैरसे लेकर जंघा तक पृथ्वीका स्थान है और चतुरस्र है तथा वज्रका चिह्न है। पीतवर्ण निवृत्ति कलाका अधिष्ठान लं

बीजयुक्त पृथ्वीका ध्यानकर पुनः जानुसे आरम्भकर नाभि पर्यन्त पानस्थान शुक्लवर्ण अर्धचन्द्राकार दोनों शृङ्गोंमें ही पद्म चिह्नयुक्त विष्णुदैवत प्रतिष्ठाकलाका अधिष्ठान वं बीजयुक्त ध्यान करे, पुनः नाभिसे कण्ठ पर्यन्त वह्निमण्डल स्वस्तिक चिह्नयुक्त त्रिकोणाकार रक्तवर्ण रुद्रदैवत (रुद्र जिसके देवता हैं) विद्याकलाका अधिष्ठान रं बीजयुक्त ध्यान करके, कण्ठसे भ्रूमध्य तक वायुमण्डल, षट्कोणाकार, छः बिन्दुओंके चिह्न समेत, षट्कोणवृत्त (गोलाकार) युक्त, कृष्णवर्ण, ईश्वरदैवत, शान्तिकलाका अधिष्ठान, यं बीजयुक्त ध्यानकर, भ्रूमध्यसे ब्रह्मरन्ध्र तक आकाशस्थान, वृत्ताकार, ध्वज चिह्नयुक्त, धूम्रवर्ण सदाशिवदैवत, शान्त्योत्पत्ति कलाधिष्ठान, हं बीजयुक्त, वहाँ पञ्चभूतमय देहमें दश प्रकारके धर्मोंको उद्भूत जानकर और ज्ञान ही जिस कमलका कमलनाल है तथा आठ प्रकारके ऐश्वर्य ही जिसके अष्टदल हैं, वैराग्य जिसकी कली है, इस तरह अपने हृदयमें विराजमान जो हृत्कमल है उसका ध्यान करके, सम्मिलित कर्णिकामें जीवात्माको सूक्ष्मरूप प्रदीपोपम-कलिकामें ज्योतिर्मय और अनादि सत्तासे युक्त परमचैतन्यरूप चिन्तनकर, प्रथम वर्णित क्रमसे मूलाधारसे कुण्डलिनीका उत्थान कर सुषुम्नामार्गसे मूलाधारादि अनाहतान्तस्थ वर्णादि देवतासे मिलाकर पुनः हृत्कमलमें लाकर तथा जीवात्माको आयत्तीकृत ध्यान करता हुआ सुषुम्नामार्गसे विशुद्धादिचक्रस्थ वर्ण और देवताओंसे मिलाके ब्रह्मरन्ध्रमें लाकर, वहाँ वर्तमान सहस्रदलकमल-कर्णिका मध्यवर्ती परमात्मज्योतिमें सम्पूर्ण और देवतासमूहको

तथा जीवात्माको हंस इस मन्त्रसे संयुक्तकर, कुण्डलिनीको अपने स्थानमें लाकर, तत्वसंहार करे—पृथ्वीके स्थानमें पादेन्द्रिय गमनक्रिया गन्तव्य, गन्ध, घ्राण, पृथ्वीके स्थानमें समानवायुको स्मरणकर—ॐ ह्रां ब्रह्मणे पृथिव्यधिपतये निवृत्ति कलात्मने हुं फट् स्वाहा। इस मन्त्रसे उस कुण्डलिनीको यं के मध्यमें लावे, तब य के स्थानमें हस्त, दातव्य, रस, रसना, जल, विष्णु प्रतिष्ठा उदानवायुको चिन्तनकर, ॐ ह्रीं विष्णवे जलाधिपतये शान्तिकलात्मने हुं फट् स्वाहा। इस मन्त्रसे उन सबोंको कुण्डलिनी द्वारा बह्नितत्वमें संहरन करे, तब बह्निस्थानमें पायु विसर्ग विसर्जनीय रूप, चक्षु, बह्नि रुद्रविद्या तथा व्यानवायुको चिन्तनकर—ॐ हूं रुद्राय तेजोधिपतये विद्याकलात्मने हूँ फट् स्वाहा। इस मन्त्रसे उपरोक्त सम्पूर्णको वायुमण्डलमें संहरनकर तब वायुस्थानमें उपस्थ, आनन्द, तद्विषय स्पर्श स्प्रष्टव्य वाह्येश्वर शांत्यमानोंको स्मरणकर—ॐ ह्रैं ईश्वराय वाह्याधिपतये शान्तिकलात्मने हुं फट् स्वाहा। इस मन्त्रसे सबोंको आकाशके स्थानमें संहरण करके, तब आकाशस्थानमें वाक् वचन वक्तव्य शब्द आकाश सदाशिव आन्त्यातीत प्राणको चिन्तन करके—

ॐ ह्रौं सदाशिवायाकाशाधिपतये शांत्यातीत कलात्मने हुं फट् स्वाहा। इस मन्त्रसे पूर्वोक्त सबको कुण्डलिनीमें संहरन करके बिन्दुशक्तिको बिन्दुशक्तिमें प्रणवके द्वारा संहरनकर—ॐ ह्रीं हुं फट् स्वाहा। इस मन्त्रसे उस परमशक्ति को पूर्वोक्त परमात्मा में मिलाकर, केवल शरीरके वामकक्षमें पापपुरुषका चिन्तन करे—

यथा—वामकुक्षौस्थितं पाप पुरुषं कज्जलप्रभम्॥
ब्रह्महत्याशिरस्कंच स्वर्णस्तेय भुजद्वयम्॥
सुरापान हृदायुक्तं गुरुतल्प कटिद्वयम्।
तत्संसर्गिपदद्वन्द्व मङ्गप्रत्यङ्ग पातकम्॥
उपपातकरोमाणां रक्तश्मश्रुविलोचनम्।
खड्गचक्रधरं क्रुद्धं पापंकुक्षौ विचिन्तयेत्॥

ब्रह्महत्या जिसके शिर हैं, स्वर्णस्तेय (सोनेकी चोरी) जिसकी दोनों भुजा हैं, सुरापान जिसके हृदय हैं, गुरुशय्या जिसके कटि-द्वय हैं, और गुरुशय्याका संसर्ग जिसके दोनों पैर हैं और पाप ही जिसके सब अङ्ग-प्रत्यङ्ग हैं, उपपातक जिसके रोमजाल हैं, खून जिसके मूछ और नेत्र हैं और जो खड्ग तथा चक्रको धारण करता है, जिसके वर्ण काजलके समान काले हैं और जो बाम-उदरमें स्थित है ऐसे पापपुरुषका चिन्तनकर नासिकाके बायें छिद्रमें से यं बीजके साथ वायुको पूर्ण करता हुआ नाभिमें वर्त-मान षट्कोणाकार वायु मण्डलमें संयुक्तकर, वहां कृष्णवर्ण यं इस वायुबीजको चिन्तन करके कुंभकसे य इस वायुबीजका आवर्तन (लोटाना) कर उसमें उत्पन्न महावायुसे अपने शरीरमें वर्तमान पापपुरुषको शुद्धकर वायुका दक्षिण नासिकासे विरेचनकर, पुनः दाहिने नाकमें रं बीजके साथ वायुको पूर्णकर मूलाधारमें मिला-कर तत्रस्थ वह्निमण्डलमें रं इस वह्निबीजको जो रक्तवर्ण है उसका चिन्तनकर कुम्भकसे रं बीजका आवर्तन करता हुआ, वहां पर उत्पन्न महावह्निसे अपने देहस्थ पापपुरुषको जलाकर, राखके

साथ पापपुरुषको वायु द्वारा वाम नासिकासे विरेचनकर पुनः बाम नासिकासे वं बीजके साथ वायुको पूर्णकर ब्रह्मरन्ध्रमें मिलाकर वहाँ वर्तमान चैतन्यमय चन्द्रमण्डलमें शुक्लवर्ण वं इस अमृत बीजको चिन्तनकर कुम्भकसे उस वं बीजको चलावे, अब वहाँ वर्तमान अमृतधारासे अपने शरीरमें भस्म लगा लिया ऐसी भावना करके उस वायुको दक्षिण नासिका द्वारा लं बीजसे वायु पूर्णकर मूलाधारस्थ पृथ्वीमण्डलमें उसे मिलाकर वहाँ पीतवर्ण लं इस पृथ्वीबीजको चिन्तनकर कुम्भकसे लं बीजको घुमाते हुए उसके घुमानेसे उत्पन्न हुए तेजसे भस्मको इकट्ठा करके उस वायुको बाम नासिकासे रेचनक्रिया द्वारा निकालकर, फिर बाम नासिकासे चमकते हुए बालरविके समान वर्णवाले जो ह्रीं कार हैं उसे ही मायाबीज कहते हैं, वह है ह्रीं कार, उसके द्वारा वायुको पूर्णकर मूलाधारस्थ बिन्दुके मध्यमें वर्तमान पूर्वोक्त मायाबीजका चिन्तनकर, कुम्भकसे मायाबीजको घुमाते हुए, उससे हाथ, पैर और शरीरके सम्पूर्ण अङ्गोंमें मानो स्पन्दन हो रहा है ऐसा जानकर उस वायुका दाहिनी नासिकासे विरेचन कर देवे, इस प्रकार स्थूल शरीरको शुद्धकर सूक्ष्म शरीरको शुद्ध करे।

यथा—पहले जो सहस्रकमलमें परमात्मा बतलाये गये हैं, उनसे ही सारी दुनियाकी रचनाको स्फुरणा हुई है, परब्रह्मकी इच्छारूपी परमशक्ति ॐ ह्रीं नमः परमात्मा से अर्थात् सहस्रारसे अपने स्थानमें लाकर, तब प्रणवसे नादशक्ति और बिन्दुशक्तिका सृजनकर, बिन्दुशक्तिसे सारे जगतके सृष्टिकी कारण भूमिका

कुण्डलिनीको जागृतकर, तब ॐ हँ सदाशिवाया काशाधिपतये अतीता कलात्मने नमः। इस मन्त्रसे प्राणशक्ति शान्त्यातीत सदाशिव आकाशसे रचना करना, वचन शब्दको आकाशके स्थानमें स्थापित करे। तब आकाशमण्डलसे ॐ ह्रीं ईश्वराय वाय्वाधिपतये शान्तिकलात्मने नमः, इस मन्त्रसे आप्यायन करनेवाले शान्तिके ईश्वरकी रचनाकर उसका विषय जो स्पर्श है उसे उपस्थ वायुके स्थानमें स्थापना करे। ॐ ह्रीं रुद्राय तेजोधिपतये विद्या कलात्मने नमः। तब ॐ ह्रीं विष्णवे जलाधिपतये प्रतिष्ठाकलात्मने नमः। इस मन्त्रसे दानप्रतिष्ठा, विष्णुरूपा जल और रसना जिह्वा तथा उसका विषयरस दातव्यदान हाथ जलके स्थानमें स्थापना करे।

अनन्तर—ॐ ब्रह्मणे पृथिव्याधिपतये निवृत्ति कलात्मने नमः। इस मन्त्रसे ब्रह्म पृथिवी घ्राण गन्तव्य गमन क्रियासे पैर इन्द्रियको पृथ्वी स्थानमें स्थापित करे।

तब कुण्डलिनीको अपने स्थानमें स्थापितकर नादशक्ति, बिन्दुशक्ति, परमशक्तियोंके प्रगत्रसे अपने देहमें व्याप्त ऐसी भावना सोऽहं इस मन्त्रसे ब्रह्मरन्ध्रसे परमात्माके सकाशसे कुण्डलिनीको जीवात्मामें मिलाकर देवताके साथ आज्ञाचक्रमें उस २ वर्णके देवतोंको स्थापनकर, वहां से कुण्डलिनीका हृदयकमलमें लाकर जीवात्माके साथ मिलाकर कुण्डलिनीको सुषुम्नामार्गसे मणिपूर आदि चक्रोंमें तत् तत् वर्णादि देवताओंको स्थापित करता हुआ मूलाधारमें लाकर स्थापना करे।

तब अपने शरीरको ऐसा समझे कि अब इस शरीरके समस्त पाप दूर हो गये और यह शरीर तेजस्वरूप देवताके आराधन योग्य हो गया, ऐसा समझकर प्राणप्रतिष्ठा करे।

यथा—ॐ अस्य श्री प्राणप्रतिष्ठा मन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुशिवा ऋषयः ऋग् यजुः सामानि छन्दांसि परा प्राणशक्तिर्देवता आं बीजं ह्रीं शक्तिः क्रों कीलकम् मम श्री भुवनेश्वर्याङ्गत्वेन प्राणप्रतिष्ठार्थे विनियोगः। इस प्रकार अञ्जलि बद्धपूर्वक स्मरणकर विनियोग करके, न्यास करे।

यथा—शिरसि ब्रह्मविष्णु शिवेभ्यः ऋषिभ्यो नमः। मुखे ऋक् यजुः सामेभ्यः छन्दांसि नमः। हृदि परा प्राणशक्ति देवतायै नमः। गुह्ये आं बीजाये नमः। पादयोः ह्रीं शक्तये नमः। नाभौ क्रौं कीलकाय नमः। इस प्रकार न्यास करके मम प्राणप्रतिष्ठार्थे विनियोगः। यह कृताञ्जलि कहे। इति ऋष्यादिन्यासः।

अथ करन्यासः—ॐ आं ह्रीं क्रौं अं कं खं गं घं ङं आकाश वाय्वाग्निसलिल पृथिव्यात्मने आं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ आं ह्रीं क्रौं इं चं छं जं झं ञं शब्द स्पर्श रूप रस गन्धात्मने इं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ आं ह्रीं क्रौं उं टं ठं डं ढं णं श्रोत्रत्वक्-चक्षुर्जिह्वा घ्राणात्मने ऊं मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ आं ह्रीं क्रौं ऐं तं थं दं धं नं वाक्पाणिपादपायूपस्थात्मने ऐं अनामिकाभ्यां हूं। ॐ आं ह्रीं क्रौं ओं पं फं बं भं मं वचना दान विसर्गगमनानन्दात्मने औं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। ॐ अः यं रं लं वं शं षं सं हं

अः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। ॐ आं ह्रीं क्रौं अं पं फं वं भं मं आकाश वाय्वाग्नि सलिल पृथिव्यात्मने आं हृदयाय नमः। ॐ आं ह्रीं क्रौं इं चं छं जं झं ञं शब्दस्पर्श रूपरस गन्धात्मने ईं शिरसे स्वाहा। ॐ आं ह्रीं क्रौं उं टं ठं डं ढं णं श्रोत्रत्वक् चक्षुः जिह्वा घ्राणात्मने शिखायै ऊं शिखायै वषट्। ॐ आं ह्रीं क्रौं एं तं थं दं धं नं वाक्पाणि पादपायूपस्थात्मने ऐं कवचाय हूं। ॐ आं ह्रीं क्रौं ओं पं फं वं भं मं वचनादान विसर्गगमनानन्दात्मने औं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ आं ह्रीं क्रौं अं यं रं लं वं शं षं सं हं मनोबुद्ध्यहंकार चित्तात्मने अस्त्राय फट्। इति षडङ्गन्यासः।

ततो नाभ्यादि पादद्वयान्तरं आं नमः हृदयादिनाभ्यन्तम्। ह्रीं नमः मूर्द्धादि हृदयान्तम्। क्रौं नमः हृदयादि कमलमध्ये। यं त्वगात्मने नमः। पूर्वदले रं असृगात्मने नमः। पश्चिमदले लं मांसात्मने नमः। आग्नेयदले वं मेदमात्मने नमः। वायव्यदले शं अस्थ्यात्मने नमः। ईशानदले षं मज्जात्मने नमः। नैऋत्यदले सं शुक्रात्मने नमः। उत्तरदले हं प्राणात्मने नमः। दक्षिणदले लं जीवात्मने नमः। पुनः कर्णिकायां यं क्षं परमात्मने नमः। इस प्रकार न्यास करके ध्यान करे, यथा—

रक्ताब्धि पीतारुणपद्म संस्थां
पाशाङ्कुशाविक्षु शरासबाणाम्।
शूलं कपालं दधतीं कराब्जैः
रक्तां त्रिनेत्रां प्रणमामि देवीम्॥

: रक्त समुद्रमें पीत तथा अरुण कमलपर बैठी हुई, करकमलोंसे पाश, अङ्कुश, इक्षुधनुष और वाण—और शूल, कपालको धारण की हुई रक्तवर्णा त्रिनेत्रा देवीको मैं प्रणाम करता हूं।

पूर्वोक्त रीतिसे ध्यानकर हृदयमें हाथ रखके प्राणप्रतिष्ठा करे, यथा—

ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं ह्रौं हंसः सोहं मम प्राण इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं ह्रौं हंसः सोहं मम जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं ह्रौं हंसः सोहं मम सर्वेन्द्रियाणि इह स्थितानि। ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं ह्रौं हंसः मम वाङ्मन स्त्वक् चक्षुः श्रोत्र घ्राण प्राण इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

पूर्वोक्त प्राण प्रतिष्ठा मन्त्रोंको तीनवार जपके मेरा यह शरीर अब ज्योतिर्मय हो गया इस प्रकार ध्यान करके अपने मूल ऋष्यादिका स्मरण करे।

इस प्रकरणमें भूतशुद्धिका विषय जो, वर्णन किया गया है, उसका यह अभिप्राय है कि यह शरीर पञ्चभूतात्मक और अधम कहा गया है।

इसका कारण यह है कि इसमें पापपुरुषका निवास है। उस पापपुरुषको भूतशुद्धि क्रियासे भस्म करके, पुनः उस स्थानपर ज्योतिस्वरूप, पुण्यमय नवीनतम पावन पुरुषको स्थापना की गयी और प्राणप्रतिष्ठात्मक मन्त्रोंसे पुण्यपुरुषमें नवीन प्राण तथा

इन्द्रियोंका सञ्चार किया गया इसे ही तान्त्रिक क्रियामूलात्मक कायाकल्प कहते हैं।

पांचभौतिक अधम शरीर आहार, निद्रा, भय, मैथुन आदि सांसारिक कर्मोंका साधन बताया गया है और भूतशुद्धि द्वारा प्राप्त ज्योतिर्मय पावनतम शरीर ही देवताराधनके उपयुक्त प्रतिपादित है।

कारण देवता ज्योतिरूप हैं और यह भूतशुद्धि रहित शरीर ज्योतिहीन है। अतएव इस प्रकरणमें भूतशुद्धि बतलाई गयी है।

ऋष्यादि न्यास विधि, यथा—

ॐ अस्य श्री भुवनेश्वरी मन्त्र राजस्य श्री शक्ति ऋषिः गायत्री छन्दः श्री भुवनेश्वरी देवता हं बीजं इं शक्तिः ईकारः कीलकम् श्री धर्मार्थकाममोक्षार्थे न्यासे विनियोगः। इस प्रकार अञ्जलिबद्ध होकर, देवी भुवनेश्वरीको स्मरण करके न्यास करे।

यथा—श्रीशक्ति ऋषये नमः शिरसि। गायत्री छन्दसे नमः श्रीभुवनेश्वरी देवतायै नमः हृदि। हं बीजाय नमः गुह्ये। ईं शक्तये नमः पादयोः। रं कीलकाय नमः नाभौ। श्रीधर्मार्थकाममोक्षार्थे न्यासे विनियोगः सर्वाङ्गेषु। इस प्रकार न्यास करके—

पुनः न्यास करे, यथा—अस्य श्रीभुवनेश्वरी त्र्यक्षरादिमन्त्र राजस्य श्रीदक्षिणामूर्ति ऋषिः पंक्तिश्छन्दः श्रीभुवनेश्वरी देवता

ह्रीं बीजं श्रीं शक्तिः क्लीं कीलकम् श्रीचतुर्विध पुरुषार्थ साधने जपे विनियोगः। इस प्रकार अञ्जलिबद्ध स्मरणकर न्यास करे।

यथा—श्रीदक्षिणामूर्ति ऋषये नमः शिरसि। पंक्ति छन्दसे नमः मुखे। श्रीभुवनेश्वरी देवतायै नमः हृदि। ह्रीं बीजाय नमः गुह्ये। श्रीं शक्तये नमः पादयोः। क्लीं कीलकाय नमः नाभौ। चतुर्थविधपुरुषार्थसाधने जपे विनियोगः सर्वाङ्गेषु।

अथ करन्यासः। ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। ह्रैं अनामिकाभ्यां हूं। ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। इति करन्यासः।

अथ षडङ्गन्यासः। ह्रां हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रूं शिखायै वषट्। ह्रैं कवचाय हूं। ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रः अस्त्राय फट्। इस प्रकार मूल षडङ्गन्यास करके अन्तर्मातृका-न्यास करे।

यथा—इसमें मातृका प्राणायाम आगे करना चाहिये. इस प्राणायाम का प्रकार यह है—

अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः। इन वर्णोंसे पूरक प्राणायाम करे (पूरक प्राणायाम की विधि पहले बतायी जा चुकी है) कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं इन वर्णोंसे कुम्भक प्राणायाम करे— "कुम्भक की विधि भी पूर्व वर्णित क्रमसे जाननी चाहिये।"

तम यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं इन वर्णोंसे रेचक-प्राणायाम करे (रेचक प्राणायाम का भी विशदीकरण हो चुका है) इस प्रकार प्राणायामत्रय करके अन्तर्मातृका के ऋष्यादि का स्मरण करे।

यथा—ॐ अस्य श्रीअन्तर्मातृका न्यासस्य ब्रह्माऋषिः अव्यक्त गायत्रीछन्दः श्रीअन्तर्मातृका सरस्वती देवता हलो बीजानि स्वराः शक्तयः अव्यक्तं कीलकम् मम श्रीभुवनेश्वर्यङ्गत्वेन अन्तर्मातृका न्यासे विनियोगः। इस मन्त्रको पाठकर अञ्जलिबद्ध होकर न्यास करे।

यथा—ब्रह्मऋषये नमः शिरसि। अव्यक्त गायत्री छन्दसे नमः मुखे। श्रीअन्तर्मातृका सरस्वती देवतायै नमः हृदि। हलयो बीजेभ्यो नमः गुह्ये। स्वराः शक्तिभ्यो नमः पादयोः। अव्यक्त कीलकाय नमः नाभौ। मम श्रीभुवनेश्वर्यङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः इति सर्वाङ्गेषु। इति ऋष्यादिन्यासः।

अथ करन्यासः। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं कं ळं उं टं ळं आं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ळं इं चं ळं ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ उं टं ॐ ॐ मध्यमाभ्यां वषट्। ळं एं तं ळं ऐं अनामिकाभ्यां हुं। ळं ॐ पं ळं ओं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। ॐ अं यं ळं अः करतलकर-पृष्ठाभ्यां फट्। इति षडङ्गः।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं कं ळं आं हृदयाय नमः। ॐ इं चं ळं ईं शिरसे स्वाहा। ळं उं टं ळं ऊं शिखायै वषट्। ळं एं तं ळं ऐं

कवचाय हुं। ॐ ओं पं ॐ औं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ अं यं
अः अस्त्राय फट्। इति।

अथ ध्यानम्—व्योमाब्धौ रसनार्ण कर्णिक मध्यां
द्वन्द्वैः स्फुरत्केशरं
पत्रान्तर्गत पञ्चवक्त्र यश-
लादित्रिवर्णं क्रमात्।
आशा स्व त्रिपुलांतलांगलि-
युजा क्षोणी पुरेणावृतं
वर्णाब्जं शिरसिस्थितं विषगद
प्रध्वंसि मृत्युञ्जयम्।

पूर्वोक्त वर्णित वर्ण-कमलको शिरमें ध्यानकर—

मूलाधाराद्ध्वनिं श्रुत्वा प्रबुध्य सुप्त कुण्डलीम्।
ज्वलत्पावकसंकाशां सूक्ष्मतेजःस्वरूपिणीम्॥
मूलाधाराच्छिरः पद्मं संस्पृशन् विद्युदाकृतिम्।
तयास्पृष्ट शिरः पद्मादमृतौघस्वरूपिणीम्॥
निर्गतां मातृकावर्णां सुषुम्ना वर्त्मना तनुम्।
व्यापयित्वा स्थितान् नेवं ध्यात्वा प्रविन्यसेत्॥

प्रज्वलित अग्निके समान कान्तिमती सूक्ष्मतेजःस्वरूपिणी सोई हुई कुण्डलिनीको मूलाधारसे ध्वनि सुनके उसे जागृतकर बिजलीके समान आकृतिवाले शिरः पद्मको मूलाधारसे स्पर्श कराते हुए शिरः पद्मके स्पर्शसे अमृत राशिस्वरूप मातृकाव

उससे निकलकर सुषुम्नाके मार्गसे शरीरमें मानो व्याप्त हो गयी हैं, ऐसा ध्यान करके न्यास करे।

यथा—अं नमः आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं एं ऐं ओं औं अं अः नमः इति कण्ठे षोड़शदले ध्यानेन न्यसेत्। इस प्रकार कण्ठमें जो षोड़शदल कमल है उनके सोलहों दलमें अं से अः तक सोलहों स्वरवर्णोंका ध्यान करके न्यास करे अर्थात् सोलहों स्वरवर्णोंको उन पत्रोंमें रखे। इसके प्रत्येक वर्णमें नमः पद आना चाहिये।

अब कं नमः खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं नमः। इन वर्णोंको अनाहतचक्रके द्वादश दलोंका ध्यानकर न्यास करे। इसमें भी प्रत्येक वर्णमें नमः पदका प्रयोग करे।

डं नमः ढं णं तं थं दं धं नं पं फं नमः इन वर्णोंको नाभिके दशदल कमलमें न्यास करे। इन वर्णोंके साथ भी नमः पद युक्त करे। बं नमः भं मं यं रं लं नमः इति लिङ्गमूले षट्दले।

वं नमः शं नमः षं नमः सं नमः इन चार वर्णोंको मूलाधारके चतुर्दल में न्यास करे।

हं नमः क्षं नमः इन वर्णोंको भ्रूमध्यके द्विदलमें न्यास करे।

अब सृष्टिक्रमसे अन्तर्मातृका न्यास करे—

वं नमः शं नमः षं नमः सं नमः। इति मूलाधारे चतुर्दले।

बं भं मं यं रं लं प्रत्येकके साथ नमः कहता हुआ स्वाधिष्ठान-चक्रके षट्दल कमलमें न्यास करे।

डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं प्रत्येक में नमः कहता हुआ मणिपूरके दशदलोंमें न्यास करे।

कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं इन्होंमें प्रत्येक वर्णके साथ पृथक् नमः पद जोड़कर अनाहतचक्रके द्वादशदलोंमें न्यास करे।

अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः इन प्रत्येक वर्णको नमः पदसहित विशुद्धचक्रके सोलहों दलोंमें न्यास करे।

हं नमः क्षं नमः इन दोनों वर्णोंको आज्ञाचक्रके द्विदलमें न्यास करे। इति सृष्टिक्रमेणान्तर्मातृकान्यासः।

अथ स्थितिक्रमः। यथा—डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं सर्व नमः इति मणिपूरे नाभौ। बं नमः भं नमः मं नमः यं नमः रं नमः लं नमः इति स्वाधिष्ठाने लिङ्गमूले। वं नमः शं नमः षं नमः सं नमः इति मूलाधारे। हं नमः क्षं नमः इत्याज्ञाचक्रे। अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः इति प्रत्येक नमः पद सहितं विशुद्धौ कण्ठे। कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं प्रत्येक नमः सहितं अनाहते। इति स्थितिक्रमेणान्तर्मातृकान्यासः।

अथ संहारक्रमः। यथा—हं नमः क्षं नमः इत्याज्ञाचक्रे द्विदले। वं नमः शं नमः षं नमः सं नमः इति मूलाधारे चतुर्दले। बं नमः भं नमः मं नमः यं नमः रं नमः लं नमः इति स्वाधिष्ठाने षट्दले। डं नमः ढं नमः णं नमः तं नमः थं नमः

ढं नमः णं नमः तं नमः थं नमः दं नमः धं नमः नं नमः पं नमः फं नमः इति मणिपूरे दशदले। कं नमः खं नमः गं नमः घं नमः ङं नमः चं नमः छं नमः जं नमः झं नमः ञं नमः टं नमः ठं नमः इत्यनाहते द्वादशदले। अं नमः आं नमः इं नमः ईं नमः उं नमः ऊं नमः ऋं नमः ॠं नमः लृं नमः ॡं नमः एं नमः ऐं नमः ओं नमः औं नमः अं नमः अः नमः इति विशुद्धौ षोड़शदले। इति संहारक्रमान्त-मातृकान्यासः।

अथ बहिर्मातृकान्यासः। तत्र ऋष्यादिकमन्तर्मातृवद्।

ध्यानम्—ॐ पञ्चाशद्वर्णभेदैर्विहितवदनदोः
पादहृत्कुक्षि वक्षो।
देशां भास्वत्कपर्दां कलितशशिकला
मिन्दुकुन्दा वदाताम्॥
अक्षस्रक्कुम्भचिन्ता लिखितवरकरां
त्र्यक्षरां पद्म संस्था।
मच्छाकल्पामतुच्छस्तन जघनभरां
भारतीं तां नमामि॥

इस प्रकार ध्यान और मानसिक पूजन करके—

अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं ह्रीं इत्युच्चार्य स्वदेहे व्यापकं कृत्वा बहिर्मातृका न्यासं कुर्यात्।

यथा—तत्रादौ सारस्वतेन मार्गेण इत्युक्त रीत्यादौ संहारक्रम बहिर्मातृकान्यासो यथा—

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्षं परमात्मने नमः नाभ्यादि मूर्धान्तम्। ळं जीवात्मने नमः पादादि नाभ्यन्तम्। हं प्राणात्मने नमः हृदयादि वामपादान्तम्। शं शुक्रात्मने नमः हृदादिदक्ष पादान्तम्। षं मज्जात्मने नमः हृदादि वामकरान्तम्। सं अस्थ्यात्मने नमः हृदादि दक्षकरान्तम्। वं मेदसात्मने नमः वामांशे। लं मांसात्मने नमः ककुदि। रं असृगात्मने नमः दक्षांशे। यं त्वगात्मने नमः वक्षसि। मं नमः उदरे। भं नमः नाभौ। बं नमः पृष्ठे। फं नमः वामपार्श्वे। नं नमः वामपादाङ्गुल्यग्रेषु। धं नमः वामपादङ्गुलिषु। दं नमः वामगुल्फे। थं नमः जानुनि। तं नमः वामपादकक्षे। णं नमः दक्षपादाङ्गुल्यग्रेषु। ढं नमः दक्षपादाङ्गुलीषु। डं नमः दक्षगुल्फे। ठं नमः जानुनि। टं नमः दक्षपादकुक्षे। ञं नमः वामपाण्यङ्गुल्यग्रेषु। झं नमः वामपाण्यङ्गुलीषु। जं नमः वामपाणि मणिबन्धे। छं नमः वामकर्पूरे। चं नमः वामपाणिकुक्षे। ङं नमः दक्षपाण्यङ्गुल्यग्रेषु। घं नमः दक्षपाण्यङ्गुलीषु। गं नमः दक्षमणिबन्धे। खं नमः दक्षकर्पूरे। कं नमः दक्षपाणिकुक्षे। अः नमः मुखाभ्यन्तरे। अं नमः ललाटे। औं नमः अधोदन्तपङ्क्तौ। ओं नमः उर्ध्वदन्त पङ्क्तौ। ऐं नमः अधरे। एं नमः उर्ध्वोष्ठे। लॄं नमः वामगण्डे। लृं नमः दक्षगण्डे। ॠं नमः वामनासिके। ऋं नमः दक्षनासिके। ऊं नमः वामकर्णे। उं नमः दक्षकर्णे। ईं नमः वामनेत्रे। इं नमः

दक्षनेत्रे। आं नमः मुखवृत्ते। अं नमः शिरसि। इति संहार-क्रमेण मातृकान्यासः।

अथ सृष्टिक्रमेण बहिर्मातृकान्यासः। अं नमः शिरसि। आं नमः मुखवृत्ते। इं नमः दक्षनेत्रे। ईं नमः वामनेत्रे। उं नमः दक्षकर्णे। ऊं नमः वामकर्णे। ऋं नमः दक्षनासिके। ॠं नमः वामनासिके। ऌं नमः दक्षगण्डे। ॡं नमः वामगण्डे। एं नमः उर्ध्वोष्ठे। ऐं नमः अधरोष्ठे। ओं नमः उर्ध्वदन्तपङ्क्तौ। औं नमः अधोदन्तपङ्क्तौ। अं नमः ललाटे। अः नमः मुखाभ्यन्तरे। कं नमः दक्षपाणिकुक्षे। खं नमः कर्पूरे। गं नमः मणिबन्धे। घं नमः अङ्गुलिमूले। ङं नमः अङ्गुल्यग्रे। चं नमः वामपाणि-कुक्षे। छं नमः कर्पूरे। जं नमः मणिबन्धे। झं नमः अङ्गुलि-मूले। ञं नमः अङ्गुल्यग्रे। टं नमः दक्षपादकुक्षे। ठं नमः जानुनि। डं नमः गुल्फे। ढं नमः अङ्गुलिमूले। णं नमः अङ्गु-ल्यग्रे। तं नमः वामपादकुक्षे। थं नमः जानुनि। दं नमः गुल्फे। धं नमः अङ्गुलिमूले। नं नमः अङ्गुल्यग्रे। पं नमः दक्षपार्श्वे। फं नमः वामपार्श्वे। बं नमः पृष्ठे। भं नमः नाभौ। मं नमः उदरे। यं त्वगात्मने नमः हृदि। रं असृगात्मने नमः दक्षांसे। लं मांसात्मने नमः ककुदि। वं मेदसात्मने नमः वामांशे। शं अस्थ्यात्मने नमः हृदादिदक्ष पाण्यन्तम्। षं मज्जात्मने नमः हृदादिवामपाण्यन्तम्। सं शुक्रात्मने नमः हृदादिदक्षपादान्तम्। हं प्राणात्मने नमः हृदादिवामपादान्तम्। क्षं परमात्मने नमः नाभ्यादि मूर्धान्तम्। अं नमः शिरसि। आं नमः मुखवृत्ते। ई

नमः दक्षनेत्रे। ईं नमः वामनेत्रे। उं नमः दक्षकर्णे। ऊं नमः वामकर्णे। ऋं नमः दक्षनाशायाम्। ॠं नमः वामनाशायाम्। ऌं नमः दक्षगण्डे। ॡं नमः वामगण्डे। एं नमः ऊर्ध्वोष्ठे। ऐं नमः अधरोष्ठे। ओं नमः ऊर्ध्वदन्तपङ्क्तौ। औं नमः अधोदन्तपङ्क्तौ। अं नमः ललाटे। अः नमः मुखाभ्यन्तरे। कं नमः दक्षिणपाणिकुक्षे। खं नमः कूर्परे। गं नमः मणिबन्धे। घं नमः अंगुलिमूले। ङं नमः अंगुल्यग्रे। चं नमः वामपाणिकुक्षे। छं नमः कूर्परे। जं नमः मणिबन्धे। झं नमः अंगुलिमूले। ञं नमः अंगुल्यग्रे। टं नमः दक्षोरौ। ठं नमः जानुनि। इति स्थितिक्रमेण मातृकान्यासः। ततः समस्त मातृका स्व मूले चोच्चार्य त्रिव्यापिकं कुर्यात् एष एव मातृका न्यासः एष्वेवस्थानेषु न्यसेत्। इति व्यापक मातृका न्यासः।

अथ हृल्लेखादि मातृकान्यासः। ह्रीं अं नमः शिरसि इत्यादि ह्रीं क्षं नमः परमात्मने इत्यन्तम्। शुद्धमातृका स्थानेषु विन्यसेत्। इति हृल्लेखादि मातृकान्यासः।

अथ श्रीबीजादि मातृकान्यासः। श्रीं अं नमः इत्यादि क्षान्तं न्यसेत्। इति श्रीबीजादि मातृकान्यासः।

अथ कामबीजादि मातृकान्यासः। क्लीं अं नमः इत्यादि क्षान्तं न्यसेत्। इति कामबीजादि मातृकान्यासः।

अथ त्रिबीजादि मातृकान्यासः। यथा—ह्रीं श्रीं क्लीं नमः शिरसि इत्यादि क्षान्तं न्यसेत्। इति त्रिबीजादि मातृकान्यासः।

अथ हंसादि मातृकान्यासः। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं हंसः अं नमः शिरसि इति क्षान्तं न्यसेत्। इति हंसादि मातृकान्यासः।

अथ वाग्भवपुटित मातृकान्यासः। ऐं अं ऐं नमः इत्यादि क्षान्तं न्यसेत्। इति वाग्भवपुटित मातृकान्यासः।

अथ मायापुटित मातृकान्यासः। ह्रीं अं ह्रीं नमः शिरसि इत्यादि ह्रीं क्षं ह्रीं परमात्मने नमः इत्यन्तं न्यसेत्। इति माया-पुटित मातृकान्यासः।

अथ श्रीबीजपुटित मातृकान्यासः। श्रीं अं श्रीं नमः शिरसि इत्यादि क्षान्तं न्यसेत्। इति श्रीबीजपुटित मातृकान्यासः।

अथ तारापुटित मातृकान्यासः। ॐ अं ॐ नमः शिरसि इत्यादि क्षान्तं न्यसेत्। इति तारापुटित मातृकान्यासः।

अथ चतुस्तारपुटित मातृकान्यासः। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं श्रीं ह्रीं ऐं ॐ नमः शिरसि इत्यादि क्षान्तं न्यसेत्। इति चतुस्तारपुटित मातृकान्यासः।

अथ बालासंपुटित मातृकान्यासः। ऐं क्लीं सौंः अं सौंः क्लीं ऐं नमः शिरसि इत्यादि क्षान्तं न्यसेत्। इति बालासंपुटित मातृकान्यासः।

अथ परासम्पुटित मातृकान्यासः। सौंः अं सौंः नमः शिरसि इत्यादि क्षान्तं न्यसेत्। इति परासम्पुटित मातृकान्यासः।

अथ मूलविद्यासम्पुटित मातृकान्यासः। मूलविद्या मुच्चार्य अं पुनर्मूल विद्यामुच्चार्य नमः शिरसि इत्यादि क्षान्तं न्यसेत्। इति मूलविद्या सम्पुटित मातृकान्यासः।

अथ प्रणवोःकला मातृकान्यासः। ॐ अस्य श्रीप्रणवोःकला मातृकान्यासस्य प्रजापतिऋृषिः गायत्री छन्दः प्रणवोःकला मयी मातृकासरस्वती देवता मम श्रीभुवनेश्वर्यङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः इति कृताञ्जलिः स्मृत्वा न्यासं कुर्यात्। प्रजापति ऋृषये नमः शिरसि। गायत्री छन्दसे नमः मुखे। श्रीप्रणवोःकलामयी मातृका सरस्वती देवतायै नमः हृदि। मम श्रीभुवनेश्वर्यङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः सर्वाङ्गेषु। इति ऋृष्यादि न्यासः।

अथ करन्यासः। ॐ ऐं ह्रीं श्रीं अं ॐ आं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ इं ॐ ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ उं ॐ ऊं मध्यमाभ्यां वौषट्। ॐ एं ॐ ऐं अनामिकाभ्यां हुंम्। ॐ ओं ॐ औं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। ॐ अं ॐ अः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट। इति करन्यासः।

अथ षडङ्गः। ॐ अं ॐ आं हृदयाय नमः। ॐ इं ॐ ईं शिरसे स्वाहा। ॐ उं ॐ ऊं शिखायै वषट्। ॐ एं ॐ ऐं कवचाय हुंम्। ॐ ओं ॐ औं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ अं ॐ अः अस्त्राय फट्। इति षडङ्गः।

अथ ध्यानम्। हस्तैः पद्मं रथाङ्ग गुणमथ हरिणं
पुस्तकं वर्ण मालां।
टंकं शूलं कपालं दरममृतलस-
द्धेमकुम्भं वहन्तीम्॥

मुक्ता विद्रुत्पयोदस्फटिक तव-
जपावन्धुरैः पञ्चवक्त्रै।
स्त्र्यक्षैर्वक्षोजनम्रां सकल शशिनिभं
शारदं तं नमामि॥

(इति ध्यात्वा न्यसेत्)

यथा—ॐ ह्रीं श्रीं अं निवृत्यै नमः शिरसि। छं ॐ आं प्रतिष्ठायै नमः मुखवृत्ते। छं ॐ इं विद्यायै नमः दक्षनेत्रे। छं ॐ ईं इशान्त्यै नमः बामनेत्रे। छं ॐ उं इंधिकायै नमः दक्षकर्णे। छं ॐ ऊं दीपिकायै नमः बामकर्णे। छं ॐ ऋं रेचिकायै नमः दक्षनसि। छं ॐ ॠं मोचिकायै नमः बामनसि। छं ॐ लृं परायै नमः दक्षगण्डे। छं ॐ ॡं सूक्ष्मायै नमः बामगण्डे। छं ॐ एं सूक्ष्मामृतायै नमः उर्ध्वोष्ठे। छं ॐ ऐं ज्ञातात्मतायै नमः अधरे। छं ॐ ओं आप्यायिन्यै नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। छं ॐ औं व्यापित्यै नमः अधोदन्तपंक्तौ। छं ॐ अं व्योमरूपिण्यै नमः ललाटे। छं ॐ अः अनन्तायै नमः मुखाभ्यन्तरे। छं ॐ कं सृष्ट्यै नमः दक्षपाणिकक्षे। छं ॐ खं ऋद्ध्यै नमः कूर्परे। छं ॐ गं स्मृत्यै नमः मणिबन्धे। छं ॐ घं मेधायै नमः अंगुलिमूले। छं ॐ ङं कान्त्यै नमः अंगुल्यग्रे। छं ॐ चं लक्ष्म्यै नमः बाम-पाणिकक्षे। छं ॐ छं द्युत्यै नमः कूर्परे। छं ॐ जं स्थिरायै नमः मणिबन्धे। छं ॐ झं स्थित्यै नमः अंगुलिमूले। छं ॐ ञं सिद्ध्यै नमः अंगुल्यग्रे। छं ॐ टं जरायै नमः दक्षोरौ। छं ॐ

५

ठं पालिन्यै नमः जानुनि। छं ॐ डं शान्त्यै नमः गुल्फे। छं ॐ ढं ऐश्वर्यै नमः अंगुलिमूले। छं ॐ णं रत्यै नमः अंगुल्यग्रे। छं ॐ तं कामिकायै नमः वामोरौ। छं ॐ थं वरदायै नमः जानुनि। छं ॐ दं ह्लादिन्यै नमः गुल्फे। छं ॐ धं प्रीत्यै नमः अंगुलिमूले। छं ॐ नं दीर्घायै नमः अंगुल्यग्रे। छं ॐ पं तीक्ष्णायै नमः दक्षपार्श्वे। छं ॐ फं रौद्र्यै नमः वामपार्श्वे। छं ॐ बं भयायै नमः पृष्ठे। छं ॐ भं निद्रायै नमः नाभौ। छं ॐ मं तन्द्रायै नमः जठरे। छं ॐ यं क्षुधायै नमः हृदि। छं ॐ रं क्रोधिन्यै दक्षांशे। छं ॐ लं क्रियायै नमः ककुदि। छं ॐ वं उल्कायै नमः वामांशे। छं ॐ शं मृत्युरूपायै नमः हृदादिदक्ष पाण्यन्तम्। छं ॐ षं पीतायै नमः हृदादिवाम पाण्यन्तम्। छं ॐ सं श्वेतायै नमः हृदादिदक्ष पादान्तम्। छं ॐ हं अशनायै नमः हृदादिवाम पादान्तम्। छं ॐ ळं असितायै नमः पादादि नाभ्यन्तम्। छं ॐ क्षं अनन्तायै नमः नास्यादि मूर्धान्तम्। इति तारोकला मातृकान्यासः।

अथाष्टत्रिंशत्कला मातृकान्यासः। ॐ अस्य श्रीअष्टत्रिंशत्कलारूपिणी न्यासस्य सोमसूर्याग्निय ऋषयः अनुष्टुप्त्रिष्टुप्छन्दांसि अष्टात्रिंशत्कलारूपिणी मातृकादेवता श्रीभुवनेश्वर्यङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः इति कृताञ्जलिः स्मृत्वा न्यासं कुर्यात्। सोमसूर्याग्नि ऋषिभ्यो नमः शिरसि। अनुष्टुप्त्रिष्टुप्छन्दोभ्यो नमः मुखे। अष्टात्रिंशत्कलारूपिणी मातृकादेवतायै नमः हृदि। श्रीभुवनेश्वर्यङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः सर्वाङ्गेषु। इति ऋष्यादिकं कृत्वा शुद्ध-

मातृकादेवकरषड्ङ्गन्यास ध्यानान्विधाय न्यासं कुर्यात्। ॐ अं अमृतायै नमः शिरसि। ॐ आं आनन्दायै नमः मुखवृत्ते। ॐ इं पूषायै नमः दक्षनेत्रे। ॐ ईं तुष्ट्यै नमः वामनेत्रे। ॐ उं पुष्ट्यै नमः दक्षकर्णे। ॐ ऊं रत्यै नमः वामकर्णे। ॐ ऋं धृत्यै नमः दक्षनासि। ॐ ॠं शशिन्यै नमः वामनासि। ॐ ऌं चन्द्रिकायै नमः दक्षगण्डे। ॐ ॡं कान्त्यै नमः वामगण्डे। ॐ एं ज्योत्स्नायै नमः ऊर्ध्वोष्ठे। ॐ ऐं श्रियै नमः अधरे। ॐ ओं प्रीत्यै नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। ॐ औं अङ्गदाय नमः अधोदन्तपंक्तौ। ॐ अं पूर्णायै नमः ललाटे। ॐ अः पूर्णामृतायै नमः मुखाभ्यन्तरे। ॐ कं भं तपिन्यै नमः दक्षपाणिकक्षे। ॐ खं बं तापिन्यै नमः कूर्परे। ॐ गं फं धूम्रायै नमः मणिबन्धे। ॐ घं पं मरिच्यै नमः अंगुलिमूले। ॐ ङं नं ज्वलिन्यै नमः अंगुल्यग्रे। ॐ चं धं रुच्यै नमः वामपाणिकक्षे। ॐ छं दं सुषुम्नायै नमः कूर्परे। ॐ जं थं भोगदायै नमः मणिबन्धे। ॐ झं तं विश्वायै नमः अंगुलिमूले। ॐ ञं णं बोधिन्यै नमः अंगुल्यग्रे। ॐ टं ढं धारिण्यै नमः दक्षोरौ। ॐ ठं डं क्षमायै नमः जानुनि। ॐ यं धूम्रार्चिषे नमः गुल्फे। ॐ रं ऊष्मायै नमः अंगुलिमूले। ॐ लं ज्वलिन्यै नमः अंगुल्यग्रे। ॐ वं ज्वालिन्यै नमः वामोरौ। ॐ शं विस्फुलिङ्गिन्यै नमः जानुनि। ॐ षं सुश्रियै नमः गुल्फे। ॐ सं स्वरूपायै नमः अंगुलिमूले। ॐ हं कपिलायै नमः अंगुल्यग्रे। ॐ ळं हव्यवाहायै नमः मूर्ध्नि। ॐ क्षं कव्यवाहायै नमः सर्वाङ्गेषु। इत्यष्टात्रिंशत्कला मातृकान्यासः।

अथ मूर्ति मातृकान्यासः। तत्रादौ केशवादि मातृकान्यासस्य साध्यनारायण ऋषिः गायत्रीछन्दः श्रीलक्ष्मीनारायणो देवता मम श्रीभुवनेश्वर्यङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः। इति कृताञ्जलिः स्वस्था न्यसेत्। साध्य नारायण ऋषये नमः शिरसि। गायत्री छन्दसे नमः मुखे। श्रीलक्ष्मीनारायणो देवता हृदि मम श्रीभुवनेश्वर्यङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः सर्वाङ्गेषु। इति ऋष्यादि न्यासः।

अथ करन्यासः। ॐ नमोनारायणाय हंसः सोहं अं कं थं आं ह्रीं हंसः सोहं ॐ नमोनारायणाय शुद्धोल्काय स्वाहा श्रीदेव्यै अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ श्रीं ॐ नमोनारायण हंसः सोहं इं चं थं इं ह्रीं हंसः सोहं ॐ नमोनारायणाय शुद्धोल्काय स्वाहा श्रीपद्मिन्यै तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ श्रीं ॐ नमोनारायणाय हंसः सोहं उं टं थं उं ह्रीं हंसः सोहं ॐ नमोनारायणाय वीरोल्काय स्वाहा श्रीविष्णुपत्न्यै मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ श्रीं ॐ नमोनारायणाय हंसः सोहं एं तं थं एं ह्रीं हंसः सोहं ॐ नमोनारायणाय विद्युदुल्काय स्वाहा श्रीवरदायै अनामिकाभ्यां हुं। ॐ श्रीं ॐ नमोनारायणाय हंसः सोहं ॐ पं थं ॐ ह्रीं हंसः सोहं ॐ नमोनारायणाय सहस्रोल्काय स्वाहा श्रीकमलरूपायै कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। ॐ श्रीं ॐ नमोनारायणाय हंसः सोहं अं यं थं अं ह्रीं हंसः सोहं ॐ नमोनारायणाय अनन्तोल्काय स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। इति करन्यासः।

इत्थंक्रमेण षडङ्गन्यासं कुर्यात्। ध्यानम्—विद्याबिन्द मुकुरामृत कुम्भ पद्मको मोदकीदरसुदर्शन शोभि हस्तम्। सौदामिनी

मुद्रकान्ति विभाति लक्ष्मीनारायणात्मकमखण्डित मात्ममूर्तः। वपुरिति शेषः। इति ध्यात्वा न्यसेत्। तद्यथा—

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अं क्लीं श्रीं ह्रीं केशवाय कीर्त्यै नमः शिरसि। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं आं क्लीं श्रीं ह्रीं नारायणाय कान्त्यै नमः मुखवृत्ते। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं इं क्लीं श्रीं ह्रीं माधवाय तुष्ट्यै नमः दक्षनेत्रे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ईं क्लीं श्रीं ह्रीं गोविन्दाय पुष्ट्यै नमः वामनेत्रे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं उं क्लीं श्रीं ह्रीं विष्णवे धृत्यै नमः दक्षकर्णे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऊं क्लीं श्रीं ह्रीं मधुसूदनाय शान्त्यै नमः वामकर्णे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऋं क्लीं श्रीं ह्रीं विक्रमाय क्रियायै नमः दक्षनासायाम्। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ॠं क्लीं श्रीं ह्रीं वामनाय दयायै नमः वामनासायाम्। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऌं क्लीं श्रीं ह्रीं श्रीधराय मेधायै नमः दक्षगण्डे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ॡं क्लीं श्रीं ह्रीं हृषीकेशाय सहर्षाय नमः वामगण्डे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं एं क्लीं श्रीं ह्रीं पद्मनाभाय शुद्धायै नमः उर्ध्वोष्ठे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं क्लीं श्रीं ह्रीं दामोदराय लज्जायै नमः अधरे। ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ओं क्लीं श्रीं ह्रीं वासुदेवाय लक्ष्म्यै नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। ॐ ईं औं ईं संकर्षणाय सरस्वत्यै नमः अधोदन्तपंक्तौ। ॐ ईं अं ईं प्रद्युम्नाय प्रीत्यै नमः ललाटे। ॐ ईं अः ईं अनिरुद्धाय रत्यै नमः मुखाभ्यन्तरे। ॐ ईं कं ईं चक्रिणे जयायै नमः दक्षपाणिकक्षे। ॐ ईं खं ईं गदिने दुर्गायै नमः कूर्परे। ॐ ईं गं ईं शार्ङ्गिणे प्रभायै नमः मणिबन्धे। ॐ ईं घं ईं खड्गिने सत्यायै नमः अंगुलिमूले। ॐ ईं ङं ईं शंखिने चण्डायै नमः अंगुल्यग्रे। ॐ ईं चं ईं हलिन्यै वरायै नमः वामपाणिकक्षे। ॐ ईं छं ईं मुशलिने विलासिन्यै

नमः कूर्परे। ॐ इं जं इं विजयै शूलिन्यै नमः मणिबन्धे। ॐ इं झं इं पाशिने विरजायै नमः अंगुलिमूले। ॐ इं ञं इं अङ्कुशिने विश्वायै नमः अंगुल्यग्रे। ॐ इं टं इं मुकुन्दाय विनतायै नमः दक्षोरौ। ॐ इं ठं इं नन्दजाय सुनन्दनायै नमः जानुनि। ॐ इं डं इं नन्दिने स्मृत्यै नमः गुल्फे। ॐ इं ढं इं नरा बुद्ध्यै नमः अंगुलिमूले। ॐ इं णं इं नरकजिते समृद्ध्यै नमः अंगुल्यग्रे। ॐ इं तं इं हरये शुद्ध्यै नमः वामोरौ। ॐ इं थं इं कृष्णाय मुक्त्यै नमः जानुनि। ॐ इं दं इं सत्याय बुद्धये नमः गुल्फे। ॐ इं धं इं सात्वताय सत्यै नमः अंगुलिमूले। ॐ इं नं इं शौरये क्षमायै नमः अंगुल्यग्रे। ॐ इं पं इं शूराय रमायै यक्षपार्श्वे। ॐ इं फं इं जनार्दन उमायै नमः वामपार्श्वे। ॐ इं बं इं धराय क्लेदिन्यै नमः पृष्ठे। ॐ इं भं इं विश्वमूर्तये क्लिन्नायै नमः नाभौ। ॐ इं मं इं वैकुण्ठाय स्वधायै नमः उदरे। ॐ इं यं इं त्वगात्मने पुरुषोत्तमाय स्वधायै नमः हृदि। ॐ इं रं इं अमृतात्मने बलिने परायै नमः दक्षांशे। ॐ इं लं इं मांसात्मनेबलानुजाय परायणायै नमः ककुदि। ॐ इं वं इं मेदात्मनेबलाय सूक्ष्मायै नमः वामांशे। ॐ इं शं इं अस्थ्यात्मने वृषघ्नाय सन्ध्यायै नमः हृदादिदक्षपारायन्तम्। ॐ इं षं इं मज्जात्मने वृषाय सन्ध्यायै नमः हृदादिवामपारायन्तम्। ॐ इं सं इं शुक्रात्मने हंसाय प्रभायै नमः हृदादि दक्षपादान्तम्। ॐ इं हं इं प्राणात्मने बराहाय निशायै नमः हृदादि वामपादान्तम्। ॐ इं ळं इं शक्त्यात्मने विमलाय मेधायै नमः पादादिनाभ्यन्तम्। ॐ इं क्षं इं परमात्मने नृसिंहाय विद्यु-

न्ताय नमः नाभ्यादि मूर्धान्तम्। इति केशवादि मातृकान्यासः।

अथ श्रीकण्ठादि मातृकान्यासः। ॐ अस्य श्रीकण्ठादि मातृकान्यासस्य श्रीदक्षिणामूर्तिऋृषिः गायत्रीछन्दः श्रीअर्धनारीश्वरोदेवता श्रीभुवनेश्वर्यङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः इति ऋृष्यादिकं स्मृत्वा न्यसेत्। यथा—श्रीभुवना मूर्ति ऋृषये नमः शिरसि। गायत्री छन्दसे नमः मुखे। श्रीअर्धनारीश्वरोदेवतायै नमः हृदि। श्रीभुवनेश्वर्यङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः सर्वाङ्गेषु। इति ऋृष्यादिन्यासः।

अथ करन्यासः। ॐ अं कं ॐ आं ह्स्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ इं चं ॐ ईं ह्स्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ उं टं ॐ ऊं ह्स्रूं मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ एं तं ॐ ऐं ह्स्रैं अनामिकाभ्यां हुंम्। ॐ ओं पं ॐ औं ह्स्रौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। ॐ अं यं ॐ अः ह्स्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। इति करन्यासः।

अथ खड्ङ्गन्यासः। ॐ अं कं ॐ आं ह्स्रां हृदयाय नमः। ॐ इं चं ॐ ईं ह्स्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ उं टं ॐ ऊं ह्स्रूं शिखायै वषट्। ॐ एं तं ॐ ऐं ह्स्रैं कवचाय हुम्। ॐ ओं पं ॐ औं ह्स्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ अं यं ॐ अं ह्स्रं अस्त्राय फट्। इति षड्ङ्गः।

अथ ध्यानम्—बन्धूककाञ्चननिभां रुचिराक्षमालां
पाशाङ्कुशौ च वरदां निजबाहुदण्डैः
बिभ्राणमिन्दुसकला भरणां त्रिनेत्रा
मर्धाम्बिकेशमनिशं वपुराश्रयामः॥

इति ध्यात्वा न्यसेत्। ॐ ह्स्रौंः अं श्रीकण्ठाय पूर्णोदर्यै नमः शिरसि। ॐ ह्स्रौंः आं अनन्तेशाय विरजायै नमः मुखवृत्ते। ॐ ह्स्रौंः इं सूक्ष्मेशाय शल्मल्यै नमः दक्षनेत्रे। ॐ ह्स्रौंः ईं त्रिमूर्तशाय लोलाक्ष्यै नमः वामनेत्रे। ॐ ह्स्रौंः उं अमरेशाय वर्तुलाक्ष्यै दक्षकर्णे। ॐ ह्स्रौंः ऊं आर्घेशाय दीर्घघोणायै नमः वामकर्णे। ॐ ह्स्रौंः ऋं भारभूतेशाय दीर्घमुख्यै नमः दक्षनसि। ॐ ह्स्रौंः ॠं तिथीशाय गोमुख्यै नमः वामनसि। ॐ ह्स्रौंः ऌं स्थाणुकेशाय दीर्घजिह्वायै नमः दक्षगण्डे। ॐ ह्स्रौंः ॡं हरेशाय कुण्डोदर्यै नमः वामगण्डे। ॐ ह्स्रौंः एं झिण्डीशाय ऊर्ध्वकेश्यै नमः ऊर्ध्वोष्ठे। ॐ ह्स्रौंः ऐं भौतिकेशाय विकृतमुख्यै नमः अधरे। ॐ ह्स्रौंः ओं सद्योजातेशाय ज्वालामुख्यै नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। ॐ ह्स्रौंः औं अनुग्रहेशाय उल्कामुख्यै नमः अधोदन्तपंक्तौ। ॐ ह्स्रौंः अं अक्रूरेशाय श्रीमुख्यै नमः ललाटे। ॐ ह्स्रौंः अः महासेनेशाय विद्यामुख्यै नमः मुखाभ्यन्तरे। ॐ ह्स्रौंः कं क्रोधेशाय महाकाल्यै नमः दक्षपाणिकक्षे। ॐ ह्स्रौंः खं चण्डेशाय सरस्वत्यै नमः कूर्परे। ॐ ह्स्रौंः गं पञ्चान्तकेशाय सर्वसिद्धिदायै नमः मणिबन्धे। ॐ ह्स्रौंः घं शिवोत्तमेशाय त्रैलोक्यविद्यायै नमः अंगुलिमूले। ॐ ह्स्रौंः ङं एकरुद्रेशाय मन्त्रशक्त्यै नमः अंगुल्यग्रे। ॐ ह्स्रौंः चं कूर्मेशायात्म शक्त्यै नमः वामपाणिकक्षे। ॐ ह्स्रौंः छं एकनेत्रेशाय भूतमात्रे नमः कूर्परे। ॐ ह्स्रौंः जं चतुराननेशाय लम्बोदर्यै नमः मणिबन्धे। ॐ ह्स्रौंः झं अजेशाय द्राविण्यै नमः अंगुलिमूले। ॐ ह्स्रौंः ञं सर्वेशाय नागर्यै नमः अंगुल्यग्रे। ॐ ह्स्रौंः टं

सोमेशाय खेचर्यै नमः दक्षोरौ। ॐ ह्स्रौंः ठं लाङ्गलीशाय मखर्यै नमः जानुनि। ॐ ह्स्रौंः डं दारुणेशाय रूपिण्यै नमः गुल्फे। ॐ ह्स्रौंः ढं अर्धनारीश्वराय वीरिण्यै नमः अंगुलिमूले। ॐ ह्स्रौंः णं उमाकान्तेशाय काकोदर्यै नमः अंगुल्यग्रे। ॐ ह्स्रौंः तं आषाढीशाय पूतनायै वामोरौ। ॐ ह्स्रौंः थं दण्डीशाय भद्रकाल्यै नमः जानुनि। ॐ ह्स्रौंः दं अत्रीशाय योगिन्यै नमः गुल्फे। ॐ ह्स्रौंः धं मीनेशाय शंखिन्यै नमः अंगुलिमूले। ॐ ह्स्रौंः नं मेषेशाय मनन्यै नमः अंगुल्यग्रे। ॐ ह्स्रौंः पं लोहितेशाय कालरात्र्यै नमः दक्षपार्श्वे। ॐ ह्स्रौंः फं शिखीशाय कुब्जिन्यै नमः वामपार्श्वे। ॐ ह्स्रौंः बं छागलंडेशाय कपर्दिन्यै नमः पृष्ठे। ॐ ह्स्रौंः भं द्विरंडेशाय वज्रायै नमः नाभौ। ॐ ह्स्रौंः मं महाकालेशाय जयायै नमः उदरे। ॐ ह्स्रौंः यं त्वगात्मनेबालीशाय मुख्यै नमः हृदि। ॐ ह्स्रौंः रं असृगात्मनेभुजंगेशाय रेवत्यै नमः दक्षांशे। ॐ ह्स्रौंः लं मांसात्मनेपिनाकेशाय माधव्यै नमः वामांशे। ॐ ह्स्रौंः वं मेदसात्मनेखड्गेशाय वारुण्यै नमः ककुदि। ॐ ह्स्रौंः शं अस्थ्यात्मनेकचेशाय वायव्यै नमः हृदादिदक्षपाण्यन्तम्। ॐ ह्स्रौंः षं मज्जात्मनेश्वेतेशाय रक्षोविदारिण्यै नमः हृदादिवामपाण्यन्तम्। ॐ ह्स्रौं सं शुक्रात्मनेभृग्वीशाय सहजायै नमः हृदादिदक्षपादान्तम्। ॐ ह्स्रौंः हं प्राणात्मनेनकुलेशाय महालक्ष्म्यै नमः हृदादिवामपादान्तम्। ॐ ह्स्रौंः ळं शक्त्यात्मनेशिवेशाय व्यापिन्यै नमः पादादिनाभ्यन्तम्। ॐ ह्स्रौंः क्षं परमात्मनेसंवर्तेशाय महामायायै नमः नाभ्यादिमूर्धान्तम्। इति श्रीकण्ठादिन्यासः।

अथ पूर्वषोढान्यासः। ॐ अस्य श्रीषोढान्यासस्य श्रीदक्षिणामूर्ति ऋषिः पंक्तिश्छन्दः श्रीमातृकात्रिपुरसुन्दरी देवता ऐं बीजं सौः शक्तिः क्लीं कीलकं श्रीभुवनेश्वर्यङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः इति कृताञ्जलिः स्मृत्वा न्यसेत्। यथा—श्रीदक्षिणामूर्तिऋषये नमः शिरसि। पंक्तिश्छन्दसे नमः मुखे। श्रीमातृका त्रिपुरसुन्दरी देवतायै नमः हृदि। ऐं बीजाय नमः गुह्ये। सौः शक्तये नमः पादयोः। क्लीं कीलकाय नमः नाभौ। श्रीभुवनेश्वर्यङ्गत्वेन न्यासे विनियोगः सर्वाङ्गेषु। इति ऋष्यादिन्यासः।

अथ करन्यासः। ॐ अं कं ॐ आं ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ इं चं ॐ ईं क्लीं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ॐ उं टं ॐ ऊं सौः मध्यमाभ्यां वषट्। ॐ एं तं ॐ ऐं अनामिकाभ्यां हुंम। ॐ ओं पं ॐ औं क्लीं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। ॐ अं यं ॐ अः सौः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। इति करन्यासः।

अथ षडङ्गः। ॐ अं कं ॐ आं ऐं हृदयाय नमः। ॐ इं चं ॐ ईं क्लीं शिरसे स्वाहा। ॐ उं टं ॐ ऊं सौः शिखायै वषट्। ॐ एं तं ॐ ऐं कवचाय हुंम्। ॐ ओं पं ॐ औं क्लीं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ अं यं ॐ अः सौः अस्त्राय फट्। इति षडङ्गन्यासः।

अथ ध्यानम्—उद्यत्सूर्य सहस्राभां पीनोन्नतपयोधराम्।
रक्तमाल्याम्बरालेप रक्तभूषणभूषिताम्॥
पाशाङ्कुशधनुर्बाण भास्वत्पाणिचतुष्टयम्।
लसन्नेत्रत्रयां स्वर्ण मुकुटोद्भासि चन्द्रिकाम्॥

गणेश ग्रह नक्षत्रं योगिनी राशि रूपिणीम्।
देवीं पीठमयीं ध्यायेन्मातृकां सुन्दरीम्पराम्॥

इति ध्यात्वा—परानन्दोद्यतां समस्तृष्टि रूपेण।

तरुणादित्य सङ्काशां गजवक्त्रां त्रिलोचनाम्।
पाशाङ्कुशवराभीतिकरां शक्ति समन्विताम्॥
तास्तु सिन्दूर वर्णाभाः सर्वालङ्कार शोभिताः।
एक हस्ते धृताम्भोजा इतरालिङ्गितप्रियाः॥

इति ध्यात्वा न्यसेत्। ॐ अं गं विघ्नेश्वराय श्रियै नमः शिरसि। ॐ आं गं विघ्नराजाय ह्रियै नमः मुखवृत्ते। ॐ इं गं विनायकाय तुष्ट्यै नमः दक्षनेत्रे। ॐ ईं गं शिवोत्तमाय शान्त्यै नमः वामनेत्रे। ॐ उं गं विघ्नहृते पुष्ट्यै नमः दक्षकर्णे। ॐ ऊं गं विघ्नहर्त्रे सरस्वत्यै नमः वामकर्णे। ॐ ऋं गं विघ्नराजे रत्यै नमः दक्षनसि। ॐ ॠं गं गणनाथाय मेधायै नमः वामनसि। ॐ ऌं गं एकदन्ताय कान्त्यै नमः दक्षगण्डे। ॐ ॡं गं द्विदन्ताय कामिन्यै नमः वामगण्डे। ॐ एं गं गजवक्त्राय मोहिन्यै नमः ऊर्ध्वोष्ठे। ॐ ऐं गं निरञ्जनाय जटायै नमः अधरे। ॐ ओं गं कपर्दिने तीव्रायै नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। ॐ औं गं दीर्घवक्त्राय ज्वालिन्यै नमः अधोदन्तपंक्तौ। ॐ अं गं शङ्कुकर्णाय नन्दायै नमः ललाटे। ॐ अः गं वृषभध्वजाय रसायै नमः आस्ये। ॐ कं गं गणनाथाय रूपिण्यै नमः दक्षबाहुमूले। ॐ खं गं गजेन्द्राय मुद्रायै नमः कूर्परे। ॐ गं गं शूर्पकर्णाय जयिन्यै नमः मणिबन्धे। ॐ घं गं त्रिनेत्राय

सत्यै नमः अंगुलिमूले। ॐ ङं गं लम्बोदराय विघ्नेशायै नमः अंगुल्यग्रे। ॐ चं गं महानादाय स्वरूपिण्यै वामबाहुमूले। ॐ छं गं चतुर्मूर्त्तये कामदायै नमः कूर्परे। ॐ जं गं सदाशिवाय मदविह्वलायै नमः मणिबन्धे। ॐ झं गं आमोदाय विकटायै नमः अंगुलिमूले। ॐ ञं गं दुर्मुखाय धूम्रायै नमः अंगुल्यग्रे। ॐ टं गं सुमुखाय भूत्यै नमः दक्षोरौ। ॐ ठं गं प्रमोदाय भूम्यै नमः जानुनि: ॐ डं गं एकपादाय रत्यै नमः गुल्फे। ॐ ढं गं द्विजिह्वाय रमायै नमः अंगुलिमूले। ॐ णं गं शूराय मानुष्यै नमः अंगुल्यग्रे। ॐ तं गं वीराय मकरध्वजायै नमः वामोरौ। ॐ थं गं वरामुखायविकलायै नमः जानुनि। ॐ दं गं वरदाय भ्रुकुट्यै नमः गुल्फे। ॐ धं गं वामदेवाय लज्जायै नमः अंगुलिमूले। ॐ नं गं वक्र तुण्डाय दीर्घ घोणायै नमः अंगुल्यग्रे। ॐ पं गं द्विरण्डाय धनुर्धरायै नमः दक्षपार्श्वे। ॐ फं गं सेनान्यै वासिन्यै नमः वामपार्श्वे। ॐ बं गं ग्रामन्यैरात्रे नमः पृष्ठे। ॐ भं गं भर्ताय चन्द्रिकायै नमः नाभौ। ॐ मं गं विमलाय शशिप्रभायै नमः उदरे। ॐ यं गं मत्तवाहनाय लोलाय नमः हृदि। ॐ रं गं जटिल चञ्चलाक्ष्यै नमः दशांशे। ॐ लं गं मुन्डिन्यै ऋद्ध्यै नमः ककुदि। ॐ वं गं खड्गिने दुर्भगायै नमः वामांशे। ॐ शं गं वरेण्याय शुभगायै नमः हृदादिदक्षपाण्यन्तम्। ॐ षं गं वृषकेतवे शिवायै नमः हृदादि वामपाण्यन्तम्। ॐ सं गं गणपतये कालजिह्वायै नमः पादादिनाभ्यन्तम्। ॐ क्षं गं गणेशाय विघ्नहारिण्यै नमः नभ्यादि मूर्धान्तम्। इति गणेशन्यासः।

अथ ग्रहन्यासः। ध्यानम्। रक्तं श्वेतं तथारक्तं श्यामं पीतं च पाण्डुरम् धूम्रं कृष्णं कृष्णं धूम्रं धूमं धूम्रं विचिन्तयेत्। रवि मुख्यान्कामदातॄन्सर्वाभरणभूषितान्। वामोरून्यास्त हस्तांश्च दक्षहस्तवरप्रदान्। शक्त्योऽपि तथा ध्येया वराभयकराम्बुजाः। स्वस्वप्रियाङ्कनिलयाः सर्वाभूरणभूषिताः इति ध्यात्वा न्यसेत्। हृदयादधस्तात्। ॐ अं १५ सूर्याय रेणुकायै नमः भ्रूमध्ये। ॐ यं ॐ चन्द्रम्यामृतायै नमः नेत्रत्रयायै। ॐ कं ॐ मङ्गलाय धामाम्बायै नमः हृदयोपरि। ॐ चं ॐ बुधाय ज्ञानरूपाम्बायै नमः कण्ठे। ॐ टं ॐ बृहस्पतये यशस्विन्यम्बायै नमः हृदये। ॐ तं ॐ शुक्राय शाकम्बर्यम्बायै नमः नाभौ। ॐ पं ॐ शनैश्चराय शाकल्यम्बायै नमः मुखे। ॐ शं पं सं राहवे कृष्णाम्बायै नमः पादयोः। लं क्षं केतवे धूम्याम्बायै नमः सर्वाङ्गे। इति ग्रह-न्यासः।

अथ नक्षत्रन्यासः। ज्वलत्कालाग्निसंकाशाः वरदाभयपाणयः। नत पारायोश्विनीमुख्याः सर्वाभरण भूषिताः। इति ध्यात्वान्यसेत्। ललाटे ॐ अं आं अश्विन्यै नमः। दक्षनेत्रे इं ईं भरण्यै नमः। वामनेत्रे उं ऊं कृत्तिकायै नमः। दक्षकर्णे ऋं ॠं ऌं ॡं रोहिण्यै नमः। वामकर्णे एं मृगशिरायै नमः। दक्षनसि ऐं आर्द्रायै नमः। वामनसि ओं औं अं अः पुनर्वसये नमः। कण्ठे कं पुष्याय नमः। दक्षकन्धे खं गं आश्लेषायै नमः। वामकन्धे घं ङं मघ्यायै नमः। दक्ष कपोले चं पूर्वाफाल्गुन्यै नमः। वामकपोले छं जं उत्तराफाल्गुन्यै नमः। दक्षमणिबन्धे झं ञं हस्ताय नमः।

टं ठं चित्रायै नमः दक्षस्तने। डं स्वात्यै नमः। ढं णं विशाखाय नमः। तं थं दं अनुराधायै नमः दक्षकट्याम्। धं ज्येष्ठायै नमः वाम कट्याम्। पं फं मूलाय नमः दक्षोरौ। बं पूर्वाषाढ़ायै नमः वामोरौ। भं उत्तराषाढ़ायै नमः दक्षजानुनि। मं श्रवणाय नमः वाम जानुनि। यं रं धनिष्ठायै नमः दक्ष जंघायाम्। लं शतभिषायै नमः वाम जंघायाम्। वं शं पूर्वाभाद्रपदायै नमः दक्ष पादे। षं सं हं उत्तराभाद्रपदायै नमः वामपादे। वं लं क्षं अं अः रेवत्यै नमः। इति नक्षत्रन्यासः।

अथ योगिनीन्यासः। रक्तां श्यामां तथा कृष्णां पीतांज्योतिः स्वरूपिणीम् शुक्लवर्णां तथा सर्ववर्णां ध्यायेत्तु योगिनीम्। डाकिन्याद्यामायुधैः स्वैः स्वैः स्वैर्लक्ष्माणि पङ्कजात् इति ध्यात्वा। अं आं १६ डां डीं डमल वरयूं डाकिन्यै मां रक्ष रक्ष त्वगात्मने नमः कण्ठे। ॐ कं ५ चं ५ टं ठं रां रीं रमल वरयूं राकिण्यै मां रक्ष रक्ष असृगात्मने नमः हृदये। ॐ डं ढं णं तं ५ पं फं लां लीं लमल वरयूं लाकिन्यै मां रक्ष रक्ष मांसात्मने नमः नाभौ। ॐ बं भं मं यं रं लं कां कीं कमल वरयूं काकिन्यै मां रक्ष रक्ष मेदात्मने नमः स्वाधिष्ठाने। ॐ वं शं षं सं सां सीं समल वरयूं शाकिन्यै मां रक्ष रक्ष अस्थ्यात्मने नमः मूलाधारे। ॐ हं सः हां हीं हमल वरयूं हाकिन्यै मां रक्ष २ मज्जात्मने नमः भ्रूमध्ये। ॐ अं आं इत्यादि क्षान्तं यं यां यां यूं यें यौं यः यमल वरयूं याकिन्यै मां रक्ष रक्ष सर्वधात्वात्मने नमः ब्रह्मरन्ध्रे। इति योगिनी न्यासः।

अथ राशिन्यासः। रक्तं श्वेतं हरिद्वर्णं पांडुं चित्रं हरित्-स्मरेत्। पिशङ्गपिङ्गलौ बभ्रुकर्बुरौ सितधूम्रकौ। इति ध्यात्वा न्यसेत्। दक्षगुल्फे अं आं इं ईं मेषाय नमः दक्षजानुनि। उं ऊं वृषाय नमः दक्षवृषणे। ऋं ॠं ऌं ॡं मिथुनाय नमः दक्षकुक्षौ। एं ऐं कर्कटाय नमः दक्षस्कन्धे। ओं औं सिंहाय नमः दक्षशिरोभागे। अं अः शं षं सं हं कन्यायै नमः वामशिरोभागे। कं खं तुलाधराय नमः वामस्कन्धे। चं ५ वृश्चिकाय नमः दक्षस्कन्धे। टं ५ धनुषे नमः वामवृषणे। तं ५ मकराय नमः वामजानुनि। पं ५ कुम्भाय नमः वामगुल्फे। यं रं लं वं लं क्षं मीनाय नमः। इति राशिन्यासः।

अथ पीठन्यासः। सितासितारुण श्याम हरित्पीतान्यनुक्रमात् पुनः पुनः क्रमाद्देवि पञ्चाशत्स्थान सञ्चये॥ पीठानि संस्मरेद्विद्वान्सर्वकामार्थ सिद्धये॥ इति ध्यात्वा न्यसेत्। अं कामरू पीठाय नमः शिरसि। आं वाराणसी पीठाय नमः मुखवृत्ते। इं नेपाल पीठाय नमः दक्षनेत्रे। ईं पौंड्रवर्धन पीठाय नमः वामनेत्रे। उं पुरस्थिर पीठाय नमः दक्षकर्णे। ऊं कान्यकुब्ज पीठाय नमः वामकर्णे। ऋं पूर्णागिरी पीठाय नमः दक्षनासायां। ॠं अर्बुध पीठाय नमः वामनासायां। ऌं आम्रातकेश्वर पीठाय नमः दक्षगण्डे। ॡं एकाम्र पीठाय नमः वामगण्डे। एं त्रिस्रोत पीठाय नमः ऊर्ध्वोष्ठे। ऐं कामकोर पीठाय नमः अधरोष्ठे। ओं भृगुनगर पीठाय नमः ऊर्ध्वदन्तपंक्तौ। औं केदार पीठाय नमः अधोदन्तपंक्तौ। अं चन्द्रपुर पीठाय नमः ललाटे। अः श्री पीठाय नमः

मुखाभ्यन्तरे। कं श्रीपुर पीठाय नमः दक्षबाहुमूले। खं ॐकार पीठाय नमः कूर्परे। गं जालंधर पीठाय नमः मणिबन्धे। घं मालव पीठाय नमः अंगुलिषु। ङं कुलान्तक पीठाय नमः अंगुल्यग्रे। चं देवीकोट पीठाय नमः वामबाहुमूले। छं गोकर्ण पीठाय नमः कूर्परे। जं मारुतेश्वर पीठाय नमः मणिबन्धे। झं अट्टहास पीठाय नमः अंगुलीषु। ञं विराज पीठाय नमः अंगुल्यग्र षु। टं गजग्रह पीठाय नमः दक्षोरौ। ठं महापट पीठाय नमः अंगुलिमूले। णं कालेश्वर पीठाय नमः अंगुल्यग्रेषु। तं जपान्तक पीठाय नमः वामोरौ। थं जयनी पीठाय नमः जानुनि। दं चरित्रापुर पीठाय नमः गुल्फे। धं क्षीरिक पीठाय नमः अंगुलिमूले। नं हस्तिनापुर पीठाय नमः अंगुल्यग्रे। पं उडीश पीठाय नमः दक्षपार्श्वे। फं प्रयाग पीठाय नमः वामपार्श्वे। बं षष्ठीश पीठाय नमः पृष्ठे। भं मायापुर पीठाय नमः नाभौ। मं जलेश्वर पीठाय नमः जठरे। यं मलयगिरि पीठाय नमः हृदि। रं श्रीशैल पीठाय नमः दक्षांशे। लं मेरु पीठाय नमः ककुदि। वं गिरिवर पीठाय नमः वामांशे। शं महेन्द्रपुर पीठाय नमः हृदादिदक्षपाण्यन्तम्। षं वामनपुर पीठाय नमः हृदादिवामपाण्यन्तम्। सं हिरण्यपुर पीठाय नमः हृदादिदक्षपादान्तम्। हं महालक्ष्मीपुर पीठाय नमः हृदादिवामपादान्तम्। ळं तणंडान पीठाय नमः पादादिनाभ्यन्तम्। क्षं छायाछात्र पीठाय नमः नाभ्यादिमूर्धान्तम्। इति पीठन्यासः। इति लघुषोढान्यासः।

अथ महायोगिनी न्यासः। तत्र विशुद्धौ षोड़शदलकमले

ध्यानम्—रक्तां रक्त त्रिनेत्रां पशुजनभय कृच्छ्र लखड्गाङ्कहस्तां वामे खेटं दधानां चषकमपिसुरासूरितंचैकवक्त्रम्। अत्युग्रामुग्रदंष्ट्रा-मरिकुलमथनीं पायसान्ने प्रशक्तां कण्ठस्थानेमृतादेः परिवृता वपुषं भावये डाकिनींताम् इति ध्यात्वान्यसेत्। डां डीं डूं डैं डौं डः डमलवरयूं डाकिनी मां रक्षरक्ष ममत्वग्धातुं रक्षरक्ष सर्वसत्त्व-वषट्करि देवि आगच्छागच्छ इमां पूजां गृहगृह एं घोरे देवि ह्रीं सः परमघोरे हूं घोररूपे एहिएहि नमश्चामुन्डे डलरकसहैं श्रीभुवने-श्वरी देवि वरदे विश्वे अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः विशुद्ध पीठस्थे विशुद्ध डाकिनी विशुद्धनाथ देव श्री पा० पू० नमः इत्थमंगुष्ठानामिकाभ्यां कर्णिकायां विन्यस्य-तदग्रादि परितस्तदावरणशक्तिन्यसेत् अं अमृतायै नमः। आं आकर्षिण्यै नमः। इं इन्द्राण्यै नमः। ईं ईशान्यै नमः। उं उमायै नमः। ऊं ऊर्ध्व केशिन्यै नमः। ऋं ऋद्धिदायै नमः। ॠं ॠपायै नमः लृं लृंकायायै नमः। ॡं ॡपायै नमः। एं एक-पादायै नमः। ऐं ऐश्वर्यात्मिकायै नमः। ओं ओंकारात्मि-कायै नमः। औं औषधात्मिकायै नमः। अं अम्बिकात्मिकायै ममः। अं अक्षरात्मिकायै नमः। इति डाकिनींध्यात्वाप्राग्द-क्षिणेन न्यसेत्। ततोऽनाहतेद्वादशदल कमले ध्यानम्। श्यामां शूलाग्रहस्तां डमरुक सहितं तीक्ष्ण चक्रं वहन्तीं श्यामां रक्तां त्रिनेत्रां भ्रुकुटिविलिलसद्दष्टदन्तप्रभाभिः दीप्तास्यां देवदेवीं-हृदयकमलगां रक्तधात्रेकनाथां शुद्धान्नेषुप्रशक्तां मधुमद मुदितां चिन्तयेद्राकिनींताम् इति राकिणीं सावरणां ध्यात्वा तत्कर्णिकायां

तन्मन्त्रंन्यसेत्। रां रीं रूं रें रों रः रमलवरयूं राकिनी मां रक्ष रक्ष ममरक्तधातुं रक्ष रक्ष सर्व शक्तित्रपट्करि देवि आगच्छ आगच्छ इमां पूजां गृह्ण गृह्ण ऐं घोरेदेवि ह्रीं सः परम घोरे हूं घोर रूपे एह्येहि नमः चामुण्डे डलरकस ह्रैं श्रीभुवनेश्वरि देवी विश्वे कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं अनाहत पीठस्थे अनाहतराकिनी अनाहतनाथ देव श्री पा० पू० नमः इति पूर्ववन्न्यस्यदलेषु परितस्तदावरण देवतान्यसेत्। कं काल-रात्र्यै नमः। खं खातायै नमः। गं गायत्र्यै नमः। घं घण्टाधारिण्यै नमः। ङं ङर्णात्मिकायै नमः। चं चामुण्डायै नमः। छं छायायै नमः। जं जयायै नमः। झं झंकारिण्यै नमः। ञं ञार्णात्मिकायै नमः टं हस्तायै नमः। टं टंकारिण्यै नमः। इति राकिनीव-ध्यास्वान्यसेत्। ततो मणिपूरके दशदलकमले ध्यानम्। कृष्णां देवीं त्रिवक्त्रां त्रिनयनलसितां दंष्ट्रिणीमुग्ररूपां वज्रं शक्तिं च दण्डा भयवरददरांदक्ष वामेदधानाम्। ध्यात्वा नाभिस्थ पद्मे दशदल विलसत्कर्णिकी लाकिनीतांमांसस्थां गौडभक्तोत्सुक हृदय-वतीं विन्यसेत्साधकेन्द्रः इतिध्यात्वा। लां लीं लूं लैं लौं लं लम-वरयूं लाकिनी मां रक्ष रक्ष मम मांस धातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्वव-शंकरि देवि आगच्छ आगच्छ इमां पूजां गृह्ण गृह्ण ऐं घोरे देवि ह्रीं सः परमघोरे हूं घोररूपे एह्येहि नमश्चामुण्डे डलरकस ह्रैं श्रीभुवनेश्वरीदेवि वरदे विच्चे डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं मणि-पूरक पीठस्थे मणिपूरकलाकिनी मणिपूरकनाथ देवता श्री पा० पू० इति लाकिनी वध्यास्वा न्यसेत्। डं डामर्यै नमः। ढं ढंकारिण्यै

नमः। णं णंकारिण्यै नमः। तं तामस्यै नमः। थं स्थानदेव्यै नमः। दं दक्षायिन्यै नमः। धं धाऽयै नमः। नं नन्दायै नमः। पं पार्दत्यै नमः। फं फेत्कारिण्यै नमः। इति लाकिनीव ध्यात्वा न्यसेत्। ततः स्वाधिष्ठाने षट्दल कमले। स्वाधिष्ठानाभ्य पद्मे रसदललसिते वेदवक्त्रां त्रिनेत्रां पीताभां धारयन्तीं त्रिशिख गुण-कपोला भयात्पातुसर्वाम्। मेदेधातु प्रतिष्ठा मलिसदगुदिता बंधि-नीत्यादिवीतां। दध्यन्ने शक्त चित्तामभिमत फलदां काकिनीं भावयेत्ताम्। इति ध्यात्वा कर्णिका न्यसेत्। तन्मन्त्रं न्यसेत्। कां कीं कूं कैं कौं कं कः कमल वरयूँ काकिनो मां रक्ष २ सर्वस-त्ववशङ्करि देवि आगच्छ २ इमां पूजां गृह् २ एं घोरदेवि ह्रीं सः परमघोरे हूं घोररूपे एह्येहि नमः। चामुण्डे ड ल र क स हैं श्रीभुवनेश्वरीदेवि वरदे विश्वे वं भं मं यं रं लं स्वाधिष्ठान पीठस्थे स्वाधिष्ठान काकिनी स्वाधिष्ठानानन्दनाथ देव श्रीपादुकां पू० नमः इति विन्यस्य परितस्तद्दलेषु परिवारदेवता न्यसेत्। वं बंधिन्यै नमः। भं भद्रकाल्यै नमः। मं महामायायै नमः। यं यशस्विने नमः। रं रमायै नमः। लं लम्बोष्ठ्यै नमः इति काकिनीव-ध्यात्वा न्यसेत्। ततोमूलाधारे चतुर्दल कमल कर्णिकायां देवीं ज्योतिस्वरूपां त्रिनयनविलसत्पञ्चवक्त्रां सुदंष्ट्रां हस्ताम्भोजेक्षु चापं सृणिमपि दधतीं पुस्तकं ज्ञान मुद्राम्। मूलाधारस्थ पद्मे निखिल पशु जनोन्मादिनोमस्थि संस्थां स्वाद्धन्ने प्रीतियुक्तां मधु-मदमुदितां चिन्तयेच्छाकिनींताम्। इति ध्यात्वा। सां सीं सूं सैं सौं सः समलवरयूँ शाकिनीं मां रक्ष रक्ष ममास्थिधातुं रक्ष रक्ष

सर्वसत्त्ववशङ्करि देवि आगच्छ आगच्छ इमां पूजां गृह्ण गृह्ण ऐं घोरे देवि ह्रीं सः परमघोरे हूं घोररूपे एह्येहि नमः चामुण्डे डरलकस हँ श्रीभुवनेश्वरी देवि वरदे विश्वे वं शं षं सं मूलाधार पीठस्थे मूलाधारशाकिनी मूलाधारनाथदेव श्री पा० पू० नमः इति विन्यस्य तद्दलेषु तत्परिवारदेवता तद्वद्ध्यात्वा न्यसेत्। वं वरदायै नमः। शं शंखिन्यै नमः। षं षोढायै नमः। सं सरस्वत्यै नमः इति। ततो भ्रूमध्ये आज्ञाचक्र कर्णिकायां भ्रूमध्ये बिन्दुमध्ये द्विदल सुललिते शुक्लवर्णां कराब्जैर्बिभ्राणां ज्ञानमुद्रां डमरुकसहितामक्षमालां कपालं। षड्वक्त्रां मज्जसंस्थां त्रिनयनलसितां हेमवल्याद्वि युक्तां हारिद्रान्ते प्रशक्तां सकल सुरनतां हाकिनीं भावयेताम्। इति ध्यात्वा। हां हीं हूं हैं हौं हः हमलवरयूं हाकिनी मां रक्ष रक्ष मम मज्जा धातुं रक्ष रक्ष सर्वसत्ववशङ्करी देवि आगच्छ आगच्छ इमां पूजां गृह्ण गृह्ण ऐं घोरे देवि ह्रीं सः परमघोरे हूं घोररूपे एह्येहि नमश्चामुण्डे डरलकस हँ श्रीभुवनेश्वरी देवि वरदे विश्वे हं क्षं आज्ञा पीठस्थे आज्ञा हाकिनी आज्ञानाथदेव श्री पा० पू० नमः। इति विन्यस्य तद्दलयोः हं हंसवत्यै नमः। क्षं क्षमावत्यै नमः। इति हाकिनीव ध्यात्वा न्यसेत्। ततो ब्रह्मरन्ध्रे सहस्रारकर्णिकायां। मुण्डं वामासनस्थे सकलदलयुते याकिनीं भैरवींताम्। यक्षिरायाद्या समस्तायुध ललितकरां सर्ववर्णां समष्टिम्। डाकिनीं सर्ववक्त्रां सकलसुखकरीं सर्वधातुस्वरूपां सर्वान्तेसक्तचित्तां परशिवरसिकां भावये सर्वरूपाम्। इति ध्यात्वा यां यीं यूं यैं यौं यः यमलवरयूं याकिनी मां रक्ष रक्ष मम शुक्रादि-

सर्वधातून् रक्ष रक्ष सर्वसत्त्ववशङ्करी देवि आगच्छ आगच्छ इमां पूजां गृह्ण गृह्ण ऐं घोरे देवि ह्रीं सः परमघोरे हूं घोररूपे एह्येहि नमश्चामुण्डे डरलकस हूँ श्रीभुवनेश्वरि देवि वरदे विश्चे अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं ब्रह्मरन्ध्र पीठस्थे ब्रह्मरन्ध्रयाकिनि ब्रह्मरन्ध्रनाथ देव श्रीपादुकां पूजयामि नमः इति विन्यस्य परितः पञ्चाशद्वर्ण देवता याकिनीवद्ध्यात्वा न्यसेत्। ॐ अं अमृतायै नमः। आं आकर्षिण्यै नमः। इं इन्द्राण्यै नमः। ईं ईशान्यै नमः। उं उमायै नमः। ऊं ऊर्ध्वकेश्यै नमः। ऋं ऋद्धिदायै नमः। ॠं ॠपायै नमः। ऌं ऌकारात्मिकायै नमः। ॡं ॡपायै नमः। एं एकपादायै नमः। ऐं ऐश्वर्यात्मिकायै नमः। ओं ओंकारात्मिकायै नमः। औं औषधात्मिकायै नमः। अं अम्बिकायै नमः। अः अक्षरा-त्मिकायै नमः। कं कालरात्र्यै नमः। खं खातीतायै नमः। गं गायत्र्यै नमः। घं घण्टाधारिण्यै नमः। ङं ङार्णात्मिकायै नमः। चं चामुण्डायै नमः। छं छायायै नमः। जं जयायै नमः। झं झंकारिण्यै नमः। ञं ञार्णात्मिकायै नमः। टं टंकहस्तायै नमः। ठं ठंकारिण्यै नमः। डं डामर्यै नमः। ढं ढांकारिण्यै नमः। णं णंकारिण्यै नमः। तं तामस्यै नमः। थं स्थानदेव्यै नमः। दं दाक्षायण्यै नमः। धं धात्र्यै नमः। नं नन्दायै नमः। पं पार्वत्यै नमः। फं फेत्कारिण्यै नमः। बं बन्धिन्यै नमः। भं भद्रकाल्यै नमः। मं महामायायै नमः। यं यशस्विन्यै नमः। रं रमायै

नमः। लं लम्बोष्ठ्यै नमः। वं वरदायै नमः। शं शशिन्यै नमः। षं षोढायै नमः। सं सरस्वत्यै नमः। हं हंसवत्यै नमः। क्षं क्षमावत्यै नमः। इति महायोगिनी न्यासः।

अथ हृल्लेखादि न्यासः। ॐ हृल्लेखायै नमः मूर्ध्नि। एं गगनायै नमः वक्त्रे। उं रक्तायै नमः हृदि। इं करालिकायै नमः गुह्ये। अं महोच्छुष्मायै नमः पादयोः। इति हृल्लेखादि न्यासः। ॐ हृल्लेखायै नमः इत्यादि पुनः ऊर्ध्वं पूर्ववद्दक्षिणोत्तर पश्चिम मुखे तु न्यसेत्।

अथ गायत्र्यादि न्यासः। कण्ठे गायत्र्यै नमः। वामकुचे सावित्र्यै नमः। दक्षे सरस्वत्यै नमः। वामांशे ब्रह्मणे नमः। हृदि विष्णवे नमः। दक्षांशे महेश्वराय नमः। इति गायत्र्यादि न्यासः।

अथ मिथुन न्यासः। भाले गायत्र्यै० ब्रह्मणे नमः। दक्षगण्डे सावित्र्यै० विष्णवे नमः। वामगण्डे महेश्वर्यै० रुद्राय नमः। वामकर्णे श्रियै धनपतये नमः। मुखे रत्यै कामाय नमः। दक्षकर्णे पुष्ट्यै गणपतये नमः। दक्षकर्ण कपोलयोर्मध्ये वसुन्धरायै शङ्ख निधये नमः। वामकर्ण कपोलयोर्मध्ये वसुमत्यै पद्म निधये नमः। मुखे ह्रीं नमः इति विन्यस्य पुनर्न्यसेत्। यथा—गलमूले गायत्र्यै ब्रह्मणे नमः। वामकुचे सावित्र्यै विष्णवे नमः। दक्षकुचे माहेश्वर्यै रुद्राय नमः। वामांशे श्रियै धनपतये नमः। हृदये रत्यै कामाय नमः। दक्षांशे पुष्ट्यै गणपतये नमः। दक्षपार्श्वे वसुन्ध-

रायै शंख निधये नमः। वामपार्श्वे वसुमत्यै पद्म निधये नमः। इति मिथुन न्यासः।

अथ ब्राह्म्यादि न्यासः। ललाटे आं ब्राह्म्यै नमः। वामांशे इं माहेश्वर्यै नमः। वामपार्श्वे ऊं कौमार्यै नमः। उदरे ऋं वैष्णव्यै नमः। दक्षपार्श्वे लृं वाराह्यै नमः। दक्षांशे ऐं इन्द्राण्यै नमः। ककुदि औं चामुण्डायै नमः। हृदि अः महालक्ष्म्यै नमः। इति ब्राह्म्यादि न्यासः।

इति विन्यस्य मूलमन्त्रेण व्यापकं कृत्वा पीठन्यासं कुर्यात्। तद्यथा—मूलाधारे आधार शक्त्यै नमः। स्वाधिष्ठाने प्रकृत्यै नमः। मणिपूरे कूर्मायै नमः। हृदि अनन्ताय नमः। पृथिव्यै सुधा समुद्राय नमः। मणि द्वीपाय नमः। चिन्तामणि गृहाय नमः। पारिजाताय नमः। तन्मूले रत्न वेदिकायै नमः। तस्योपरि मणिपीठाय नमः। दिक्षु नाना मुनिगणेभ्यो नमः। नानादेवेभ्यो नमः। दक्षांशे धर्माय नमः। वामांशे ज्ञानाय नमः। वामोरौ वैराग्याय नमः। दक्षोरौ ऐश्वर्याय नमः। दक्षकुक्षौ अधर्माय नमः। दक्षपृष्ठे अज्ञानाय नमः। वामपृष्ठे अवैराग्याय नमः। वामकुक्षौ अनैश्वर्याय नमः। पुनर्हृदि शेषाय नमः। पद्माय नमः। प्रकृतिमय पत्रेभ्यो नमः। विकृतमय केसरेभ्यो नमः। मध्ये पञ्चाशद्वर्णभूषित कर्णिकायै नमः। वैश्वानरमण्डलाय नमः। सूर्य मण्डलाय नमः। सोम मण्डलाय नमः। सं सत्त्वाय नमः। रं रजसे नमः। तं तमसे नमः। आं आत्मने नमः। अं अन्त-

रात्मने नमः। पं परमात्मने नमः। ह्रीं ज्ञानात्मने नमः। अष्ट पत्रेषु। ॐ जयायै नमः। ॐ विजयायै नमः। ॐ अजितायै नमः। ॐ अपराजितायै नमः। ॐ नित्यायै नमः। ॐ विला-सिन्यै नमः। ॐ दोग्ध्र्यै नमः। ॐ अघोरायै नमः। मध्ये ॐ मङ्गलायै नमः। एं परायै नमः। ऐं अपरायै नमः। ऐं परापरायै नमः। ह्सौं सर्वशक्ति कमलासनाय नमः। इति पीठन्यासं विधाय पुनः षडङ्गन्यासं कुर्यात्। ह्रां हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रूं शिखायै वषट्। ह्रैं कवचाय हुम्। ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रः अस्त्राय फट्। इति षडङ्गं विधाय निमीलितनयनः स्वहृदयकमले स्वाभेदेन श्रीभुवनेश्वरीं ध्यायेत्। यथा—ॐ उद्यदादित्य संकाशां शीतांशुकृत शेखराम्। पद्मासनां त्रिनेत्रां च पाशाङ्कुश वराभयैः। अलंकृत चतुर्बाहु मन्दस्मितलसन्मुखीम्। कुचभार विनम्राङ्गलतां देवि हृदिस्मरेत्। वामोर्ध्वकरादि वामाधः करपर्यन्तमायुध ध्यानम् इति ध्यात्वा मनसा आसनादि सर्वोपचारैराराध्य मनसा होमादिकं कुर्यात्। यथा—तत्र मूलाधारे आत्मान्त रात्मपरमा-त्मज्ञानात्म स्वरूपं चतुरस्रं विभाव्य तन्मध्ये परमज्ञानाग्निं वि-चिन्त्य मूलं अहन्तां जुहोमि स्वाहा। मूलं पैशून्यं जुहोमि स्वाहा। मूलं कामं जुहोमि स्वाहा। मूलं क्रोधं जुहोमि स्वाहा। मूलं लोभं जुहोमि स्वाहा। मूलं मदं जुहोमि स्वाहा। मूलं अहंकारं जुहोमि स्वाहा। इति हुत्वा पूर्णत्रयं दद्यात्। यथा—धर्माधर्म-हविर्दीप्ते स्वात्माग्नौ मनसा स्रुचः। सुषुम्णा वर्त्मना नित्य मक्ष-वृत्तिं जुहोम्यहम्। इति पूर्णतत्त्वत्रयेण जुहुयात् मानसोपचारैः

सम्पूज्य लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि नमः। यं वाय्वात्मकं धूपं रं वह्न्यात्मकं दीपं हं आकाशात्मकं पुष्पं वं अमृतात्मकं नैवेद्यं समर्पयामि। इति समर्प्य यथाशक्ति जपं विधाय जपान्ते करपङ्क्ति न्यासं कृत्वा। गुह्यातिगुह्य गोप्त्रित्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतुमेदेवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि इति जपं समर्प्य। अथ कलशस्थापन विधिः। तत्रादौ सामान्यार्घ विधिः। स्वदक्ष-भागे त्रिकोण वृत चतुस्र मण्डलं विलिख्य चतुरस्रे चतुः पीठेन त्रिकोणं मूलं त्रिखण्डेन पूजयेत्। बिन्दुमध्ये ह्रीं आधार शक्त्यै नमः। अस्त्रमन्त्रेण आधारं प्रक्षाल्य मण्डलोपरि संस्थाप्य रं वह्नि-मण्डलाय दशकलात्मने नमः। दशाकला: पूजयेत्। अस्त्र मन्त्रेण अर्घपात्रं प्रक्षाल्य मण्डलोपरि संस्थाप्य तत्पात्रोपरि ॐ अर्कं मंड-लाय द्वादश कलात्मने नमः। द्वादश कला: पूजयेत्। कवच मन्त्रेण अर्घपात्रं प्रपूर्य जलेन च भाग मेकं प्रपूर्य ॐ सोम मण्ड-लाय षोड्श कलात्मने नमः। षोड्श कला: पूजयेत्। जलमध्ये लोम विलोम मातृका मुच्चार्य धेनु मुद्रां प्रदर्श्य मत्स्य मुद्रयाच्छाद्य मूलेन पूजयेत्। ऐं अमृते अमृतोद्भवे अमृत वर्षिणि अमृतमाकर्षय २ अमृतं श्रावय २ अमृतं कुरु २ स्वाहा। एवं वारत्रयमुच्चार्य आनन्दभैरव भैरवीं सम्पूज्य गंगेत्यादि तीर्थ मावाह्य गंगे च यमुनेचैव गोदावरि सरस्वती। नर्मदे सिन्धु कावेरी जलेऽस्मिन्-सन्निधिं कुरु। मूलेन गन्धादिना सम्पूज्य अङ्कुशमुद्रां प्रदर्श्य ह्रीं भुवनेश्वरि देवि इहागच्छ इहतिष्ठ हुं इत्यवगुंठ्य वौषट् अनेन गालिनी मुद्रां प्रदर्श्य वौषट् इति जलं वीक्ष्य तज्जलमध्ये करपङ्क्ति

न्यासं कुर्यात्। अक्षतान् विकीर्य ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः धेनु मुद्रां कृत्वा फट् इति संरक्ष्य ततो मत्स्य मुद्रां कृत्वा मूलमष्टधा जप्त्वा हुं फट् अनेनांगुलिध्वनि तालत्रयं दत्त्वा इति सामान्यार्घ क्रमेण विशेषार्घ स्थापनं कुर्यात्।

अथ कलशस्थापन विधिः। स्ववामभागे षट्कोणान्तगत त्रिकोणद्वयं विन्दु वाह्यविन्दु वृत्तचतुरस्र मण्डलं कृत्वा सामान्यार्घोदकेनाभ्युक्ष्य तत्राधार शक्तिभ्यो नमः। कालाग्नि रुद्राय नमः। मण्डले चतुरस्रे ह्रीं श्रीं कामराज पीठाय नमः। ह्रीं श्रीं जालन्धर पीठाय नमः २। उडियान पीठाय नमः २। पूर्णागिरि पीठाय नमः। षट्कोणे ह्रां हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे नमः। ह्रूं शिखायै वषट् नमः। ह्रैं कवचाय हुं नमः। ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् नमः। ह्रः अस्त्राय फट् नमः। इति षट्कोणं च सम्पूज्य त्रिकोणे ह्रीं नमः ह्रीं नमः ह्रीं नमः। विन्दौ ह्रीं आधार शक्त्ये नमः। ह्रः अस्त्राय फट्। आधारं प्रक्षाल्य मण्डलोपरि संस्थाप्य रं वह्नि मण्डलाय दशकलात्मने नमः आधारोपरि दशकलाः पूजयेत्। यथा—यं धूम्रार्चिषे नमः। रं उष्मायै नमः। लं ज्वलिन्यै नमः। वं ज्वालिन्यै नमः। शं विस्फुलिंगिन्यै नमः। षं सुश्रियै नमः। सं स्वरूपायै नमः। हं कपिलायै नमः। लं कव्यवाहायै नमः। क्षं हव्यवाहायै नमः। इति। दशकला धर्म प्रदाय नमः। कलशं ह्रीं प्रक्षाल्य हुं फट् कलशं धूप वासितं हूं हूं ब्रह्माण्डचषकाय नमः इति कलशं प्रक्षाल्य ॐ ऐं ह्रीं श्रीं भुवनेश्वर्या अमृतकलशं स्थापयामि नमः इति मण्डलोपरि स्थाप्य

कं भं तपिन्यै नमः। खं वं तापिन्यै नमः। गं फं धूम्रायै नमः। घं पं मरिच्यै नमः। ङं नं ज्वलिन्यै नमः। चं धं रुच्यै नमः। छं दं सुषुम्णायै नमः। जं थं भोगदायै नमः। झं तं विश्वायै नमः। ञं णं बोधिन्यै नमः। टं ढं धारिण्यै नमः। ठं डं क्षमायै नमः। अं अर्कमण्डलाय द्वादश कलात्मने नमः इति सम्पूज्य तन्मध्ये त्रिकोणषट्कोण वृत्तं पात्रे विलिख्य पूर्ववत्पात्रे समस्त मन्त्रेण सम्पूज्य वमिति वरुणबीजं अष्टधा जप्त्वा अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं पठित्वा पुनः विलोमं पठेत्। क्षं ळं हं सं षं शं वं लं रं यं मं भं बं फं पं नं धं दं थं तं णं ढं डं ठं टं ञं झं जं छं चं ङं घं गं खं कं अः अं औं ओं ऐं एं ॡं लृं ॠं ऋं ऊं उं ईं इं आं अं अमृतेन त्रिकोणं प्रपूर्य तत्र गन्धादि निःक्षिप्य अं अमृतायै नमः। आं मानदायै नमः। इं पूषायै नमः। ईं तुष्ट्यै नमः। उं पुष्ट्यै नमः। ऊं रत्यै नमः। ऋं धृत्यै नमः। ॠं शशिन्यै नमः। लृं चन्द्रिकायै नमः। ॡं कान्त्यै नमः। एं ज्योत्स्नायै नमः। ऐं श्रियै नमः। ओं प्रीत्यै नमः। औं अङ्गदायै नमः। अं पूर्णायै नमः। अः पूर्णामृतायै नमः। ॐ षोडश कलात्मने सोममण्डलाय नमः इति सम्पूज्य पूर्ववत् यन्त्रं द्रव्यमध्ये विलिख्य त्रिकोणरेखायां अं १५ कं १६ गंगेत्यादि तीर्थ मावाह्य वमित्यवगुंठ्य वीक्षण मुद्रया संवीक्ष्य मूलेन गन्धमाघ्राय मूलेनाभ्युक्ष्य रक्तवस्त्र माल्यादिभिः संविभूष्य कुम्भे पुष्पं दत्वा ॐ एकमेव परंब्रह्म स्थूल सूक्ष्म मयं

ध्रुवम्। कचोद्भवां ब्रह्महत्यां तेन ते नाशयाम्यहम्। १ ॥ सूर्यमण्डल सम्भूते वरुणालय सम्भवे। अमावीजमयं देवि शुक्र शापाद्विमुच्यताम्। २ ॥ वेदानां प्रणवो बीजं ब्रह्मानन्दमयोयदि तेन सत्येन हे देवि ब्रह्महत्या व्यपोहतु। ३ ॥ इति वारत्रयं पठेत्। ॐ ग्रां ग्रीं ग्रूं ग्रैं ग्रौं ग्रं ग्रः ब्रह्मशाप विमोचितायै सुरादेव्यै नमः इति त्रिः। ॐ क्रां क्रीं क्रूं क्रैं क्रौं क्रं क्रः सुरा कृष्ण शाप मोचय २ अमृतं स्रावय २ स्वाहा। सां सीं सूं सैं सौं सं सः शुक्र सुरा शाप मोचय २ मोचिकायै तन्मङ्गलं कुरु २ स्वाहा। हंसः शुचि षड्वसुरन्तरिक्ष सद्धोता वेदिषद तिथि दुरोणशत् नृषद्वरसदृत व्योमसदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतं बृहत् ३ तत्राष्टादशभुजा देवि क्रमानन्द भैरवं ध्यात्वा ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौंः हसक्षमलवरयूं आनन्द भैरवाय वौषट् ४ सहक्षमलवरयूं सुरादेव्यै वषट् ३ द्रव्य मध्ये अं आं १६ पूर्वे कं खं १६ दक्षिणे थं दं १६ वामे तन्मध्ये हं क्षं द्रव्य मध्ये ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौंः जूं सः अमृतं अमृतोद्भवे अमृत वर्षिणी अमृतं स्रावय २ जूं सः स्वाहा। पूर्वादितः ग्लूं गगन रत्नेभ्यो नमः। स्लूं स्वर्ग रत्नेभ्यो नमः। प्लूं पाताल रत्नेभ्यो नमः। न्लूं नागलोक रत्नेभ्यो नमः। म्लूं मर्त्यलोक रत्नेभ्यो नमः। इति पञ्चरत्नं सम्पूज्य कुलार्णवे अखण्डैकारसानन्दे करैः परशु धात्मनि स्वच्छन्दं स्फुरणान्मन्त्रं निधेहि कुलरूपिणी त्वद्रूपेन कर स्पर्शं करोमि त्वत्स्वरूपिणी भूतापरामृताकारामस्मिन्विस्फुरणां कुरु। ब्रह्माण्डरस संभूतमशेष कुलसम्भवम्। आपूरितं महापात्रं पीयूषरसमावह। ब्रह्माण्डोदरतीर्थेषु करैः स्पृष्टानिसेवते। तेकरैः

स्तीर्थं मावेहि तीर्थं देहि निशाकर। दिवाचेति दिवाकर इति ध्यात्वा मांसादि। तत्रादौ त्रिकोण मण्डलं विलिख्य तदुपरि मांसादिपात्रं संस्थाप्य यमिति संशोष्य रमिति संदह्य वमित्या-प्लाव्य धेनु मुद्रया मृतीकृत्य तदुपरि मूलं दशधा जप्त्वा ऋच पठेत्। ॐ प्रतद्विष्णु स्तवते वीर्येण मृगो न भीमकुचरोगरिष्ठः यस्योरुषुत्रिषु विक्रमणेष्वधि क्षयन्तु भुवनानि विश्वा इति मांसं शोधयेत्। त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टि वर्धनम्। उर्वारुक मिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्। इति मीन शोधनम्। ॐ तद्विष्णोः परमंपद ७ं सदा पश्यन्ति सूरयः दिवीव चक्षुराततम्। तद्विप्रासो विपन्यवो जाग्रवांसः समिंधते विष्णोर्यत्परमं पदम्। इति मुद्रा शोधनम्। विष्णुर्योनिः कल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिंशतु आसिंचतु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातुते। गर्भं देहि सिनीवाली गर्भं देहि सरस्वति। गर्भंते आश्विनो देवा वदत्तां पुष्कर स्रजौ। इति कुण्डगोलादि शोधयेत्। हूमित्यवगुंठ्य तालत्रयेण दिशः संशोध्य तत्रदेवी मावाह्य अवगुंठ्यामृतीकृत्य योनिमुद्राः प्रदर्श्य कुण्डलिन्याः प्रयोगे नानेस्मृतामसृतवृष्टि योनिमुद्रोल्लासि करेण तत्रानीय मूलान्ते ब्रह्माण्डखण्डेति मन्त्रेणाभिमन्त्र्य ऐं अमृते अमृतोद्भवेति मन्त्रेणाभिमन्त्र्य सौः तद्रूपेण करेति मन्त्रेणाभि-मन्त्र्य सौः नमः इति सम्पूज्य शंख मुद्रां प्रदर्श्य पङ्क्तेन शकली-कृत्य मत्स्य मुद्रया पात्रमाच्छाद्य तं पात्रं देवीरूपं भावयेत्। कलशविधिना श्रीपात्रयोगिनी पात्र स्थापनं कृत्वा घट समीपे गुरुपात्र शक्तिपात्र स्वपात्र योगिनीपात्र वीरपात्र भोग पात्रं बलो-

पात्रं प्रोक्षणीपात्रं पूर्ववत् सामान्य विशेषार्घवत् संस्थाप्य ततश्च-वर्णयुतकारणेन तत्व मुद्रया श्रीपात्र विन्दुं समुद्धृत्य स्वहृदि ४ हसक्षमलवरयूं आनन्द भैरवं तर्पयामि नमः इति सन्तर्पयेत् त्रिधा ४ हसक्षमलवरयूं सुरादेवीं तर्पयामि नमः इति त्रिःसन्तर्प्य स्वशिरसि गुरुपादुका मन्त्रेण गुरुपात्रामृतेन श्रीमच्छ्री अमुकानन्द नाथ श्रीपादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि नमः इति त्रिः गुरुं सन्तर्प्य एवं परमगुरुं परमाचार्य गुरुं च तर्पयेत्। ततः सेश्वरां श्रीपात्र विन्दुभिः स्वहृदिमूलं श्रीभुवनेश्वरी भगवतीं सपरिवारां सवाहनां समुद्रां तर्पयामि नमः इति त्रिः सन्तर्प्य प्रोक्षणीपात्रं श्रीपात्रं विन्दुभिः सम्पूर्य तेनैवमूलं आत्मतत्त्वात्मने नमः मूलं विद्या तत्त्वात्मने नमः मूलं शिव तत्त्वात्मने नमः सर्व तत्त्वात्मने नमः इति स्वात्मानं सम्प्रोक्ष्य पूजोपकरणानि संप्रोक्षयेत्। इति कलशस्थापन विधिः।

अथ श्रीभुवनेश्वरी देवीं ध्यात्वा पीठोपरि पीठपूजां कुर्यात्। तत्रादौ स्ववामे गुरुमन्त्रेण गुरुपूजां कुर्यात्। स्वदक्षे गं गणपतये नमः पीठपूजां कुर्यात्। यथा—ॐ मंडूकाधाराय नमः। कालाग्नि रुद्राय नमः। मूल प्रकृत्यै नमः। आधार शक्त्यै नमः। कूर्माय नमः। अनन्ताय नमः। पृथिव्यै नमः। सुधा समुद्राय नमः। मणि द्वीपाय नमः। चिन्तामणि गृहाय नमः। पारिजाताय नमः। तन्मूले रत्नवेदिकायै नमः। मणि पीठाय नमः। दिक्षु नानामुनि-गणेभ्यो नमः। नाना देवेभ्यो नमः। धर्माय नमः। ज्ञानाय नमः। वैराग्याय नमः। ऐश्वर्याय नमः। अधर्माय नमः।

अज्ञानाय नमः। अवैराग्याय नमः। अनैश्वर्याय नमः। शेषाय नमः। पद्माय नमः। प्रकृतिमय पत्रेभ्यो नमः। विकारमय केसरेभ्यो नमः। पञ्चाशद्वर्णभूषित कर्णिकायै नमः। वैश्वानर मण्डलाय नमः। सूर्य मण्डलाय नमः। सोम मण्डलाय नमः। सं सत्त्वाय नमः। रं रजसे नमः। तं तमसे नमः। आं आत्मने नमः। पं परमात्मने नमः। ह्रीं ज्ञानात्मने नमः। अष्ट पत्रेषु। ॐ जयायै नमः। ॐ विजयायै नमः। ॐ अजितायै नमः। ॐ पराजितायै नमः। ॐ नित्यायै नमः। ॐ विलासिन्यै नमः। ॐ दोग्ध्र्यै नमः! ॐ अघोरायै नमः। मध्ये ॐ मङ्गलायै नमः। ॐ अमित्यादि क्षान्तं ह्रीं सर्वशक्ति कमलासनाय नमः इति पीठ-पूजां विधाय श्रीचक्रोपरि मूलं पठित्वा तत्रदेवीमूर्तिं परिकल्प्य पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा यमिति वामनासापुटेन स्वहृदयान्तेजोरूपां स्वेष्ट देवतां तत्रानीय। ॐ देवेशिभक्तिसुलभे परिवार समन्विते। यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत्त्वं सुस्थिराभव। इति पठित्वा तं कुसुमाञ्जलिं चक्रोपरिक्षिपेत्। मूलं श्रीमच्छ्री भगवति भुवनेश्वरि इहागच्छ २ मूलं भगवति भुवनेश्वरि इहसंतिष्ठ २ मूलं भगवति भुवनेश्वरि इहसन्निधेहि २ मूलं भगवति भुवनेश्वरि इहसन्निरुद्धा-भव २ मम सर्वोपचारसहितं पूजां गृह २ स्वाहा इत्यावाहनादि मुद्राः प्रदर्श्य प्राणप्रतिष्ठां चक्रोपरि लेलिहान मुद्रया कुर्यात्। आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं हंसः सोहं श्रीभुवनेश्वरी प्राणाः इहप्राणाः ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं हंसः सोहं श्रीभुवनेश्वरी जीव इहस्थितः ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं शं षं

सं हं लं क्षं हंसः सोहं श्रीभुवनेश्वरी सर्वेन्द्रियाणि इहस्थितानि ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं हंसः सोहं श्रीभुवनेश्वरी वाङ्मनस्त्वक्चक्षुः श्रोत्रघ्राणप्राणाः इहागच्छन्तु सुखं चिरं-तिष्ठन्तु स्वाहा इति प्राणप्रतिष्ठां विधाय छोटिकाभिर्दशदिग्बन्धनं कृत्वा अवगुंठ्यामृतीकृत्य शकलीकृत्य परमीकृत्य धेनुयोनिमुद्राः प्रदर्श्य पाशाङ्कुश वराभयमुद्राः प्रदर्श्य पुनः श्रीपात्रामृतेन सायुधां सपरिवारां सवाहनां सावर्णां सेश्वरां श्रीमच्छ्री भुवनेश्वरी भगवतीं तर्पयामि नमः इति त्रिः सन्तर्प्य मूलं एतदासनं श्रीमदेश्वर सहितायै श्रीमच्छ्री भुवनेश्वरी भगवत्यै नमः। भगवत्यत्रासन उपविश्यतामित्यासन उपविष्टां भावयेत्। मूलं एतत्पाद्यं श्रीभुवनेश्वरसहितायै श्रीमच्छ्री भुवनेश्वरी भगवत्यै नमः। इति पाद्य-पात्रेण पादयोः पाद्यं दद्यात्। पुनर्मूलं एतदर्घ्यं श्रीमदीश्वर सहितायै श्रीमच्छ्री भुवनेश्वरी भगवत्यै स्वाहा। इत्यर्घ पात्रेण शिरसि अर्घ्यं दद्यात्। मूलं एतदाचमनीयं श्रीमदीश्वर सहितायै श्रीमच्छ्री भुवनेश्वरी भगवत्यै स्वाहा। इत्याचमनीय पात्रेण मुखे आचमनीयं दद्यात्। मूलं एतन्मधुपर्कं श्रीमदीश्वर सहितायै श्रीमच्छ्री भुवनेश्वरी भगवत्यै स्वाहा। इति मधुपर्कपात्रेण मुखे मधुपर्कं दद्यात्। मूलं एतदाचमनीयं श्रीमदीश्वर सहितायै श्रीमच्छ्री भुवनेश्वरी भगवत्यै स्वाहा। इति पुनराचमनीय पात्रेण मुखे आचमनीयं दद्यात्। ततः स्नान मण्डपं नीत्वा तत्र पीठोपरि संस्थाप्य तत्रासनादिभिः सम्पूज्य ततो गङ्गादि तीर्थोदकं संमिश्रित क्षीरादिभिर्मूलं एतत्स्नानीयं श्रीमदीश्वर सहितायै श्रीमच्छ्री भुवनेश्वरी

भगवत्यै नमः। इति सर्वाङ्गेषु स्नानीयं दद्यात् इति सुस्नाप्य शुद्धदुकूले नाङ्गं प्रोक्ष्य कालागुरुधूपेन केशान संशोष्यालङ्कार मण्डपं नीत्वा। तत्रविचित्रपट्टवस्त्रे कुंकुमकस्तूरी चन्दन सिन्दूर मुकुट कुण्डल हार त्रयादि नूपुरां मञ्जरि दर्पणादि नानालङ्कारान् दत्वा पुनराचमनीयं दद्यात्। ततः पूजामण्डपं समानीय तत्रपुनः पाद्यादिमधुपर्कान्तं सम्पूज्य मूलं मध्यमानाङ्गुष्ठाभ्यां श्रीमदीश्वर सहितायै श्रीमच्छ्री भुवनेश्वरी भगवत्यै एष गन्धो नमः इति तिलकं कुर्यात्। ततोऽङ्गुष्ठतर्जनीभ्यां मूलं श्रीमदीश्वर सहितायै श्रीमच्छ्री भुवनेश्वरी भगवत्यै एतान्यक्षत पुष्पाणि वौषट् इति पुष्पैः सम्पूज्य ततोधूपपात्रं अस्त्राय फट्। इति सामान्यार्घोदकेन सम्प्रोक्ष्य पुरतः संस्थाप्य वामतर्जन्यां संस्पृशन् श्रीपात्रामृतेन धूपं निवेदयामिति निवेद्य ॐ जगध्वनि विश्वमातः स्वाहेति घण्टां सम्पूज्य वामेन पाणिना तां वादयन् मध्यानामांगुष्ठैर्धूपं धृत्वा ऐं हृंल्लेखायै विद्महे ह्रीं भुवनायै धीमहि श्रीतन्नः शक्तिः प्रचोदयात् इति गायत्री मूलमन्त्रंच पठन् वनस्पति रसोत्पन्नो गन्धाढ्यो गन्ध संयुतः। आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोयं प्रतिगृह्यताम् इति त्रिविधो-त्तोल्य देवीं धूपयेत् ततोदीपं सन्मुखे संस्थाप्य पूर्ववत्प्रोक्षणेन पूजनं कृत्वा वाममध्य मयदीपपात्रं स्पृशन् दीपं निवेदयामिति श्रीपात्रा-मृतेन निवेद्य पूर्ववत् घण्टां वादयन् मध्यानामामध्ये दीपमंगुष्ठेन धृत्वा दर्शयेत् पूर्ववद्गायत्रीं च मूलं पठन्। सुप्रकाशो महादीपः सर्वतस्ति मिरापहः। सबाह्याभ्यन्तरे ज्योतिर्दीपोयं प्रतिगृह्यताम् इति दीपं दद्यात्। ततः स्वर्णादिपात्रे कुंकुमेन वसुपत्रं चन्द्ररूपं

चरुं कृत्वा मध्ये दीप मेकराष्ट पत्रेषु दीपाष्टकं संस्थाप्य मूलमन्त्रेण प्रज्वाल्य श्रीं सौः ग्लूं स्लूं प्लूं ज्लूं सौः श्रीरत्नेश्वर्यै नमः इत्यभ्यर्च्य मूलेन चाभ्यर्च्य स्थालकं मस्त कान्त मुद्धृत्य नववारं मूलं च पठित्वा गायत्रीं पठित्वा। समस्त चक्रचक्रेशोपूतेदेवि नवात्मिके। आरार्तिक मिदंदेवि गृहाण ममसिद्धये। इति चक्र मुद्रया नीराजयेत्। ततो नानानैवेद्यं स्वर्णादिपात्रे निक्षिप्य नमः इत्यभ्युक्ष्य हूं इत्यवगुंठ्य धेनुमुद्रयामृतीकृत्य मूलं सप्तधा जप्त्वा वामाङ्गुष्ठेन नैवेद्य पात्रं स्पृशन् मूलान्ते। हेमपात्रगतं दिव्यं परमान्नं सुसंस्कृतम्। पञ्चधा पट्रसोपेतं गृहाण परमेश्वरि। स्फारस्सौरभनिर्भरं रुचिकरं शाल्योदनं निर्मलं युक्तं हिंगुमरीचजीरसुरभिद्रव्यान्वितैर्व्यञ्जनैः। पक्वान्नेन सपायसेन मधुना दध्याज्य संमिश्रितं नैवेद्यं सुरसुन्दरी विरचितं श्रीसुन्दरी त्वत्प्रिये। ह्रां हृदयाय नमः। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रूं शिखायै वषट्। ह्रैं कवचाय हुम्। ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ह्रः अस्त्राय फट्। ॐ हृल्लेखायै नमः। ऐं गगनायै नमः। उं रक्तायै नमः। इं करालिकायै नमः। औं महोच्छुष्मायै नमः। गं गङ्गायै नमः। यं यमुनायै नमः। सं सरस्वत्यै नमः। गायत्री सहित ब्रह्मणे नमः। सावित्री सहित विष्णवे नमः। पार्वती सहित रुद्राय नमः। लक्ष्मी सहित कुवेराय नमः। रति सहित मदनाय नमः। पुष्टि सहित विघ्नराजाय नमः। शङ्ख निधये नमः। पद्म निधये नमः। अनङ्ग कुसुमायै नमः। अनङ्ग कुसुमातुरायै नमः। अनङ्ग मदनायै नमः। अनङ्ग मदनातुरायै नमः। अनङ्ग मेखलायै नमः।

भुवनपालायै नमः। गगनवेगायै नमः। शशिरेखायै नमः। करालयै नमः। विकरालयै नमः। उमायै नमः। सरस्वत्यै नमः। श्रियै नमः। दुर्गायै नमः। लक्ष्म्यै नमः। सत्यै नमः। श्रुत्यै नमः। स्मृत्यै नमः। धृत्यै नमः। श्रद्धायै नमः। मेधायै नमः। मत्यै नमः। रत्यै नमः। अनङ्ग रूपायै नमः। अनङ्ग मदनायै नमः। भुवनवेगायै नमः। भुवनपालिकायै नमः। सर्वशिशिरायै नमः। अनङ्गवेदनायै नमः। अनङ्गमेखलायै नमः। ब्रह्मादिभ्यो नमः। इन्द्राय नमः। अग्नये नमः। यमाय नमः। निऋृतये नमः। वरुणाय नमः। वायवे नमः। कुबेराय नमः। ईशानाय नमः। ब्रह्मणे नमः। अनन्ताय नमः। वज्राय नमः। शक्तये नमः। दण्डाय नमः। खड्गाय नमः। पाशाय नमः। ध्वजाय नमः। गदाय नमः। त्रिशूलाय नमः। पद्माय नमः। चक्राय नमः। पाशाय नमः। अङ्कुशाय नमः। वराय नमः। अभयाय नमः। वटुकाय नमः। योगिन्यै नमः। क्षेत्रपालाय नमः। गणेशाय नमः। मूलं श्रीमदीश्वर सहितायै सवाहनायै सायुधायै सपरिवारायै श्रीमच्छ्री भुवनेश्वरी भगवत्यै नैवेद्यं निवेदयामि इति दक्षानामांगुष्ठाभ्यामुत्सृजेत्। ततः मूलं एतदाचमनीयं श्रीमदीश्वर सहितायै श्रीमच्छ्री भुवनेश्वर्यै स्वधा इति दत्वा ग्रास मुद्राः प्रदर्शयेत्। यथा—ॐ प्राणाय स्वाहा दक्षाङ्गुष्ठ कनिष्ठानामाभिः। ॐ अपानाय स्वाहा दक्षाङ्गुष्ठ तर्जनी मध्यमाभिः। ॐ समानाय स्वाहा दक्षाङ्गुष्ठ मध्यमानामाभिः। ॐ उदानाय स्वाहा दक्षाङ्गुष्ठ तर्जनी मध्यमानामाभिः। ॐ व्यानाय स्वाहा।

सर्वाङ्गुलीभिः इति प्रदर्श्य पुनराचमनीयं दद्यात् मूलान्ते श्रीमदीश्वर सहितायै श्रीमच्छ्री भुवनेश्वरी भगवत्यै कर्पूरादि युक्तं ताम्बूलं निवेदयामि नमः इति दद्यात्। सर्वेषां अर्घपात्र जलेनोत्सर्गः कार्यम्। तत्रतत्त्वमुद्रया श्रीपात्रामृतेन मूलं श्रीमदीश्वर सहितायै सायुधां सपरिवारां सवाहनां सावरणां श्रीमच्छ्री भुवनेश्वरी भगवतीं तर्पयामि नमः इति त्रिः सन्तर्प्य पूर्वोक्तमुद्राः प्रदर्श्य योनिं हृदि क्षोभिणीं मुखे द्राविणीं भ्रूमध्ये आकर्षिणीं ललाटे वशिनीं ब्रह्मरन्ध्रे आह्लादिनीं पञ्चमुद्रामपि प्रदर्श्य कृताञ्जलिः श्रीमच्छ्री भुवनेश्वरी भगवतीं आवरणान्ते पूजयामि नमः इत्याज्ञां गृहीत्वा आवरण पूजामारभेत्। यथा—तत्रादौ देव्याः पृष्ठे त्रिकोणान्तराले रेखात्रयं विभाव्य गुरुपङ्क्तित्रयं पूजयेत्। यथा—ऐं दिव्यौघपराख्या गुरुपङ्क्ति पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः इति प्रथम रेखायां सम्पूज्य गुरुपात्र विन्दुभिस्तर्पयेत्। ऐं सिद्धौघपरापराख्यगुरुपङ्क्ति श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः शक्तिमूर्ति श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः इति द्वितीय रेखायां अत्रैव गुरु परमगुरुं परमेष्ठीगुरु परमाचार्यादीन् सम्पूज्य गुरुपात्राम्बुभिस्तर्पयेच्च इति त्रिः सकृद्वा सम्पूज्य मध्ये विन्दौ श्रीदेवीं पूजयेत्। यथा—तत्रादौ कुसुमाञ्जलिं दत्वा पूजयेत्। मूलं श्रीमदीश्वर भैरवाङ्कोपविष्टां श्रीहृल्लेखा परमरूपिणीं श्रीमच्छ्री भुवनेश्वरी भगवतीं पूजयामि नमः इति सम्पूज्याष्टोत्तर शतवारं वैकवारं सन्तर्प्य च कुसुमाञ्जलिं गृहीत्वा अभी सिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले। भक्त्या समर्पयेतुभ्यं प्रथमावर्णार्चनम् इति

कुसुमाञ्जलिं दत्वा योनि मुद्रया प्रणमेत्। इति बिन्दुचक्र पूजा प्रथमावरणम्।

अथ त्रिकोण पूजा। मूलं सर्वसिद्धि प्रदायक चक्राय नमः इत्यादौ कुसुमाञ्जलिनासम्पूजयेत्। यथा—अग्रे ऐं गगना श्रीपादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः। दक्षिणे ऊं रक्ता श्रीपा० पू० त० न०। उत्तरे ई करालिका श्रीपा० पू० त०। पूर्वे श्रीदेवी श्रीपा० पू० त० न०। पश्चिमे अं महोच्छुष्मा श्रीपा० पू० त० न०। इति सम्पूज्य सन्तर्प्य गगनाग्रे मूलेन देवीं सम्पूज्य सन्तर्प्य कुसुमाञ्जलिं गृहीत्वा। अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले। भक्त्या समर्पयेतुभ्यं द्वितीया वरणार्चनम् इति कुसुमाञ्जलिं दत्वा योनि मुद्रया प्रणमेत्। इति द्वितीयावरण पूजा।

अथ षट्कोण पूजा। मूलं सर्वरोगहर चक्राय नमः इति प्रथमतः कुसुमाञ्जलिं दत्वा पूजयेत्। यथा—पूर्वे ॐ गायत्री सहित ब्रह्मा श्रीपा०। नैर्ऋत्ये सावित्री सहित विष्णु श्रीपा०। वायव्ये ॐ सरस्वती सहित रुद्र श्रीपा०। अग्निकोणे श्री सहित धनपति श्रीपा०। पश्चिमे रति सहित स्मर श्रीपा०। ऐशान्यां पुष्टि सहित गणपति श्रीपा०। षट्कोणस्योभय पार्श्वयोः ॐ शंखनिधि श्रीपा०। पद्मनिधि श्री अत्रैव केसरेषु। अग्नौ ह्रां हृदयाय श्रीपा०। नैर्ऋत्ये ह्रीं शिरः श्रीपा०। वायव्ये ह्रूं शिखा श्रीपा०। ऐशान्यां ह्रैं कवच श्रीपा०। मध्ये ह्रौं नेत्र श्रीपा०। दिक्षु ह्रः अस्त्र श्रीपा०। इति सम्पूज्य सन्तर्प्य गायत्र्यग्रे देवीं सम्पूज्य सन्तर्प्य कुसुमाञ्जलिं गृहीत्वा। अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले। भक्त्या

समर्पये तुभ्यं तृतीया वरणार्चनम् इति कुसुमाञ्जलिं दत्वा योनि मुद्रया प्रणमेत्। इति तृतीया वरणम्।

अथाष्टदल पूजा। मूलं सर्वसंक्षोभण चक्रायै नमः इति प्रथमतः कुसुमाञ्जलिं दत्वा पूजयेत्। तद्यथा—पूर्वादितः ॐ अनङ्ग कुसुमा श्रीपा०। ॐ अनङ्ग कुसुमातुरा श्रीपा०। ॐ अनङ्ग मदना श्रीपा०। ॐ अनङ्ग मदनातुरा श्रीपा०। ॐ भुवनपाला श्रीपा०। ॐ गगनवेगा श्रीपा०। ॐ शशिरेखा श्रीपा०। ॐ गगनरेखा श्रीपा०। इति सम्पूज्य सन्तर्प्य अनङ्ग कुसुमाग्रे मूलेन देवीं सम्पूज्य सन्तर्प्य कुसुमाञ्जलिं गृहीत्वा। अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले। भक्त्या समर्पये तुभ्यं चतुर्थावरणार्चनम्। इति चतुर्थावरणम्।

अथ षोड़पदल पूजा। मूलं सर्वाशापूरक चक्रायै नमः इति प्रथमतः कुसुमाञ्जलिनासम्पूज्य। तद्यथा—ॐ कराली श्रीपा०। ॐ विकराली श्रीपा०। ॐ उमा श्रीपा०। ॐ सरस्वती श्रीपा०। ॐ श्री श्रीपा०। ॐ श्रीदुर्गा श्रीपा०। ॐ उषा श्रीपा०। ॐ लक्ष्मी श्रीपा०। ॐ श्रुति श्रीपा०। ॐ स्मृति श्रीपा०। ॐ धृति श्रीपा०। ॐ श्रद्धा श्रीपा०। ॐ मेधा श्रीपा०। ॐ मति श्रीपा०। ॐ कान्ति श्रीपा०। ॐ आर्या श्रीपा०। तद्बहिर्वृत्तमध्ये दल सन्धिषु। आं ब्राह्मी श्रीपा०। ईं माहेश्वरी श्रीपा०। ऊं कौमारी श्रीपा०। ऋं वैष्णवी श्रीपा०। लृं वाराही श्रीपा०। ऐं इन्द्राणी श्रीपा०। औं चामुण्डा श्रीपा०। अः महालक्ष्मी श्रीपा०। तद्बहिः पूर्वादितः। ॐ अनङ्गरूपा श्रीपा०। ॐ अनङ्गमदना श्रीपा०।

ॐ अनङ्गमदनातुरा श्रीपा०। ॐ भुवनवेगा श्रीपा०। ॐ अनङ्ग मदना श्रीपा०। ॐ अनङ्ग मदनातुरा श्रीपा०। ॐ भुवनवेगा श्रीपा०। ॐ भुवनपाला श्रीपा०। ॐ सर्वशिशिरा श्रीपा०। ॐ अनङ्गवेदना श्रीपा०। ॐ अनङ्गमेखला श्रीपा०। इति सम्पूज्य सन्तर्प्य करात्यग्रे मूलेन देवीं सम्पूज्य सन्तर्प्य कुसुमाञ्जलिं गृहीत्वा। अभीष्ट सिद्धिं मे देहि पञ्चमावरणार्चनम् इति कुसुमाञ्जलि दत्वा योनि मुद्रया प्रणमेत्। इति पञ्चमावरणम्।

अथ चतुर्द्वार पूजा। मूलं त्रैलोक्य मोहन चक्राय नमः इति कुसुमाञ्जलिनासम्पूज्य पूर्वादितः पूजयेद्यथा। ॐ लं इन्द्र श्रीपा०। ॐ रं अग्नि श्रीपा०। ॐ यम श्रीपा०। ॐ क्षं निऋृति श्रीपा०। ॐ वं वरुण श्रीपा०। ॐ वं वायु श्रीपा०। ॐ सं सोम श्रीपा०। ॐ हं ईशान श्रीपा०। ईशान पूर्वयोर्मध्ये ॐ आं ब्रह्मा श्रीपा०। निऋृतिवरुणयोर्मध्ये ॐ ह्रीं अनन्त श्रीपा०। इति सम्पूज्य सन्तर्प्य तद्बहिर्वज्रादीन पूजयेत्। तद्यथा—ॐ वज्र श्रीपा०। ॐ शक्ति श्रीपा०। ॐ दण्ड श्रीपा०। ॐ खड्ग श्रीपा०। ॐ पाश श्रीपा०। ॐ ध्वज श्रीपा०। ॐ गदा श्रीपा०। ॐ त्रिशूल श्रीपा०। ॐ पद्म श्रीपा०। ॐ चक्र श्रीपा०। इति सम्पूज्य सन्तर्प्य वरुणाग्रे देवीं मूलेन सम्पूज्य सन्तर्प्य कुसुमाञ्जलिं गृहीत्वा। अभीष्ट सिद्धि० षष्ठमावरणार्चनम् इति कुसुमाञ्जलिं दत्वा योनि मुद्रया प्रणमेत्। इति षष्ठमावरण पूजा।

इत्थं पुनश्चतुर्द्वारमारभ्य बिन्द्वन्तं सम्पूजयेत्। ततः पुनर्बिन्दौ मूलं श्रीमदीश्वर भैरवाङ्कोपविष्टां सवाहनां सपरिवारां सावरणां

श्रीमच्छ्री भुवनेश्वरी भगवतीं पूजयामि नमः तर्पयामि नमः इति पाद्यादिभिः सम्पूज्य सन्तर्पयेत्। ततो देवी वाम हस्तोर्ध्वे ॐ पाश श्रीपा०। दक्ष हस्तोर्ध्वे ॐ अं अङ्कुश श्रीपा०। वाम हस्ताधः वं वर श्रीपा०। दक्ष हस्ताधः ॐ अं अभय श्रीपा०। इति सम्पूज्य सन्तर्पयेत्। ततः पुनश्चतुरस्रे पश्चिमे वां वटुकाय श्रीपा०। उत्तरे यां योगिनी श्रीपा०। पूर्वे क्षां क्षेत्रपाल श्रीपा०। दक्षिणे गं गणेश श्रीपा०। इति सम्पूज्य सन्तर्पयेत् पुनर्बिन्दौ पूर्ववन्मूलं देवीं सम्पूज्य सन्तर्प्य योनि मुद्रां प्रदर्श्य प्रणम्य पुनर्मूलं पठन पुष्पाञ्जलि त्रयेण सम्पूज्य नित्यहोमगार भेद्यथा। तत्र कुण्ड त्रिकोण चतुरस्रं विभाव्य क्रिया शक्त्यात्मनं कुण्डाय नमः इति कुण्डं सम्पूज्य तत्राग्नि मानीय स्वचैतन्यानलं तस्मिन् संयोज्य रं अग्नये नमः इति सम्पूज्य नैऋतेपात्रं सजलं पुष्पत्रितय सहितं मूलेन मन्त्रितं संस्थाप्य अस्त्राय फड़िति सामान्यार्घ्यवत्सम्पूज्य ॐ फट् क्रव्या दं सं निष्कर्पयामि फट् इति दर्भकाण्ड द्वयं प्रज्वाल्य बहिःक्षिपेत् इति क्रव्यादादि शुद्धि कृत्वा सामान्य जलेन ॐ फट् ॐ अग्निं परिसमूहामि फट् अग्निं पर्युक्षामि फट् फट् अग्निं परिषिंचामि फट् इति सम्प्रोक्ष्य फट् यज्ञस्य संततिरसि यज्ञस्य त्वा संतत्यै स्तृणामि फट् इति पूर्ववत्त्रयं दक्षिणेपश्च उत्तरेपश्च पश्चिमेत्रयः दर्भानास्तीर्य रं अग्नये नमः इति पुनर्गन्धादिना सम्पूज्य आज्यपात्र मानीयाग्न्युपरि संस्थाप्य स्वमन्त्रेण सम्पूज्याज्यवीक्षणं कुर्याद्यथा। ॐ आज्यं तेजः समुद्दिष्टमाज्यं पापहरं परम् आज्यं सुराणा माहारः आज्ये लोकाः प्रतिष्ठिताः। दिव्यान्तरिक्ष भौमा-

द्यैयंत्ते किल्विषमागतम्। तत्सर्वमाज्यस्पर्शन विनाशमुपगच्छतु। आत्मनो वाङ्मनः कायोपार्जित पाप निवारणार्थं श्रीभुवनेश्वरी प्रीत्यर्थं इदमाज्यं समर्पयामि नमः इत्याज्यं वीक्ष्य मूलेन चरु आदिकं संमन्त्र्य पूर्णांदद्यात्। मूलं पठन् स्रुचं घृतपूर्णांकृत्वा स्वदेवताध्यानं पठन पूर्णाहुतिं दद्यात् ततोग्नौ देवता मावाह्य पाद्या-दिभिः सम्पूज्य वामकरेण मालां गृहीत्वा दक्षकरेणस्रुचं गृहीत्वा यथाशक्ति मनु होमं कृत्वा षड़ङ्गा हुतिर्जुहुयात्। यथा—ॐ ह्रां हृदयाय नमः स्वाहा। ॐ ह्रीं शिरसे नमः स्वाहा। ॐ ह्रूं शिखायै वषट् स्वाहा। ॐ ह्रैं कवचाय हुंम् स्वाहा। ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् स्वाहा। ॐ ह्रः अस्त्राय फट् स्वाहा। इति हुत्वा प्राणाय स्वाहा। अपानाय स्वाहा। समानाय स्वाहा। उदा-नाय स्वाहा। व्यानाय स्वाहा। ॐ भूः स्वाहा। ॐ भुवः स्वाहा। ॐ स्वः स्वाहा। ॐ महः स्वाहा। ॐ जनः स्वाहा। ॐ तपः स्वाहा। ॐ सत्यं स्वा। इति हुत्वा आवरणदेवता होमं कुर्यात्। यथा—तत्रादौ गुरवः। ॐ दिव्यौघपराख्यागुरुपंक्त्यै स्वाहा। ॐ सिद्धौघपराख्या गुरुपंक्त्यै स्वाहा। शक्ति श्रृपये नमः स्वाहा। ऐं मानवौघपराख्या गुरुपंक्त्यै स्वाहा। इति हुत्वा स्वगुरुपरमगुरु परमाचार्यादिगुरूणां पृथक् पृथगाहुतिं दद्यात्।

अथावरण देवताः। ऐं गगनायै स्वाहा। उं रक्तायै स्वाहा। इं करालिकायै स्वाहा। अं महोच्छुष्मायै स्वाहा। गायत्री सहित ब्रह्मणे स्वाहा। सावित्री सहित विष्णवे स्वाहा। पार्वती सहित रुद्राय स्वाहा। श्री सहित धनपतये स्वाहा। रति सहित स्मराय

स्वाहा। पुष्टि सहित गणपतये स्वाहा। ह्रां हृदयाय स्वाहा। ह्रीं शिरसे स्वाहा। ह्रूं शिखायै वषट् स्वाहा। ह्रैं कवचाय हुंम् स्वाहा। ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट् स्वाहा। ह्रः अस्त्राय फट् स्वाहा। अनङ्ग मदनातुरायै स्वाहा। उं रक्तायै स्वाहा। भुवनपालायै स्वाहा। गगनवेगायै स्वाहा। शशिरेखायै स्वाहा। गगनरेखायै स्वाहा। करात्यै स्वाहा। विकरात्यै स्वाहा। उमायै स्वाहा। सरस्वत्यै स्वाहा। श्रियै स्वाहा। दुर्गायै स्वाहा। उरवायै लक्ष्म्यै स्वाहा। श्रुत्यै स्वाहा। स्मृत्यै स्वाहा। धृत्यै स्वाहा। श्रद्धायै स्वाहा। मेधायै स्वाहा। मत्यैं स्वाहा। कान्त्यै स्वाहा। आचार्यैं स्वाहा। अनङ्ग रूपायै स्वाहा। अनङ्ग मदनायै स्वाहा। अनङ्ग मदनातुरायैं स्वाहा। भुवनवेगायैं स्वाहा। भुवनपालिकायैं स्वाहा। सर्वशिशिरायैं स्वाहा। अनङ्ग वेदनायै स्वाहा। अनङ्ग मेखलायै स्वाहा। लं इन्द्राय स्वाहा। रं अग्नये स्वाहा। यं यमाय स्वाहा। क्षं निऋतये स्वाहा। वं वरुणाय स्वाहा। पं वायवे स्वाहा। सं सोमाय स्वाहा। हं ईशानाय स्वाहा। आं ब्राह्मणे स्वाहा। ह्रीं अनन्ताय स्वाहा। वज्राय स्वाहा। शक्तये स्वाहा। दण्डाय स्वाहा। खड्गाय स्वाहा। पाशाय स्वाहा। ध्वजायै स्वाहा। गदायैं स्वाहा। त्रिशूलाय स्वाहा। पद्माय स्वाहा। चक्राय स्वाहा। मूलं श्रीमदीश्वराङ्कोप विष्टायैं सायुधायैं सवाहनायैं समुद्रायैं सपरिवारायै श्रीमच्छ्री भुवनेश्वरी भगवत्यै स्वाहा इति शतवारंहुत्वा पूर्णाहुत्ति दद्यात्। तद्यथा—मूलं ध्यानसम न्यूनातिरिक्तं ······ भिरस्तु वौषट् स्वाहा इति पूर्णांदत्वा

गुह्यातिगुह्यगोप्त्रित्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्। सिद्धिर्भवतु मेदेवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि। इत्यर्पणं विधाय अग्निरितिभस्म वायुरितिभस्म जलमिति स्थलमितिभस्म आशा इति भस्म। शिवमस्तु यजमानस्य छिद्रं मां भूत्कदाचन। देवदेव्याः प्रसादेन रक्ष-रक्षातु माभूशम्। इति पठेत् ललटे भस्म तिलकं कुर्यात्। ततो देवतां विसृज्य फट् अग्नि विमुंचामि फट् इत्यग्नि विमुंच्य। क्षमस्व मन्त्र नाथाय नित्यानन्द मथायच। धर्मार्थ काम मोक्षाय पुनरागमनायच इत्याग्नौ पुष्पं दत्वा योनि मुद्रया ब्रह्माग्नि स्वात्माग्नौ संयोज्य प्रणमेत्। इति नित्य होम विधिः।

अत्र वटुकादि बलिः। तत्रादौ ईशाने मण्डलं कृत्वा तत्र पात्रं संस्थाप्य वां वटुकाय नमः इति वटुक पात्रं सम्पूज्य ह्रीं श्रीं एह्येहि देवी पुत्र वटुकनाथ कपिल जटाभारभास्वरत्रिनेत्र ज्वालामुख सर्वविघ्नान्नाशय २ मम सर्वोपचार सहितं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा इति वामाङ्गुष्ठानामिकाभ्यां वटुक बलिं दद्यात्। ततः आग्नेये योगिनीपात्रं संस्थाप्य यां योगिनीभ्यो नमः इति सम्पूज्य। ऊर्ध्वं ब्रह्माण्डतोवादिविगगनतलेभूतले निष्कले वा पाताले चानले वा सलिल पवनयोर्यत्र कुत्र स्थितावा। क्षेत्रे पीठोपपीठा दिषु च कृत-पदा धूपदीपादिकेन प्रीतादेव्यः सदानः शुभ बलि विधिना पातु वीरेन्द्रवन्द्याः ॥१॥ यां योगिनीभ्यः स्वाहा। सर्वयोगिनीभ्यो हुं फट् स्वाहा इति वामांगुष्ठ मध्यमाभ्यां योगिनी बलिं दद्यात्। ततः नैर्ऋत्ये क्षेत्रपालपात्रं संस्थाप्य क्षां क्षेत्रपालाय नमः इति सम्पूज्य क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं: क्षेत्रपाल अग्निबलिसहितं बलिं गृह्ण २

स्वाहा। योस्मिन्क्षेत्रे निवासीच क्षेत्रपालः सकिंकरः। सुप्रीतो बलिदानेन ममरक्षां करोतुसः इति वामांगुष्ठ तर्जनीभ्यां क्षेत्रपालाय बलिं दद्यात्। ततो वायव्ये गणपतिपात्रं संस्थाप्य गं गणपतये नमः इति सम्पूज्य गां गीं गूं गैं गौं गः गणपतये वरवरद सर्वजनं मे वश मानय बलिं गृह्ण २ स्वाहा इति वामांगुष्ठ मध्यमाभ्यां गणपति बलिं दद्यात्। ततः उत्तरे सर्वभूतपात्रं संस्थाप्य सर्वेभ्यो भूतेभ्यो नमः इति सम्पूज्य ह्रीं सर्वविघ्नकृद्भ्य सर्वभूतेभ्यो हूं स्वाहा सर्वभूतेभ्यः एष बलिर्नमः इति वामहस्त सर्वाभिरंगुलिभिः सर्वभूत बलिं दद्यात्। इति बटुकादि बलिः।

अस्मिन्नेवावसरेछागादि बलिं दद्यात्। तद्यथा—तत्रादौ पशु-मूलेनानीय पाद्यादिगन्धस्त्रगादिभिरलं कृत्य देव्यग्रे संस्थाप्य मूलेन प्रोक्षणीजलेन सम्प्रोक्ष्य अस्त्राय फड़िति संरक्ष्य हूमित्यवगुंठ्य धेनु मुद्रया मृतीकृत्य ऐं ह्रीं श्रीं सर्वदेवतारूपिणे बलिरूपायामुक पशवे नमः इति गन्धादिना त्रिः सम्पूज्य तस्य दक्षकर्णे पशुपाशाय विद्महे विप्रकर्णाय धीमहि तन्नो जीव प्रचोदयात् इति पशु गायत्रीं त्रिः पठित्वा पुरतः खड्गं निधाय ॐ किलकिल वज्रेश्वरी लोह-दण्डायै नमः इति गन्धादिना त्रिरभ्यर्च्य तस्य मुष्टौ वागीश्वरी ब्रह्माभ्यां नमः। मध्ये लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः। अग्रे उमा-महेश्वराभ्यां नमः इति सम्पूज्य तं धृत्वा मन्त्रं पठेत्। खड्गाया सुरनाशाय देवकार्यार्थे तत्पर। पशुश्छेद्य त्वया शीघ्रं खड्गनाथ नमोऽस्तुते इत्याभि मन्त्र्य गन्धाक्षत जलादिकमादाय मूलं अमुक मासेत्यादि अमुकगोत्रोऽमुक शर्मा अमुक कामः श्रीभुवनेश्वरि

इमं पशुं तुभ्यं समर्पयामि अहं प्रसीद इति पठित्वा पशोः शिरसि निक्षिप्य तच्छिरोधृत्वा। यज्ञार्थं पशवः सृष्टाः यज्ञार्थं पशुघातनम्। अतस्त्वां घातयिष्यामि तस्माद्यज्ञे वधोवधः। शिवाय तुभ्य मिदं पिण्डं सतस्त्वं शिवतां गतः उद्बुध्यस्व पशो त्वं हि नाशिवस्त्वं शिवोऽसिहि इति बोधयित्वा खड्गमादाय सौः अस्त्राय फट् छिन्धि छिन्धि स्वाहा इति स्कन्धं तस्य स्कन्धं योजयेत्। ततः स्वयं देवीरूपो भूत्वा निर्विकल्प एकेन प्रहारेण छिन्द्यात्। सविकल्पक परहस्तेन छेदयेत् अत्रैव ब्रह्मणा तिक्तैः पश्चादिति वलिं दद्यात्। इति वलिप्रदान विधिः।

ततो गुरुदिवोघान् ध्यायन प्राणायाम ऋष्यादि करपड्ङ्गध्यानं कृत्वा मन्त्रसंस्कारं कुर्यात्। ह्रीं ह्रीं ह्रीं इति त्रिः पठेत्। इति संजीवनम्।

अथोत्कीलनम्। नमः ह्रीं इत्युत्कीलनं त्रिः जपेत्।

अथ शापहरि विद्या। ह्रीं भैरवशापं मोचय २ ह्रीं इति शापहरो दशवारं जपेत् इति मन्त्रसंस्कारं कृत्वा ईश्वरमन्त्रं दशवारं जप्त्वा वाम हस्ते पात्रे वां मालां संस्थाप्य। ॐ मालेमाले महामाले सर्वसत्त्व स्वरूपिणी। चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदाभव इति मालां मूलेनापि सम्पूज्य गं अविघ्नं कुरु २ माले त्वं इति दक्षकरे गृहीत्वा यथा शक्ति जपं विधाय जपान्ते। त्वं माले सर्वदेवानां प्रीतिदा शुभदा तथा। शुभं कुरुष्व मेदेवि यशो वीर्यं ददस्वमे इति पठन् मालां शिरसि संस्थाप्य पुनरपि प्राणायाम

ऋष्यादि करपङ्ङ्ग न्यासान् विधाय नमः ह्रँ इति सम्पुट मन्त्रं जप्त्वा। गुह्यातिगुह्य गोप्त्रि त्वं० इत्यनेन तेजोमयं जपफलं देवी वामहस्ते समर्प्य कवच सहस्र नाम स्तोत्रादि पठित्वा गुरुस्तोत्रं पठेत्। सर्वमङ्गल माङ्गल्ये शिवे सर्वार्थ साधिके। शरण्ये ऽयम्बिकेगौरि नारायणि नमोऽस्तुते। इति चतुर्वारं प्रदक्षिणीकृत्य। अपराधो भवत्येव सेवकस्य पदे पदे। कोपरः सहते लोके केवलं स्वामिनं बिना। इत्यष्टाङ्गं प्रणिपत्य ततः सामान्यार्घोदके चुलुकोदकेन गृहीत्वा ॐ इतः पूर्वं प्राणबुद्धि देहधर्माधिकारतो जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यवस्थासु मनसावाचा कर्मणा उदरेण शिश्न्या यत्स्मृतं यदुक्तं यत्कृतं तत्सर्वं सामदीयं सकलं श्रीभुवनेश्वरी भगवति चरण कमले समर्पण मस्तु। ॐ तत्सत् इति सामान्यार्घ्योदकं समर्प्य अञ्जलिं बद्ध्वा। यद्दत्तं भक्ति मार्गेण पुष्पं पत्रं फलं जलम्। निवेदितं च नैवेद्यं तद्गृहाणानुकम्पया ॥१॥ आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम्। पूजाभागं न जानामि क्षम्य तां परमेश्वरि। देवी दात्री च भोक्त्री च देवी सर्वमिदं जगत्। देवी जयतु सर्वत्र या देवी सोहमेवहि। यदक्षरपदं भ्रष्टं मात्रहीनं च यद्गतम्। तत्सर्वं कृपयादेवि गृहाणाराधनं मम प्रातः प्रभृति सायान्तं सायादि प्रातरन्ततः। यत्करोमि जगद्योने वदस्तु तव पूजनम्। क्षमस्व देवदेवेशि भुवनेशि महेश्वरि। तव पादाम्बुजे नित्यं निश्चला भक्तिरस्तु मे। इति देवीं पुष्पाञ्जलिना क्षमाप्य ततः शंख मुत्थाप्य साधुवासाधुवा कर्म यद्यदाचरितं मया। तत्सर्वं कृपयादेवि गृहाणाराधनं मम। इति शंखं

त्रिः भ्राम्य तज्जलं देवी दक्षहस्ते समर्प्य पुनस्तज्जलं वामहस्ते गृहीत्वा शंखं स्वस्थाने स्थाप्य तज्जलं मन्त्रेण संमंत्र्य तेन जलेन सप्तधा मूलं पठन् स्वशरीरं प्रोक्षयेत् ततः पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा। गच्छ २ परंस्थानं स्वस्थानं परमेश्वरि। यत्र ब्रह्मादयो देवा न विदुः परमं पदम् इति देवीं विसृज्य संहार मुद्रया निर्माल्य पुष्पमाघ्राय। तिष्ठ तिष्ठ परं स्थाने स्वस्थानं परमेश्वरि। यत्र ब्रह्मादयः सर्वे सुरास्तिष्ठन्ति मे हृदि। इति श्रीचक्रा तेजो रूपां देवीं मनसोत्थाप्य स्वहृदि संस्थापयेत्। ततश्चण्डेश्वराय नमः इति निर्माल्यं सम्पूज्य ईशानकोणे त्रित्रिकोणं संलिख्य तत्र ॐ ह्रीं उच्छिष्ट चाण्डालिनि सर्वसत्त्ववशङ्करी स्वाहा इति उच्छिष्ट चाण्डालिनीं निर्माल्येन सम्पूज्य लेह्यचोष्यान्नपानादि ताम्बूलं स्रग्विलेपनम्। निर्माल्य भोजनं तुभ्यं ददामि श्रीशिवाज्ञया इति नैवेद्यं शतांशतस्यैदत्वा विसृजेत् ततः श्रीपात्र मुत्थाप्य गुरुमन्त्रं स्मरेत् शिरसि संस्थाप्य तज्जलं किञ्चत्पात्रान्तरे संस्थाप्य तेन अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः मूलं आत्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहा। कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं मूलं विद्या तत्त्वं शोधयामि स्वाहा। यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं ऽं ऽं मूलं शिवतत्त्वं शोधयामि स्वाहा। अमित्या दिक्षान्तं उच्चार्य मूलं सर्वतत्त्वं शोधयामि स्वाहा। इति चुलुक चतुष्टयं स्वीकुर्यात्। ततो गुरुपात्र मुत्तोल्य श्रीगुरु मन्त्रं पठन् गुरुसद्भावे गुरवेदद्यात्। गुरोरभावे स्वशिरसि गुरु पादुका स्थाने निक्षिपेत् . अथवा गुरुज्येष्ठ पुत्राय दद्यात् ततः शक्तिपात्र मुत्तोल्य। अलि-

पात्र मिदं तुभ्यं दत्तं सथिशितं मया। स्वीकृत्य शुभगे देवि यशो-विद्यां च देहिमे। इति पठन् शक्तये दद्यात् ततो वीरपात्रामृतं वीरेभ्यो दद्यात् ततः स्वपात्रं कपालिनी मुद्रितेन वामकरेण गृहीत्वा स्वगुरुमार्गेण सामयिकैः सहपात्र वन्दनं कुर्यात्। तद्यथा:—ॐ श्रीमद्भैरव शेखर प्रविलच्चन्द्रामृत प्लावितं क्षेत्राधीश्वर योगिनीगण महासिद्धैः समाराधितं। आनन्दागमकं महात्म कमिदं साक्षात्त्रि खण्डामृतं वन्दे श्री प्रथमं कराम्बुजगतं पात्रं विशुद्धि प्रदम् इत्यभि वन्द्य वन्दनं कृत्वा जुहोमिति गुरुशक्ति साधकेभ्यः आज्ञां गृही-यात् ते च यथोचितं जुपस्व तिब्रूयः ततो मूलाधारात्कुल कुण्डलिनी मिष्ट देवता स्वरूपा मा जिह्वान्तं विभाव्य ॐ आत्मतत्त्वं शोध-यामि स्वाहा इति कुलकुण्डे कुण्डलिनीं जुहुयात् ॥१॥ ॐ हेमं सिन्धु रसावहं दयितया दत्तं च पीयादिभिः किञ्चिच्चलरक्त पङ्कजदशा सानन्द मुद्वीक्षितं। वामे स्वादु विशुद्धि शुद्धि कवलं पाणौ विधायात्मके वन्देपात्र महं द्वितीय मधुना नन्दैक संवर्द्धनम् २ विद्यातत्वं शोधयामि स्वाहा ॥२॥ ॐ सर्वा म्नाय कला कलाप कलितं कौतूहलो द्योतितं चन्द्रोपेन्द्र महेन्द्र शम्भु वरुणा ब्रह्मा-दिभिः सेवितम्। ध्यातं देवगणैः परं मुनिगणै र्मोक्षार्थिभि· सर्वदा वन्दे पात्रमहं तृतीय मधुना स्वात्माव बोधक्षमम् शिवतत्त्वं शोध-यामि स्वाहा ॥३॥ ॐ मद्यं मीनरसावहं हरिहर ब्रह्मादिभिः पूरितं मुद्रामैथुन धर्म कर्म निरतं क्षारामृतिक्ताश्रितम्। आचार्या-र्चितमष्ट भैरवकला न्यासेन संह्लादितं पायात्पञ्चमकार तत्व निलयं पात्रं चतुर्थं नमः प्रकृति तत्वं शोधयामि स्वाहा ॥४॥ ॐ

आधारे भुजगाधि राजवलये पात्रं मही मण्डलं मद्यं सप्त समुद्र वारिपिशितं चाष्टौ च दिग्दन्तिनः। सोहं भैरवमर्चयत्प्रतिदिनं तारागणै रक्षतैरादित्य प्रमुखैः सुरासुरगणैः आज्ञा करैः किंकरैः पुरुषस्तत्वं शोधयामि स्वाहा ॥५॥ ॐ छत्रं चामर भद्रपीठं परमा- नन्दो दयं दायकं वाजीदन्त मनोहरं सुखकरं सायुज्य साम्रा- ज्यदम्। नानाव्याधि भवान्धकारशमनं जन्मान्तरध्वासनं श्रीमद् भैरवी प्रियतरं पात्रं च षष्ठं नमः मनस्तत्वं शोधयामि स्वाहा ॥६॥ ॐ जाग्रत्स्वप्नसुषुप्ति बोध पवनं चैतन्य साक्षी प्रदं विद्युद्- भास्कर वह्नि जिष्णु धनुषां ज्योतिः कलाव्याप्तिम्। वामापिङ्गल मध्यगा त्रिवलया सत्कुण्डली चोर्ध्वगा पात्रं सप्तम पूरणेन तरुणा- नन्द प्रदं पातुमाम् बुद्धितत्वं शोधयामि स्वाहा ॥७॥ ॐ खड्गं पादुक मंजुकं सुतिलकं कंठेहि सारस्वतं शत्रोर्वाग्बल शौर्य कार्य हरणं देह स्थिते कारणम्। वाञ्छासिद्धिकरं मनस्थितिकरं वश्यं नगैर्योपितां पात्रं चाष्टममष्ट सिद्धिकरणां प्रौढ़ः प्रतापं भजे अहङ्कारतत्वं शोधयामि स्वाहा ॥८॥ ॐ सर्वानन्दकरं सदाशिव- पदं सवार्थसम्पत्प्रदं साम्राज्यार्थ करं समस्तसुखदं चाज्ञानविध्वं- सनम्। आयुः कान्तियशोविवर्धनकरं संसारमोहच्छिदं पात्रं लक्ष गुणाकरं च नवमं सर्वार्थ सिद्धिप्रदम् सर्वतत्वं शोधयामि स्वाहा ॥९॥ आत्मानं कृतकृत्यं ज्ञात्वा यथा सुखं विहरेदिति शिवम्। इत्येष पटलोदेवी नित्यपूजा प्रदर्शकः। गुह्याद्गुह्यतरो नित्यं गोप- नीयं प्रयत्नतः। इति श्रीभुवनेश्वरी रहस्ये नित्य पूजपटलः पञ्चः ॥६॥

अथ सप्तमः पटलः

—:o:—

श्री देव्युवाच—

भगवन्परमेशान सर्वागमविशारद ।
कवचं भुवनेश्वर्याः कथयस्व महेश्वर ॥

श्री भैरवउवाच—

शृणुदेविमहेशानि कवचं सर्वकामदम् ।
त्रैलोक्य मोहनं नाम सर्वेप्सित फल प्रदम् ॥२॥
यस्य स्मरण मात्रेण ब्रह्मासंसार सागरे ।
जनार्दनोऽपि देवेशि त्रैलोक्य विजयीभवेत् ॥३॥
धनाधिपः कुबेरोऽपि देवेशोऽपि शचीपतिः ।
पठनात्द्धारणात्सत्यं यतः सर्वे दिगीश्वराः ॥४॥
सर्वैश्वर्य युताः शान्ताः सर्वसिद्धि मवाप्नुयुः ।
यस्य प्रसादादी शोऽपि भैरवानां सुरेश्वरि ॥५॥
त्रैलोक्य प्रथिताख्योहं विद्धि तत्कवचं शिवे ।
क्रोधाधिपो महावीर्यो देवेशो भीम रूप धृक् ॥६॥
न दद्यात्परशिष्येभ्यो दद्यान्छिष्येभ्य एवच ।
अभक्तेभ्योऽपि पुत्रेभ्यो दत्वा नरक माप्नुयात् ॥७॥
त्रैलोक्य मोहनस्यास्य कवचस्य ऋषिः शिवः ।
छन्दो विराट देवता च कीर्तिताभुवनेश्वरी ॥८॥
चतुर्वर्गेषु विधायां विजये परकीर्तिताः ।

अस्य श्री त्रैलोक्य मोहन कवचस्य सदाशिव ऋषिः विराट् छन्दः श्रीभुवनेश्वरी देवता चतुर्वर्ग विधायां लक्ष्मी भोग मोक्ष-फल प्राप्त्यर्थे यन्त्रोद्धारेण कवच पाठे विनियोगः। ॐ ह्रीं क्लीं मेशिरः पातु श्रीं फट् पातु ललाटकं सिद्धपञ्चाक्षरी पायानेत्रे मे-भुवनेश्वरी ॥१॥ श्रीं क्लीं ह्रीं मे श्रुतिः पातु नमः पातुश्च नासिकाम्। देवो षडक्षरीपातु वदनं मुण्ड भूषणा ॥२॥ ॐ ह्रीं श्रीं ऐं गलं पातु जिह्वा पायान्महेश्वरी। ऐं स्कन्धौ पातुमेदेवी महात्रि भुवनेश्वरी ॥३॥ हूं घंटा मे सदा पातु देव्ये काक्षर रूपिणी। ऐं ह्रीं श्रीं हूंतु फट् पाया दीश्वरी मे भुजद्वयम् ॥४॥ ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं फट् पायाद्भुवनेशी स्तनद्वयम्। ह्रां ह्रीं ऐं फट् महामायो देवी च हृदयं मम ॥५॥ ऐं ह्रीं श्रीं हूं तु फट् पायात्पार्श्वौ कामस्वरूपिणी। ॐ ह्रीं क्लीं ऐं नमः पायात्कुक्षि महाषडक्षरी ॥६॥ ऐं सोः ऐं ऐं क्लीं फट् स्वाहा कटिदेशे सदावतु। अष्टाक्षरीं महाविद्या देवेशी भुवने-श्वरी ॥७॥ ॐ ह्रीं ह्रौं ऐं श्रीं ह्रीं फट् पायान्के गुह्यस्थलम् मम। षडक्षरी महाविद्या साक्षाद्ब्रह्म स्वरूपिणी ॥८॥ ऐं ह्रां ह्रौं हूं नमोदेव्येदेवी सर्वं पदं ततः। ॐ दुस्तरं पदं तारय पदं तारय प्रणवद्वयम् ॥९॥ स्वाहा इति महाविद्या जानुनि मे सदावतु। ऐं सोः ॐ ऐं क्लीं फट् स्वाहा जंघेव्याद्भुवनेश्वरी ॥१०॥ ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं फट् पायात्पादौ मे भुवनीश्वरी। ॐ ॐ ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं क्लीं क्लीं ऐं ऐं सांः सोः वद वद वाग्वादिनीति च बीजद्वयं द्वयं देवि विद्यायां विश्वव्यापिनी ॥११॥ सौंः सौंः सौंः ऐं ऐं ऐं क्लीं क्लीं क्लीं श्रीं श्रीं श्रीं ह्रीं ह्रीं ह्रीं ॐ ॐ ॐ चतुर्दशात्मिका विद्या पाया

कवचे नमे ॥१२॥ सकलं सर्वभीतिभ्यः शरीरं भुवनेश्वरी। ॐ ह्रीं श्रीं इन्द्र दिग्भागे पायान्मे चापराजिता ॥१३॥ क्लीं ऐं ह्रीं विजया पायादिन्दु पुरदग्निदिक् स्थले। ॐ श्रीं सोः क्लीं जया पातु याम्यां मां कवचान्वितम् ॥१४॥ ह्रीं ह्रीं ऐं सोः ह्सौंः पायान्नैर्ऋतिमां परात्मिका। ॐ श्रीं श्रीं ह्रीं सदा पायात्पश्चिमे ब्रह्मरूपिणी ॥१५॥ ॐ ह्रां सोः मां भयाद्रक्षेद्वायव्यां मंत्र रूपिणी। ऐं क्लीं श्रीं सौंः सदाव्यान्मां कौवेर्यां नग नन्दिनी ॥१६॥ ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महादेवी ऐशान्यां पातु नित्यशः। ॐ ह्रीं मन्त्रमयी विद्या पायादूर्ध्वं सुरेश्वरी ॥१७॥ ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं मां पायादधस्था भुवनेश्वरी। एवं दशदिशोरक्षेत्सर्वमन्त्रमयी शिवा ॥१८॥ प्रभातेपातु चामुण्डा श्रीं क्लीं ऐं सोः स्वरूपिणी। मध्याह्ने ऽयातुमामम्बा श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सोः स्वरूपिणी ॥१९॥ सायंपाया दुमादेवी ऐं ह्रां क्लीं सोः स्वरूपिणी। निशादौ पातु रुद्राणी ॐ क्लीं क्रों स्वरूपिणी ॥२०॥ निशीथे पातु ब्रह्माणी क्रीं हूं ह्रीं ह्रौं स्वरूपिणी। निशान्ते वैष्णवी पायादों में ह्रौं क्लीं स्वरूपिणी ॥२१॥ सर्व कालं च मां पायादों ह्रीं श्रीं भुवनेश्वरी। एषा विद्या मया गुप्ता तन्त्रेभ्यश्चापि साम्प्रतम् ॥२२॥ देवेशि कथिता तुभ्यं कवचेच्छा त्वयि प्रिये। इति ते कथितं देवि गुह्याद्गुह्य तरं परम् ॥२३॥ त्रैलोक्य मोहनं नाम कवचं मन्त्र विग्रहम्। ब्रह्म विद्यामयं भद्रे केवलं ब्रह्मरूपिणम् ॥२४॥ मन्त्र विद्यामयं चैव कवचं मन्मुखोदितम्। गुरुमभ्यर्च्य विधिवत्कवचं धारयेद्यदि ॥२५॥ साधको वैयथाध्यानं तत्क्षणाद्भैरवो भवेत्। सर्वपाप विनिर्मुक्तः कुलकोटि समुद्धरेत् ॥२६॥

गुरुः स्यात्सर्वविद्यासु ह्यधिकारो जपादिषु। शतमष्टोतरं चास्य पुरश्चर्या विधिः स्मृतः ॥२७॥ शतमष्टोतरं जप्त्वा तावद्धोमादिकं तथा। त्रैलोक्ये विचरेद्धीरो गणनाथो यथा स्वयम् ॥२८॥ गद्य-पद्यमयी वाणी भवेद्गङ्गा प्रवाहवत्। पुष्पाञ्जल्याष्टकं दत्वा मूले-नैव पठेत्सकृत् ॥२९॥

श्री देव्युवाच—

भगवन्करुणाम्भोधे कीदृशं मन्त्रमुत्तमम्।
मूलकं भुवनेश्वर्याः कृपया वक्तुमर्हसि ॥३०॥

ईश्वर उवाच—

शृणु देविप्रवक्ष्येह मुद्धारं मन्त्र विग्रहम्।
देवेशि भुवनेश्वर्या गोप्याद्गोप्यतमं कुरु ॥३१॥
प्रणवं सकला लक्ष्मीः कामं वाग्भवमेवच।
शरश्च भुवनेश्वर्यै मध्येऽन्तश्च नमः इतिः ॥३२॥
प्रोक्तोऽयं भुवनेश्वर्या मन्त्र त्रयोदशाक्षरः। इत्युद्धारः।

प्रकाशम्—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं सौंः भुवनेश्वर्यै नमः। इति मूलम्।

अनेन मन्त्रेण नरेश्वरो यो
ध्याये द्धृदब्जे भुवनेश्वरीं ताम्।
स याति भूपेश्वरतां च भूमौ
मृतोभवेत्सखिदिवे सुरेशः ॥३३॥

भूर्जे विलिख्य गुटिकां स्वर्णस्थां धारयेद्यदि।
पुरुषो दक्षिणे बाहौ योषिद्वाम करे तथा ॥३४॥

सर्वं सिद्धि युतो भूत्वा विचरेद्भैरवो यथा।
तद्गात्रं प्राप्य शस्त्राणि ब्रह्मास्त्रादीनि पार्वती ॥३५॥
अल्पानि कुसुमानीव भवन्ति सुखदानि च।
तस्य गेहे चिरं लक्ष्मीः वाणी च निवसे ध्रुवम् ॥३६॥
इदं कवचम ज्ञात्वा सयन्त्रं मन्त्र विग्रहम्।
यो भजेद् धमोमर्त्यो देवेशि भुवनेश्वरीम् ॥३७॥
अल्पायुर्निर्बलो मूर्खो भवत्येव न संशयः।

श्री देव्युवाच—

कीदृशं भुवनेश्वर्या यन्त्र मन्त्रमयं महत् ॥३८॥
यं दृष्ट्वा लभते मुक्ति पूजित्वा मानवेश्वरः।

भैरव उवाच—

ब्रवीमींयया तुभ्यं गोपनीयं प्रयत्नतः ॥३९॥
यस्य कस्य न दातव्यं दत्वा कुष्ठी भवेच्छिवे।
त्रिकोणं पूर्वमुद्धृत्य ह्यधस्थाद्वीरवन्दिते ॥४०॥
ऊर्ध्वं च तादृशं कुर्यात्त्रिकोणं च पुनः क्षिपेत्।
अधस्तात्कोण कुहरादूर्ध्वं कोणे समाक्षिपेत् ॥४१॥
उत्थाप्योर्ध्वं त्रिकोणञ्च यन्त्रमध्ये विनिक्षिपेत्।
पुनस्त्रिकोण मध्येतु विन्दु स्थानं समाचरेत् ॥४२॥
यन्त्रान्ते चतुरस्राभिः मयाभिः सहितं चरेत्।
लता भिस्सहिता रेखाश्चतस्त्रिः समाचरेत् ॥४३॥
वीजाक्षरान्वि भज्यैवं यन्त्रं प्रोक्तं मया तव।
विन्दोरोर्ध्वञ्च प्रणवं तत् ऊर्ध्वं परा न्यसेत् ॥४४॥

तत ऊर्ध्वं च कमलां सव्ये च मदनं न्यसेत् ।
वामेऽपि चारणं प्रोक्तं पुनः सव्ये शरस्मृता ॥४५॥
वामेप्य चरमां वर्णं नान्यः पर्वतनन्दिनि ।
पर नाम्नो परं वर्णं पुनः वामेऽपि तादृशम् ॥४६॥
पुनर्नामाक्षरं सव्ये तथा वामेऽपि विन्यसेत् ।
बिन्दोरधस्थादपरं तदधस्तात्स्मृतं परम् ॥४७॥
अस्मिन्बीजाक्षराण्येवं विभज्य भुवनेश्वरीम् ।
पूजयेत्साधको धीमान् धारयेत्साधकोत्तमः ॥४८॥
कवचं यन्त्र संयुक्तं सर्वमन्त्र मयं महत् ।
सम्पूज्य कवचं यन्त्रं धृत्वापि साधकेश्वरः ॥४९॥
त्रैलोक्ये विचरेद्वीरो यथैवाहं तथैव सः ।
इदं रहस्य परमं भक्त्या तव मयोदितम् ॥५०॥
यस्य कस्य न वक्तव्यं सत्यं जानीहि सुव्रते ।
कर्मणा मनसा वाचा सत्यं सत्यं सुरेश्वरि ॥५१॥
रहस्यं भुवनेश्वर्या न देयं यस्य कस्यचित् ।
दद्याच्छिष्याय शान्ताय गुरु भक्ति पराय च ॥५२॥
लोभ मोह विहीनाय देवी भक्तियुताय च ।
सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यं जानीहि पार्वति ॥५३॥
इत्येषः पटलो देवि गोपनीयं महेश्वरि ।
कवचोद्धारको नाम साधकेष्टफलः प्रदः ॥५४॥
इति श्री भुवनेश्वरी रहस्ये कवच कथनं सप्तमः पटलः ॥७॥

अथ अष्टमः पटलः

—:०:—

भैरव उवाच—

देवि तुष्टोऽस्मि सेवा भिस्त्वद्रूपेण च भापया।
मनोभिलषितं किञ्चिद्वरं वरय सुव्रते ॥१॥

श्री देव्युवाच—

तुष्टोऽसि यदि मे देव वरयोग्यास्म्यहं यदि।
वद मे भुवनेश्वर्या मन्त्र नामसहस्रकम् ॥२॥

भैरव उवाच—

तवभक्त्या ब्रवीम्यद्य देव्या नाम सहस्रकम्।
मन्त्रगर्भं चतुर्वर्ग फलदं मन्त्रिणां कलौ ॥३॥
गोपनीयं सदा भक्त्या साधकैश्च सुसिद्धये।
सर्व रोग प्रशमनं सर्वशत्रुभयावहम् ॥४॥
सर्वोत्पात प्रशमनं सर्व दारिद्र्य नाशनम्।
यशस्करं श्रीकरं च पुत्र पौत्र विवर्द्धनम् ॥५॥
देवेशि वेत्सि त्वद्भक्त्या गोपनीयं प्रयत्नतः।
अस्य नाम्नां सहस्रस्य ऋषिः भैरवउच्यते ॥६॥
पङ्क्तिश्छन्दः समाख्याता देवता भुवनेश्वरी ॥६॥
ह्रीं बीजं श्रीं च शक्तिः स्यात् क्लीं कीलक मुदाहृतम्।
मनोभिलाप सिद्ध्यर्थं विनियोगः प्रकीर्तितः ॥७॥

ॐ ह्रीं श्रीं जगदीशानि ह्रीं श्रीं बीजा जगत्प्रिया।
ॐ श्रीं जयप्रदा ॐ ह्रीं जया ह्रीं जयवर्द्धिनी ॥८॥
ॐ ह्रीं श्रीं वां जगन्माता श्रीं क्लीं जगद्वर प्रदा।
ॐ श्रीं जुं जटिनी ह्रीं क्लीं जयदा श्रीं जगंधरा ॥६॥
ॐ क्लीं ज्योतिष्मती ॐ जुं जननी श्रीं जरा तुरा।
ॐ स्त्रीं जुं जगतीं ह्रीं श्रीं जप्या ॐ जगदाश्रया ॥१०॥
ॐ श्रीं जुं सः जगन्माता ॐ जुं जगत्क्षयं करी।
ॐ श्रीं क्लीं जानकी स्वाहा श्रीं क्लीं ह्रीं जात रूपिणी ॥११॥
ॐ श्रीं क्लीं जाप्य फलदा ॐ जूं सः जनवल्लभा।
ॐ श्रीं क्लीं जननीतिज्ञा ॐ श्रीं जन त्रयेष्टदा ॥१२॥
ॐ क्लीं कमलपत्राक्षी ॐ श्रीं क्लीं ह्रीं च कामिनी।
ॐ गूं घोरा रवा ॐ श्रीं घोररूपा ह्सौंः गतिः ॥१३॥
ॐ गणेश्वरी ॐ श्रीं शिववामाङ्क वासिनी।
ॐ श्रीं शिवेष्टदा स्वाहा ॐ श्रीं शीतातपप्रिया ॥१४॥
ॐ श्रीं गूं गणमाता च ॐ श्रीं क्लीं गुणिरागिणी।
ॐ श्रीं गणेश माता च ॐ श्रीं शङ्कर वल्लभा ॥१५॥
ॐ श्रीं क्लीं शीतलाङ्गी श्रीं शीतला ॐ शिवेश्वरी।
ॐ श्रीं ग्लौं गजराज स्था ॐ श्रीं गीं गौतमी तथा ॥१६॥
ॐ घां घुरघुर नादा च ॐ गीं गीत प्रिया ह्सौंः।
घरिणी गीं घटान्तस्था ॐ गीं गन्धर्व सेविता ॥१७॥
ॐ गीं श्रीं गोपति स्वाहा ॐ गीं गौं ॐ गणप्रिया।
ॐ गीं गोष्ठी ह्सौः गोप्या ॐ गीं घर्मां शुलोचना ॥१८॥

ॐ श्रीं गंत्री ह्सोः घंटां ॐ घं घंटा रवाकुला ।
ॐ घ्रीं श्रीं घोररूपा च ॐ गीं श्रीं गरुडी ह्सोः ॥१९॥
गणया गीं ह्सोः गुर्वी ॐ श्रीं घोरद्युतिस्तथा ।
ॐ श्रीं गीं गण गन्धर्व सेविताङ्गी गरीयसी ॥२०॥
ॐ श्रीं गाथ ह्सोः गोप्त्री ॐ गीं गणक सेविता ।
ॐ श्रीं गुणमति स्वाहा श्रीं क्ष्रीं गौरी ह्सौः गदा ॥२१॥
ॐ श्रीं गीं गौर रूपाच ॐ गीं गौरस्वरा तथा ।
ॐ श्रीं गीं क्ष्रीं गदाहस्ता ॐ गीं गोंदा ह्सौः पयः ॥२२॥
ॐ श्रीं क्ष्रीं गम्या रूपा च ॐ अगम्या ह्सौः वनम् ।
ॐ श्रीं गीं घोर वदना घोराकारा ह्सौः पयः ॥२३॥
ॐ ह्रीं श्रीं क्ष्रीं कोमलाङ्गी च ॐ क्रीं कालक्षयं करी ।
ॐ क्रीं कर्पट हस्ता च क्रीं हूं कादम्बरी ह्सोः ॥२४॥
क्रीं श्रीं कनकवर्णा च ॐ क्रीं कनक भूषणा ।
ॐ क्रीं काली ह्सोः कान्ता क्रीं हूं कारुण्य रूपिणी ॥२५॥
क्रीं श्रीं कूट प्रिया क्रीं हूं त्रिकूटा क्रीं कुलेश्वरी ।
ॐ क्रीं कम्बल वस्त्रा च क्रों पीताम्बर सेविता ॥२६॥
क्रीं श्रीं कुल्या ह्सौः कीर्तिः क्रीं श्रीं क्ष्रीं क्लेश हारिणी ।
ॐ क्रीं कूटालय क्रीं ह्रीं कूटकर्त्री ह्सोः कुटीः ॥२७॥
ॐ श्रीं क्ष्रीं काम कमला क्ष्रीं श्रीं कमला क्रीं च कौरवी ।
क्रीं श्रीं कुरुरवा ह्रीं श्रीं हाटकेश्वर पूजिता ॥२८॥
ॐ ह्रां रां रम्यरूपाच ॐ श्रीं क्रीं कांचनां गदा ।
ॐ क्रीं श्रीं कुण्डली क्रीं हूं कारावन्धन मोक्षदा ॥२९॥

ॐ क्रीं कुराह स्रौः क्रौं ब्लूं ॐ क्रों कौरव मर्दिनी।
ॐ श्रीं कटु ह स्रौः कुंटी ॐ श्रीं कुष्ठक्षयं करी ॥३०॥
ॐ श्रीं चकोरकी कान्ता क्रीं श्रीं कपालिनी परा।
ॐ श्रीं कालिका कामा ॐ श्रीं ह्रीं क्रीं कलंकिता ॥३१॥
क्रीं श्रीं क्रीं क्रीं कठोराङ्गी ॐ श्रीं कपट रूपिणी।
ॐ क्रीं कामवती क्रीं श्रीं कन्या क्रीं कालिका ह स्रौः ॥३२॥
श्मशान कालिका श्रीं क्रीं ॐ क्रों श्रीं कुटिलालका।
ॐ क्रीं श्रीं कुटिल भ्रु श्च क्रीं हूं कुटिल रूपिणी ॥३३॥
ॐ क्रीं कमलहस्ता च क्रीं कुण्टी ॐ क्रीं कौलिनी।
ॐ श्रीं क्रीं कंठमध्यस्था क्रीं क्रीं कान्ति स्वरूपिणी ॥३४॥
ॐ कार्तु स्वरूपाच ॐ क्रीं कात्यायनी ह स्रौः।
कलावति ह स्रौः काम्या क्रीं कलानिधीशेश्वरी ॥३५॥
ॐ क्रीं श्रीं सर्वमध्यस्था ॐ क्रीं सर्वेश्वरी पयः।
ॐ क्रीं हूं चक्रमध्यस्था ॐ क्रीं श्रीं चक्ररूपिणी ॥३६॥
ॐ क्रीं हूं चं चकोराक्षी ॐ चं चन्दन शीतला।
ॐ चं चर्माम्बरा हूं क्रीं चारुहासा हस्रौः च्युता ॥३७॥
ॐ श्रीं चौरप्रिया हूं च चार्वङ्गी श्रीं चला चला।
ॐ श्रीं हूं कामराज्येष्टा कुलिनी क्रीं ह स्रौः कुहु ॥३८॥
ॐ क्रीं क्रिया क्रीं कुलाचारा क्रीं क्रीं कमल वासिनी।
ॐ क्रीं हेला: हस्रौः लीला: ॐ क्रीं काल विलासिनी ॥३९॥
ॐ क्रीं कालप्रिया हूं क्रीं कालरात्री हस्रौः बला।
ॐ क्रीं श्रीं शशिमध्यस्था क्रीं श्रीं शब्दपर्श लोचना ॥४०॥

ॐ क्रीं शीतांशु मुकुटा क्रीं श्रीं सर्ववर प्रदा।
ॐ श्रीं श्यामाम्बरा स्वाहा ॐ श्रीं श्यामल रूपिणी ॥४१॥
ॐ श्रीं क्रीं श्रीं सती स्वाहा ॐ क्रीं श्रीधर सेविता।
ॐ श्रीं रूक्षा हसौः रंभा ॐ क्रीं रसवर्ति पथा ॥४२॥
कुण्डगोल प्रियकरी ह्रीं श्रीं ॐ क्लीं कुलरूपिणी।
ॐ श्रीं सर्वाहसौः तृप्तिः ॐ श्रीं तारा हसौः त्रया ॥४३॥
ॐ श्रीं तारुण्य रूपा च ॐ क्रीं त्रिनयना पयः।
ॐ श्रीं ताम्बूल रक्तास्या ॐ क्रीं उग्र प्रभा तथा ॥४४॥
ॐ श्रीं उग्रेश्वरी स्वाहा ॐ श्रीं उग्र रवाकुला।
ॐ क्रीं च सर्व भूपाढ्या ॐ श्रीं चम्पकमालिनी ॥४५॥
ॐ श्रीं चम्पक वल्ली च ॐ ह्रीं श्रीं च च्युतालया।
ॐ श्रीं द्युतिमति स्वाहा ॐ श्रीं देव प्रसूः पयः ॥४६॥
ॐ श्रीं दैत्यारि पूजा च ॐ क्रीं दैत्य विमर्दिनी।
ॐ श्रीं द्युमणि नेत्रा च ॐ श्रीं दंभ विवर्जिता ॥४७॥
ॐ दारिद्र्य राशिघ्नी ॐ श्रीं दामोदर प्रिया।
ॐ क्लीं दर्पापहा स्वाहा ॐ क्रीं कन्दर्प लालसा ॥४८॥
ॐ क्रीं करीन्द्रक्षस्था ॐ क्रीं हूंकारि गामिनी।
ॐ क्रीं शुक्रात्मिका स्वाहा ॐ क्रीं शुक्रकरा तथा ॥४९॥
ॐ श्रीं शुक्र श्रुतिः श्रीं क्लीं श्रीं ह्रीं शुक्रकवित्वदा।
ॐ क्रीं शुक्रप्रसू स्वाहा ॐ श्रीं क्रीं शवगामिनी ॥५०॥
ॐ श्रीं रक्ताम्बरा स्वाहा ॐ क्रीं पीताम्बरार्चिता।
ॐ श्रीं क्रीं स्मित संयुक्ता ॐ श्रीं क्रीं सोः स्मरातुरा ॥५१॥

ॐ श्रीं क्रीं हूं च स्मेरास्या ॐ श्रीं स्मर विवर्द्धिनी ।
ॐ श्रीं सर्पाकुला स्वाहा ॐ श्रीं सर्वोपवेशिनी ॥५२॥
ॐ क्रीं सोः सर्पकन्या च ॐ क्रीं सर्पासन प्रिया ।
सौः सौः क्लीं सर्पकुटिला ॐ श्रीं सुरासुरार्चिता ॥५३॥
ॐ श्रीं सुरारिमथिनी ॐ श्रीं सुरिजन प्रिया ।
ऐं सौः सुर्येन्दुनयना ऐं क्लीं सूर्यांयुत प्रभा ॥५४॥
श्रीं क्लीं सुरसेव्या च ॐ श्रीं सर्वेश्वरी तथा ।
ॐ श्रीं क्षेमकरी स्वाहा ॐ क्रीं हूं भद्र कालिका ॥५५॥
ॐ श्रीं श्यामा ह्सौः स्वाहा ॐ श्रीं ह्रीं शर्वरी स्वाहा ।
ॐ श्रीं क्लीं सर्वरी तथा ॐ श्रीं क्लीं शान्त रूपिणी ॥५६॥
ॐ क्रीं श्रीं थीं धरे शानि ॐ श्रीं क्लीं शाकिनी तथा ।
ॐ क्लीं शितिर्ह्सौः शारी ॐ श्रीं क्लीं शारदा तथा ॥५७॥
ॐ श्रीं ह्रीं शारिका स्वाहा ॐ श्रीं शाकंभरी तथा ।
ॐ श्रीं क्लीं शिव रूपा च ॐ श्रीं क्लीं काम चारिणी ॥५८॥
ॐ यं यज्ञेश्वरी स्वाहा ॐ श्रीं यज्ञ प्रिया सदा ।
ऐं क्लीं यं यज्ञ रूपा च ॐ श्रीं यं यज्ञदक्षिणा ॥५९॥
ॐ श्रीं यज्ञार्चिता स्वाहा ॐ यं याज्ञक पूजिता ।
श्रीं ह्रीं यं यज्ञमान स्त्री ॐ श्रीं यज्वा ह्सौः वधू ॥६०॥
ॐ श्रीं वां वटुक पूजिता ॐ श्रीं वरूथिनी स्वाहा ।
ॐ क्रीं वार्ता हसौस्तथा ॥६१॥
ॐ श्रीं क्लीं ऐं च वाराही ॐ श्रीं क्लीं वरवर्णिनी ।
ॐ ऐं सौः वार्तदा स्वाहा ॐ श्रीं वराङ्गना तथा ॥६२॥

ॐ श्रीं वैकुण्ठ पूजा च वां श्रीं ऐं क्लीं च वैष्णवी ।
ॐ श्रीं ब्रां ब्राह्मणी स्वाहा ॐ क्रीं ब्राह्मण पूजिता ॥६३॥
ॐ श्रीं ऐं क्लीं च इन्द्राणी ॐ ॐ क्लीं इन्द्र पूजिताः ।
ॐ श्रीं क्लीं इन्द्रि ऐं स्वाहा ॐ श्रीं इन्दुशेखरा ॥६४॥
ॐ ऐं इन्द्र समानाभा ॐ ऐं क्लीं इन्द्र वल्लभा ।
ॐ श्रीं इडाहसौः नाभि ॐ श्रीं ईश्वर पूजिता ॥६५॥
ब्रौ ब्राह्मो क्लीं च रुद्राणी ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रमा तथा ।
ऐं क्लीं स्थाणु प्रिया स्वाहा ॐ गों गदक्षय करी ॥६६॥
ॐ गीं गीं श्रीं गुरुस्था च ऐं क्लीं गुद विवर्द्धिनी ।
ॐ श्रीं क्रीं क्रुं कुलीरस्था ॐ क्रों श्रीं कूर्मपृष्ठगा ॥६७॥
ॐ श्रीं भूं तोतला स्वाहा ॐ त्रौं त्रिभुवनार्चिता ।
ॐ प्रीं प्रीति हसौः प्रातां प्रीं प्रभा प्रीं पुरेश्वरी ॥६८॥
ॐ प्रीं पर्वत पुत्री च ॐ प्रीं पर्वत वासिनी ।
ॐ श्रीं प्रीति प्रदा स्वाहा ॐ पं सत्त्वगुणाश्रिता ॥६९॥
ॐ क्लीं सत्य प्रिया स्वाहा ऐं सौः क्लीं सत्य सङ्करा ।
ॐ श्रीं सनातना स्वाहा ॐ श्रीं सागर शायिनी ॥७०॥
ॐ क्लीं चं चन्द्रिका ऐं सौः चन्द्रमण्डल मध्यगा ।
ॐ श्रीं चारु प्रभा स्वाहा ॐ श्रीं प्रें प्रेत शायिनी ॥७१॥
ॐ श्रीं श्रीं मथुरा ऐं क्रों काशी श्रीं श्रीं मनोरमा ।
ॐ श्रीं मन्त्रमयी स्वाहा ॐ चं चन्द्रक शीतला ॥७२॥
ॐ श्रीं क्लीं शाकरी स्वाहा ॐ श्रीं सर्वाङ्ग वासिनी ।
ॐ श्रीं सर्व प्रिया स्वाहा ॐ श्रीं क्लीं सत्यभामिनी ॥७३॥

ॐ क्रीं सत्यात्मिका स्वाहा ॐ क्रीं ऐं सौः च सात्त्विकी ।
ॐ श्रीं रां राजसी स्वाहा ॐ क्रों रंभोयमा तथा ॥७४॥
ॐ श्रीं राघव सेव्या च ॐ श्री रावण घातिनी ।
निशुम्भ हन्त्री ह्रीं श्रीं क्रीं ॐ क्रों शुम्भ मदा पहा ॥७५॥
ॐ श्रीं रक्तप्रिया हरा रक्त बीज क्षयं करी ।
ॐ श्रीं माहिष पृष्ठस्था ॐ श्रीं महिष घातिनी ॥७६॥
ॐ श्रीं श्रीं माहिषे स्वाहा ॐ श्रीं श्रीं मानवेष्टदा ।
ॐ श्रीं मति प्रदा स्वाहा ॐ श्रीं मनुमयी तथा ॥७७॥
ॐ श्रीं मनोहराङ्गी च ॐ श्रीं माधव सेविता ।
ॐ श्रीं मागधस्तुत्या च ॐ श्रीं वन्दीस्तुता सदा ॥७८॥
ॐ श्रीं मान प्रदा स्वाहा ॐ श्रीं मान्या हसौः मतिः ।
ॐ श्रीं श्रीं मानिनी स्वाहा ॐ श्रीं मानक्षयं करी ॥७९॥
ॐ श्रीं मार्जार गम्या च ॐ श्रीं मृगी लोचना ।
ॐ मराल मतिः श्रीं श्रीं मकुरा प्रीं च पूतना ॥८०॥
ॐ श्रीं परापरा ॐ श्रीं परिवार समुद्भवा ।
ॐ श्रीं पद्मवरा ऐं सौः पद्मोभवक्षयं करी ॥८१॥
ॐ प्रीं पद्मा हसौः पुराय ॐ प्रीं पुरायाङ्गनातथा ।
ॐ श्रीं ययो दशदशी ॐ प्रीं परात्रतेश्वरी ॥८२॥
ॐ पयोधर नम्राङ्गी ॐ प्रीं धाराधर प्रिया ।
ॐ धृति ऐं दया स्वाहा ॐ श्रीं क्रीं श्री दयावती ॥८३॥
ॐ श्रीं द्रुत गतिः स्वाहा ॐ द्रीं द्रं वन घातिनी ।
ॐ चं चर्माम्बरेशानी ॐ चं चं डाल रूपिणी ॥८४॥

ॐ चामुण्डाहसौः चण्डी ॐ चं क्रीं चण्डिका पयः ।
ॐ क्रीं चण्ड प्रभा स्वाहा ॐ चं क्रीं चारु हासिनो ॥८५॥
ॐ क्रीं श्रीं अच्युतेष्टा ह्रीं चण्ड मुण्ड क्षयं करी ।
ॐ त्रौं श्रीं त्रितये स्वाहा ॐ श्रीं त्रिपुरभैरवी ॥८६॥
ॐ ऐं सौः त्रिपुरानन्दा ॐ ऐं त्रिपुर सून्दिनी ।
ऐं क्लीं सौः त्रिपुराध्यक्षा ऐं त्रौं श्रीं त्रिपुराश्रया ॥८७॥
ॐ श्रीं त्रिनयने स्वाहा ॐ श्रीं तारा वरकुला ।
ॐ श्रीं तुंबुरुहस्ता च ॐ श्रीं मन्द भाषिणी ॥८८॥
ॐ श्रीं महेश्वरी स्वाहा ॐ श्रीं मोदक भक्षिणी ।
ॐ श्रीं मन्दोदरी स्वाहा ॐ श्रीं श्रों मधुरभाषिणी ॥८६॥
ॐ म्रीं श्रीं मधुरालापा ॐ श्रीं मधुरभाषिणी ।
ॐ श्रीं मातामही स्वाहा ॐ मान्या म्रीं मदालसा ॥६०॥
ॐ म्रीं मदोद्धता स्वाहा ॐ म्रीं मन्दिर वासिनी ।
ॐ श्रीं क्लीं षोड़शारस्था ॐ म्रीं द्वादश रूपिणी ॥६१॥
ॐ श्रीं द्वादश पत्रस्था ॐ श्रीं अं अष्टकोणगा ।
म्रीं मातंगी, ह्सौः श्रीं क्लीं मत्तमातङ्ग गामिनी ॥६२॥
ॐ म्रीं मालापक्षा स्वाहा ॐ म्रीं माताहसौः सुधा ।
ॐ श्रीं सुधाकला स्वाहा ॐ स्रीं मांसिनी स्वाहा
ॐ म्रीं मालाकरी तथा ।
ॐ म्रीं माध्वी रसापूर्णा ॐ श्रीं सूर्वा ह्सौंसती ॥६४॥
ॐ ऐं सौः क्लीं सत्यरूपा ॐ श्रीं दीक्षा ह्सौः दरी ।
ॐ द्रीं दातृप्रिया ह्रीं श्रीं दक्षयज्ञ विलासिनी ॥६५॥

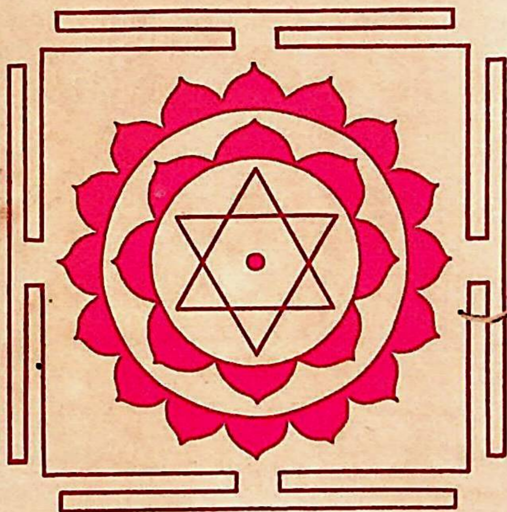
ॐ दात्र प्रसू स्वाहा ॐ श्रीं दाता हसौः पयः!
ॐ श्रीं ऐं सौः च सुमुखी ॐ ऐं सौः सत्य वारुणी।
ॐ श्रीं साडम्बरा स्वाहा ॐ श्रीं ऐं सौः सदागतिः।
ॐ श्रीं सीताहसौः सत्या ॐ ऐं सन्तान शायिनी ॥९६॥
ॐ ऐं सौः सर्व दृष्टिश्च ॐ क्रीं कल्पान्त कारिणी।
ॐ श्रीं चन्द्रकलाधरा ॐ ऐं श्रीं पशुगालिनी ॥९७॥
ॐ श्रीं शिशुप्रिया ऐं सौः शिशूत्संग निवेशिता।
श्रीं ऐं सौः तारिणी स्वाहा ॐ ऐं क्लीं तामसी तथा ॥९८॥
ॐ म्रीं मोहान्धकार म्री ॐ म्रीं मत्तमनास्तथा।
ॐ म्रीं श्रीं माननीया च ॐ प्रीं पूजा फलप्रदा ॥९९॥
ॐ श्रीं श्रीं श्रीफला स्वाहा ॐ श्रीं क्लीं सत्यरूपिणी।
ॐ श्रीं नारायणी स्वाहा ॐ श्रीं क्लीं नूपुराकिला ॥१००॥
ॐ म्रीं श्रीं नारसिंही च ॐ म्रीं नारायण प्रिया।
ॐ म्रीं हंसगतिः स्वाहा ॐ श्रीं हंसो हसौः पयः ॥१०१॥
ॐ श्रीं क्रीं करवालेष्टा ॐ क्रीं कोटरवासिनी।
ॐ क्रीं काञ्चन भूपाढ्या ॐ क्रीं श्रीं कुरीपयः ॥१०२॥
ॐ क्रीं शशिरूपा च ॐ श्रीं सः सूर्य रूपिणी।
ॐ श्रीं वाम प्रिया स्वाहा ॐ वीं वरुण पूजिता ॥१०३॥
ॐ ब्रीं वटेश्वरी स्वाहा ॐ ब्रों वामन रूपिणी।
ॐ रं ब्रीं श्रीं खेचरी स्वाहा ॐ रं ब्रीं श्रीं खाररूपिणी ॥१०४॥
ॐ रं ब्रीं खर्पर यात्रा च ॐ प्रीं प्रेतालया तथा ॥१०५॥

ॐ श्रीं क्लीं प्रौं च दूतात्मा ॐ प्रीं पुण्य विवर्द्धिनी ।
ॐ श्रीं श्रीं शान्तिदा स्वाहा ॐ प्रीं पाताल चारिणी ॥१०६॥
ॐ म्रीं मूकेश्वरी स्वाहा ॐ श्रीं श्रीं मन्त्र सागरा ।
ॐ श्रीं क्रीं क्रयदा स्वाहा ॐ क्रों विक्रय कारिणी ॥१०७॥
ॐ क्रों क्रयात्मिका स्वाहा ॐ क्रीं श्रीं क्लीं कृपावती ।
ॐ क्रों श्रीं व्रां विचित्राङ्गी ॐ श्रीं क्लीं वो विभावरी ॥१०८॥
ॐ वीं विभावसुनेत्रा वीं श्रौं वीं वामकेश्वरी ।
ॐ श्रीं वसुप्रदा स्वाहा ॐ श्रीं वै श्रवणार्चिता ॥१०९॥
ॐ भैं श्रीं भाग्यदा स्वाहा ॐ भैं भैं भगमालिनी ।
ॐ श्री भगोदरा स्वाहा ॐ भैं क्लीं वैंदवेश्वरी ॥११०॥
ॐ श्रीं श्रीं भवमध्यस्था ऐं क्लीं त्रिपुरसुन्दरी ।
ॐ श्रीं क्रीं भीति हर्त्रीं च ॐ भैं भूतक्षयं करी ॥१११॥
ॐ भैं भयप्रदा भैं श्रीं भगिनी भैं भयापहा ।
ॐ ह्रीं श्रीं भोगदा स्वाहा श्रीं क्लीं ह्रीं भुवनेश्वरी ॥११२॥
इति श्री देवदेवेशि नाम्ना सहस्र कोत्तमः ।
मन्त्र गभ परं रम्यं गोप्यं श्रीदं शिवात्मकम् ॥११३॥
माङ्गल्यं भद्रदं सेव्यं सर्वरोगक्षयं करम् ।
सर्वदारिद्र्य राशिघ्नं सर्वामरप्रपूजितम् ॥११४॥
रहस्यं सर्वदेवानां रहस्यं सर्व देहिनाम् ।
स्तुल्यं स्तोत्रमिदं नाम्नां सहस्रमनुभिर्युतम् ॥११५॥
परापरं मनुमयं परापर रहस्यकम् ।
इदं नाम्नां सहस्राख्य स्तवं मन्त्र मयं परम् ॥११६॥

पठनीयं सदा देवि शून्यागारे चतुष्पथे ।
निशीथे चैव मध्याह्न लिखेद्यत्नेन दैशिकः ॥११७॥
गन्धैश्च कुसुमश्चैव कर्पूरेण च वासितैः ।
कस्तूरी चन्दनैर्देवि दूर्वया च महेश्वरी ॥११८॥
रजस्वलाया रक्तेन लिखे नाम्नां सहस्रकम् ।
लिखित्वा धारयेन्मूर्ध्नि साधकः शुभ वाञ्छकः ॥११९॥
यं यं कामयते कामं तं तं प्राप्नोति लीलया ।
अपुत्रो लभते पुत्रान्धनार्थी लभते धनम् ॥१२०॥
कन्यार्थी लभते कन्यां विद्यार्थी शास्त्रपारगः ।
वन्ध्या पुत्र युता देवि मृतवत्सा तथैव च ॥१२१॥
पुरुषो दक्षिणे बाहौ योषिद्वाम करे तथा ।
धृत्वा नाम्नां सहस्त्रं तु सर्वसिद्धिर्भवेध्रुवम् ॥१२२॥
नात्र सिद्धाद्य प्रेक्षास्ति नवा मित्रारि दूषणम् ।
सर्वसिद्धि कृतं चैतत्सर्वाभीष्ट फल प्रदम् ॥१२३॥
मोहान्धकारापहरं महामन्त्रमयं परं ।
इदं नाम्ना सहस्त्रं तु पठित्वा त्रिविधं दिनम् ॥१२४॥
रात्रो वार त्रयं चैव तथा मासत्रयं शिवे ।
बलिं दद्याद्यथा शक्त्या साधकः सिद्धिवाञ्छकः ॥१२५॥
सर्वसिद्धियुतो भूत्वा विचरेद्भैरवो यथा ।
पञ्चम्यां च नवम्यां व चतुर्दश्यां विशेषतः ॥१२६॥
पठित्वा साधको दद्याद्बलि मन्त्र विधान वित् ।
कर्मणा मनसा वाचा साधको भैरवो भवेत् ॥१२७॥

अस्य नाम्नां सहस्त्रस्य महिमानं सुरेश्वरि ।
वक्तुं न शक्यते देवि कल्प कोटि शतैरपि ॥१२८॥
मारीभये चौरभये रणे राजा भये तथा ।
अग्निजे वायुजे चैव तथा कालभये शिवे ॥१२६॥
वनेरण्ये श्मशाने च महोत्पाते चतुष्पथे ।
दुर्भिक्षे ग्रहपोड़ायां पठे न्नाम्नां सहस्त्रकम् ॥१३०॥
तत्सद्यः प्रशमं याति हिमवद्भास्करोदये ।
एक वारं पठेत्पात्रः तस्य शत्रुन जायते ॥१३१॥
त्रिवारं पठयेयस्तु स तु पूजा फलं लभेत् ।
दशावर्तं पठेद्यस्तु देवी दर्शन माप्नुयात् ॥१३२॥
शतावर्तं पठेद्यस्तु स सद्यो भैरवोपमः ।
इदं रहस्यं परमं तव प्रीत्या मयास्मृतम् ॥१३३॥
गोपनीयं प्रयत्नेन चेत्पाज्ञा परमेश्वरि ।
इत्येप पटलो देवि मन्त्र नाम सहस्त्रकः ॥१३४॥
नाभक्तेभ्यः अदातव्यो गोपनीयं महेश्वरि ॥१३५॥

इति श्री भुवनेश्वरी रहस्ये मन्त्र गर्भ सहस्त्र नामाष्टमः पटलः ॥८॥



अथ नवमः पटलः

—:o:—

श्री भैरवउवाच। भैरवजी बोले—

अधुना शृणु देवेशि स्तोत्रं तत्त्व निरूपणम्।
सर्वस्वं भुवनेश्वर्याः परापर रहस्यकम्॥

हे देवेशि! अब देवी श्रीभुवनेश्वरी के सर्वस्व, तत्व निरूपण स्तोत्रको मैं कहता हूं तुम सुनो!

यस्य कस्य न वक्तव्यं विना शिष्याय पार्वति।

हे पार्वति! जो शिष्य न हो ऐसे जिस किसीके लिये यह बतलाने योग्य नहीं है, अर्थात् जो शिष्य हो उसे ही यह तत्त्वनि-रूपण स्तोत्र बतलाना योग्य है।

अस्य स्तोत्रस्य देवेशि ऋषि भैरव उच्यते।
छन्दोऽनुष्टुप् समाख्यातं देवता भुवनेश्वरी॥
श्रीतत्त्वरूपिणी बीजं माया हँ शक्ति रुच्यते।
हः कीलकं समाख्यातं भुवनेश्याः महेश्वरि॥
धर्मार्थकाममोक्षार्थे विनियोगः प्रकीर्तितः।

हे महेश्वरि! इस स्तोत्रके भैरव ऋषि हैं, अनुष्टुप् छन्द है। भुवनेश्वरी देवता हैं, श्रीतत्त्वरूपिणी माया इसके बीज हैं, हँ इसकी शक्ति हैं और हः इसके कीलक हैं तथा धर्म, अर्थ, काम,

मोक्षकी सिद्धिके लिये इसका विनियोग अर्थात् प्रयोग किया जाता है।

फलितार्थ इस प्रकार है यथा—

ॐ अस्य श्रीतत्त्वनिरूपणस्तोत्रस्य भैरवऋृषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीभुवनेश्वरी देवता। श्रीतत्त्वरूपिणी माया (ह्रीं) बीजं, ह्रैं शक्तिः, ह्रः कीलकम् धर्मार्थ काम मोक्षार्थे विनियोगः।

ध्यानम्—उद्यत्कोटि सहस्राभां शशाङ्कृतशेखराम्।
पद्मासनां स्मेरमुखीं सूर्यवह्निविलोचनाम्॥
रक्तवस्त्रधरां पद्म पाशाङ्कुश वरान्करैः।
दधतीं भुवनेशानीं ध्यायेद्धृत्पङ्कजे शिवाम्॥

उदीयमान दश हजार करोड़ सूर्यकी कान्तिवाली, और चन्द्रको ललाटमें धारण की हुई, पद्मासनपर बैठी हुई, जिसके मुखमें मुस्कुराहट है, सूर्य, और चन्द्रमा, अग्नि ये ही तीन जिसके नेत्र हैं, लाल साड़ी पहनी हुई, चारों हाथोंमें क्रमसे कमल, पाश, अङ्कुश तथा वरको धारण की हुई ऐसी भुवनेश्वरीका ध्यान करे।

वाग्भवं तव शिवे प्रिय वीजं ध्यायते यदि नरोनलचेताः,
तस्य त्वच्चरण पूजन मात्रान् जायते हिमकल धवदाभि।

हे शिवे! जो संतप्त हृदय तुम्हारे प्रिय वाग्भव बीजको ध्यान करता है, तुम्हारे चरणपूजनमात्रसे ही हिमकला आदि उसकी अनुगामिनी हो जाती हैं।

शक्ति बीज मनघं सुधाकरं साधको यदि जपेत्तहृदि भक्त्या
तस्य स्वर्ग ललना श्रणाब्जे रञ्जयति मुकुटे मणियुक्तैः।

हे देवि! साधक अमृतका समुद्र तुम्हारे शक्तिबीजको यदि भक्तिपूर्वक हृदयमें जपे तो उसके चरण कमलको स्वर्गीय ललनाएँ मणियुक्त मुकुटोंसे अनुरक्त कर देती हैं अर्थात् स्वर्गकी अप्सरायें उसके चरणोंकी सेवामें उपस्थित रहती हैं।

मायाबीजं यो जपेत्ते महेशि तत्वं मन्त्री भक्तिमान्मुक्तिकामः।
तत्त्वत्सस्था याति त्वद्धामरम्यं नाकस्त्रीभिर्वीज्यमानःसुतालैः॥

हे महेशि! जो साधक तुम्हारे परमतत्व मायाबीजको भक्तिपूर्वक मुक्तिकी कामना करता हुआ जपता है, वह स्वर्गीय स्त्रियोंके उत्तम तालयुक्त लयको सुनता हुआ तुम्हारे रमणीय धामको जाता है।

स्वन्मन्त्रमध्ये भुवनेश्वरीति यो नाम रम्भापति रम्भकांक्षी।
ध्यायेत्हृदब्जे शशिखण्डचूड़े सयाति रम्भां परिरंभ्यस्वर्गं॥

"१ अपने हृत्कमलमें जहांपर शिव विराजमान हैं, वहां तुम्हारे मन्त्रके मध्यमें भुवनेश्वरी शब्दको जो इन्द्रत्व प्राप्त करनेवाला साधक "१ जपता है, वह रम्भाको आलिंगन करके स्वर्ग जाता है।

मायार्णं यः साधको ध्यायते ते तस्य ब्रह्मा विष्णु शिवादयस्ते।
देवाः पादौ रञ्जयतिस्म नित्यं मौलिस्थैस्तैरिन्द्रनी लादिरत्नैः॥

तुम्हारे माया बीजको जो साधक चिन्तन करता है, उसके चरणोंको ब्रह्मा, विष्णु, शिवादि अपने मस्तकमें विराजमान इन्द्रनील आदि रत्नोंसे सुशोभित कर देते हैं।

तत्वरूपिणि भवन्मनु मध्ये यो जपेत्तव सुधाकर माख्यम्।
देवितस्य किल साधकराज्ञो विश्वमेतदखिलं वशमेति॥

हे तत्वरूपिणी! तुम्हारे मन्त्रके मध्यमें जो साधक अमृत-पारावाररूप तुम्हारे नामको जपता है, उस साधकेश्वरके समग्र संसार वशवर्ती होते हैं।

मायाबीजं देवि मन्त्रान्त संस्थं रात्रौ वह्नि ध्यायते योहृदन्तः।
भूमौ भूपास्तस्यपादाब्जयुग्मं रञ्जतिस्वै मौलिरत्नांशुभिस्तैः॥

रात्रिमें जो साधक मन्त्रके अन्तमें मायाबीज और वह्नि-बीजको हृदयमें चिन्तन करता है, उसके चरण कमलोंको राजन्य मण्डल मुकुटमणिके किरणोंसे सुशोभित कर देते हैं।

इतीदं परमं तत्वं तत्वं विद्यास्तवोत्तमम्।
रहस्यं भुवनेश्वर्याः सर्वस्वं मम पार्वति!
सम्पूज्य भुवनेशानीं यः पठेत्साधकोत्तमः।
तस्याष्टसिद्धयो देवि करसंस्था महेश्वरि॥

हे देवि! पूर्व वर्णित तत्वविद्यास्तव, जो भुवनेश्वरीका वास्तविक रहस्य और मेरा सर्वस्व है, देवी श्रीभुवनेश्वरीका पूजन करके जो साधक श्रेष्ठ पाठ करता है, उसके हाथमें अष्ट सिद्धियाँ विराजती हैं।

अस्य स्तवस्य देवेशि प्रभावं कथितुं प्रभुः।
नास्म्यहं भुवनेश्वर्याः पञ्चवक्त्रैर्न संशयः॥

महादेव पार्वतीसे कहते हैं, हे देवेशि! भुवनेश्वरीके इस स्तवका प्रभाव मैं पांचों मुखोंसे भी कहनेमें समर्थ नहीं हूं।

इत्येष पटलो देवि रहस्याति रहस्यकः।
अभक्तेभ्यो न दातव्यो गोपनीयः महेश्वरि॥

हे महेश्वरि! यह पटल परम रहस्यमय है और अभक्तोंको देने योग्य नहीं और गोपनीय है।

इति श्री भुवनेश्वरी रहस्ये तत्वविद्यास्तोत्रनाम
नवमः पटलः ॥९॥

अथ दशमः पटलः

—:o:—

श्रीभैरवउवाच। भैरवजी बोले—

मन्त्रसाधन वक्ष्येऽहं रहस्यं सर्वमन्त्रिणाम्।
येन साधन मात्रेण मन्त्र सिद्धिमुपोष्यति॥
विना शापं हरी नैव मन्त्रः सिद्धि प्रदायकः।
सम्पुटेन विना देवि श्रृणुतान् प्राण वल्लभे॥

हे प्राणवल्लभे! अब मैं समग्र उपासकोंके अप्रकट मन्त्र साधनोपायको कहता हूं, जिसके साधन करनेसे ही मन्त्र सिद्धि प्राप्त होती है। शापहरो विद्या और सम्पुटके विना मन्त्र सिद्धि-दाता नहीं होता है, उन्हें तुम सुनो!

विश्वान्ते सकलां दद्यात्जपेत्पावतीजापकः।
मनो श्रीभुवनेश्वर्याः स्यादुत्कीलनमुत्तमम्॥
वारत्रयं पठेद्दादौ मूल मन्त्रस्य वैपराम्।
मन्त्रस्य भुवनेश्वर्याः भवेत्संजीवनं परम्॥
माया भैरव शापश्च मोचयेत्तद्वयमश्चले।
माया साद्भुवनेश्वर्याः विज्ञेयं शापहारिणी॥
ततः सिद्धमनुं देवि जपेन्मन्त्रिकसत्तमः।
यथा शक्त्या ततो दद्यात्संपुटं साधकेश्वरः॥
यं विधाय भवेद्देवि सर्वसौख्यमयः सुधीः।
विश्वान्ते च परावीजं दशवारं पठेच्छिवे!
मन्त्रोऽयं भुवनेश्वर्याः सम्पुटाख्य सुसिद्धिदः॥
एवं संस्थित मीशानि मनुदेव्याः जपेत्सदा।
सर्वसिद्धि मवाप्नोति साधको मन्त्र साधकः॥
इत्येष पटलो देवि साधनाख्यो महेश्वरि।
तवस्नेहान्मयाप्रोक्तः वक्तव्यः साधकोत्तमैः॥

इति श्री भुवनेश्वरी रहस्ये उत्कीलनकथननाम
दशमः पटलः ॥१०॥

हे पार्वति! साधक विश्वबीजके अन्तमें कलाको देकर भुवनेश्वरीका मन्त्र जपे, इससे सर्वोत्तम उत्कीलन होता है। इसका क्रम ऐसा है, यथा—अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं लृं लॄं ओं औं अं अः; कं खं गं घं ङं; चं छं जं झं ञं; टं ठं डं ढं णं; तं थं दं धं नं; पं फं बं भं मं; यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं तीन बार सर्व प्रथम पराबीजको जप कर लेना चाहिये, पराबीज इस ग्रन्थके अनेक प्रकरणोंमें आगया है।

इससे भुवनेश्वरी मन्त्रका सञ्जीवन होता है, सञ्जीवनी क्रिया के करनेसे ही संजीवनी विद्या भी प्राप्त होती है। दैत्यगुरु शुक्राचार्य दानवोंके मृत शरीरपर संजीवनी विद्याका प्रयोग करते थे और उनके प्रयोगसे ही मृत शरीरमें चैतन्यका सञ्चार होता था।

इस भुवनेश्वरी रहस्यकी मन्त्रमालामें इस संजीवन मन्त्र ही से संजीवनी विद्या प्राप्त होती है।

माया और भैरवका शाप भी इसकी दो आवृत्तिसे मुक्त होता है और पूर्वोक्त भुवनेश्वरी मन्त्रमें मायाबीज सम्पुटित करनेसे सम्पूर्ण शाप मुक्त होता है।

हे देवि! इस प्रकार मन्त्रसिद्ध करके साधकेश्वर संपुट अपनी शक्तिके अनुसार करे। इस संपुटसे साधक सम्पूर्ण सुखोंमें प्रधानता प्राप्त करके विद्वान होता है। सम्पुटका क्रम यह है विश्वबीजके अन्तमें पराबीज देकर दस बार जप करे।

हे ईशानि! पूर्वोक्त मन्त्र, साधक सर्वदा जपे। इससे सभी सिद्धियों को लाभ करता है।

हे देवि! यह साधन पटल मैंने तुम्हारे स्नेहसे कहा जो उत्तम साधक हों उन्हें कहना।

अथ एकादशः पटलः

—:o:—

श्री भैरवउवाच। भैरवजी बोले—

अधुना विश्व विद्यान्ते वक्ष्यामि परमार्थदाम्।
सर्वसिद्धिमयीं साख्यं सर्वतन्त्रेषु गोपिताम्॥

अब विश्वविद्याके प्रतिपादनान्तमें परमार्थको देनेवाली विद्या कहता हूं, यह विद्या अखिलसिद्धियोंसे परिपूर्ण है और इसमें सांख्य दर्शनकी प्रतिपाद्या प्रकृतिके वर्णनकी प्रधानता है, षड्दर्शनोंका सांख्य शिरोमणि है, इसमें इसी विषयकी बहुलता है कि ईश्वर भी प्रकृतिके बिना सामर्थ्यहीन हैं। इस हेतु सांख्य और तन्त्र ये दोनों एक ही तत्वके प्रतिपादक हैं, पुराणोंमें ऐसा अनेक और असंभव महाविद्याके प्रभाव वर्णित हैं, जिसमें यहां तक विदित होता है कि, भगवानके भी हृदयमें जब यह भावना

उत्पन्न हुई 'एकोऽहंबहुस्यां' तो योगमायाकी सहायतासे ही यह भावना पूर्ण हो सकी, मार्कण्डेय पुराणकी दुर्गा सप्तशती तन्त्र मालाकी स्मरणमालिका (सुमिरना) है। इसमें देवासुर-संग्राममें देवसमूहसे प्रार्थिता देवीने दानवोंका संहार करके अमरवृन्दको निरापद किया। अतएव तन्त्र तथा सांख्य दोनोमें एकवाक्यता है और यह परमार्थदा विद्या तन्त्ररूपी सागरमें गुप्त है।

केवलं यो जपेच्छाक्तं मनुं शैवं तु नो जपेत्।
जन्मकोटिषु जप्तेषु न मनुः सिद्धिभाग् भवेत्॥

जो साधक केवल शक्तिके मन्त्रको जपे और शिव मन्त्रको न जपे तो करोड़ों जन्म तक जप करते रहनेपर भी मन्त्र सिद्धिदाता नहीं होता है। इसीमें सांख्यका विषय प्रतिपादन है, यथा— सांख्य दर्शनकार कहते हैं कि "उभावप्यनादी उभावप्यनन्तौ उभावप्यलिंगौ उभावप्यपरौ" प्रकृति और पुरुष दोनों ही आदि-हीन, अन्तहीन, लिंगहीन (इसका अर्थ है चिन्ह रहित) परापर रहित परापरका यह तात्पर्य है कि यह स्थिर नहीं है, जो पहले पुरुष हुए हैं या प्रकृति और प्रकृति तथा पुरुष दोनों एक ही रूप है। इसका भी प्रमाण सांख्यमें है कि दोनों ही समान धर्मानुकूल कार्य सम्पादन करते हैं।

अतएव दोनोंमें एक निष्ठताके नाते समवाय सम्बन्ध है।

और भी सांख्य प्रतिपादित प्रामाणिक एक रूपता मूलक

वचन हैं "जगद्योने रनिच्छस्य चिदानन्दैक रूपिणः। पुंसोऽस्ति प्रकृतिर्नित्या प्रतिच्छायेव भास्वतः ॥"

संसारके आदि कारण, इच्छाहीन, चैतन्य तथा आनन्द ही जिनका एक रूप है, जिस प्रकार भगवान सूर्यकी प्रतिच्छाया नित्य है, इसका स्पष्टीकरण है जो विद्यमान है उसीकी प्रतिच्छाया भी हो सकती है. जैसे सूर्य हैं तो उनकी छाया भी है, उसी तरह शिवकी शक्ति हैं और शक्तिके शिव हैं। इसीको कहते हैं अङ्गाङ्गी भाव भी। इन वाक्योंसे उसी "केवलं यो जपे च्छाक्त" इसी विषय को प्रकट किया जा रहा है कि ऐसा नहीं हो सकता है कि केवल शक्तिपूजासे ही सिद्धि मिलेगी अपितु शिवपूजन भी परमावश्यक है, और भी जगद्गुरु शङ्कराचार्य के सौन्दर्य लहरीके प्रथम श्लोकमें सर्वप्रथम शिवपद हो आया है "शिवः शक्त्या युक्तो" इत्यादि अर्थात् शक्तिसे यदि युक्त हो सकते हैं तो मात्र शिव ही दूसरे नहीं, कारण शक्तिमान् उसे कहते हैं जो सबका गुरु हो तो शिव ही सर्वोपरि गुरु हैं, यथा—सांख्य दर्शन "सः सर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात् ।"

यस्याः देव्यास्तु यो देवः शिवस्तत्साधको भवेत्।
ईश्वरो भुवनेश्वर्याः शिव इत्येव मीश्वरि ॥

हे ईश्वरि ! जिस देवी के जो कोई देवता होते हैं, उसके साधक शिवजी होते हैं। भुवनेश्वरी के भी ईश्वर शिव ही हैं।

ईश्वरस्य मनुं वक्ष्ये सर्वसिद्धिकरं परम्।
तारं भूति रमालक्ष्मीरीश्वरी याइमरीततः॥
मन्त्रोऽयमीश्वर प्रोक्तः साधकेष्ट फलप्रदः।

अब ईश्वर अर्थात् शिवजीका मन्त्र कहता हूं, यथा—ॐ ईं ह्रीं श्रीं सौं हसवरयूँ यही मन्त्र साधकों को अभिलषित फल दाता है।

अस्यमन्त्रस्य देवेशि ऋषिः प्रोक्तः सदाशिवः।
छन्दोऽनुष्टुप् समाख्यातं ईश्वरो देवता स्मृतः॥
बीजं च प्रणवः शक्तिः मारमा कीलकं स्मृतम्।
धर्मार्थ काम मोक्षार्थे विनियोगः प्रकीर्तितः॥

हे देवेशि ! इस मन्त्र के सदाशिव ऋषि हैं। ईश्वर देवता हैं। अनुष्टुप् छन्द है। बीज और प्रणव शक्ति हैं, मारमा कीलक है और धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के साधन में इसका प्रयोग है। वस्तुतः विनियोग कहते हैं प्रयोग को ही।

तारं माया रमा बीजै न्यासि पद् दीर्घ संयुतैः।
कुर्यात्कराङ्गया देवि साधको भीष्टसिद्धये॥

हे देवि ! साधक प्रणव, मायाबीज, रमाबीजसे दीर्घोंचारणके साथ करान्यास अपनी अभिलषित सिद्धि के लिये करे।

अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि सर्वकामार्थि सिद्धिदम्।

अब चतुर्वर्ग की सिद्धि जिस से प्राप्त होती है उस ध्यान को कहता हूँ।

शुद्ध स्फटिक संकाशं त्रिनेत्रमीश्वरं प्रभुम्।
सिंहचर्म परीधानं गजचर्मोत्तरीयकम्॥
सुधाढ्य कलशं शूलं वरं चाभय मेव च।
धारयन्तं कराम्भोजैः शशाङ्ककृतशेखरम्॥
पद्मासनं स्मितमुखं वामाङ्ग संस्तृतं परम्।
भुवनेश्याः महादेव्याः हृत्पद्मे भावयाम्यहम्॥

शुद्ध, धवल या सत्वमय स्फटिक के समान कान्तिमान, तीननेत्रों से विभूषित, समर्थ, सिंह की छाला पहिने, हाथी के चर्मों को चादर के स्थान में लगाये हुए, अमृतपूर्ण कलश, त्रिशूल, वर और अभय चारों हाथों में धारण किये हुए चन्द्रमा जिनके ललाट की शोभा को बढ़ा रहे हैं, पद्मासन को लगाये, जिनके मुखारविन्द से हास्य की आभा प्रस्फुटित हो रही है तथा देवी भुवनेश्वरी का दक्षिणाङ्ग जिनके वामाङ्ग में संलग्न हैं अर्थात् जो अर्द्धनारीश्वर हो रहे हैं ऐसे ईश्वर को मैं अपने हृदयकमल में चिन्तन करता हूँ।

अनेन ध्यानराजेन मनसा चिन्तितेन च।
विद्याहि भुवनेश्याः कलौ सिद्ध्यति सत्वरम्॥

इस ध्यानराज के मन में चिन्तन करने से कलियुग में भुवनेश्वरी विद्या शीघ्र ही सिद्ध होती है।

इत्येप पटलोदेवी दिव्यमन्त्र प्रकाशकः।
गोपनीयो महेशानि साधकैः स्वात्म सिद्धये॥

हे देवि! यह पटल अपूर्व मन्त्र प्रकाशक है अतएव अपनी सिद्धि के हेतु साधकों से गोपनीय है।

इति श्रीभुवनेश्वरी रहस्ये ईश्वर मन्त्र प्रकाशको नाम
एकादशः पटलः।

अथ द्वादशः पटलः

—:o:—

श्री भैरवउवाच। भैरवजी बोले—

दीक्षा विधिं प्रवक्ष्यामि साधकानां हितेच्छया।
विधाय विधिवद् दीक्षां पशुत्वात्प्रविमुच्यते॥

हे देवि! साधकों की हित कामना से अब मैं दीक्षाविधि को कहता हूँ। नियमानुकुल दीक्षा को प्राप्त करके मानव पशु योनि से मुक्त हो जाता है।

दीयते परमां सिद्धिं क्षीयते कर्म वासना।
आप्यते परमं ध्यानं तेन दीक्षा स्मृता शिवे॥

हे शिवे ! जिसके द्वारा अनुपम सिद्धिप्राप्त होती है, और जो सांसारिक इच्छा समुत्पन्न, कर्ममूलक वासना हैं उसे नाश करती है तथा जिससे परम ध्यानप्राप्त होता है उसे दीक्षा कहते हैं।

अर्थात् दीक्षा के विना लाखों मन्त्र जपते रहने पर भी मनुष्य क्या देवता तक को सिद्धि नहीं मिलती है और इसके विना वैराग्य धारण करने पर भी जागतिक वासना जो कर्म-बन्धनका मूल उपादान बताया गया है उससे छुटकारा नहीं मिलता है। जबतक मानव दीक्षित नहीं होता है तबतक उसे परम ध्यान प्राप्त नहीं होता है। परम ध्यान कहते हैं अपने हृदय में परमात्मा का चिन्तन, तो यह कर्म अर्थात् परमात्म चिन्तन विना सद्गुरु के उपदेश मिले होना असंभव है। लिखा भी है "विन गुरु मिले न ज्ञान" ज्ञान याने आत्मज्ञान, मैं क्या हूं इस विषय को जान लेना ही वास्तविक ज्ञान है पुस्तकों को पढ़ने से यह ज्ञान प्राप्त नहीं होता है। इसलिये गुरु मुखारविन्द से दीक्षा प्राप्त करके ही लोक ज्ञान प्राप्ति का अधिकारी हो सकता है।

ब्रह्मादिकीट पर्यन्तं जगत्सर्वं महेश्वरि।
पशुत्वमोहितं देवि तस्माद्दीक्षां चरेत् कलौ॥

हे महेश्वरि ! ब्रह्मासे आरम्भ करके कीट पर्यन्त चराचरात्मक अखिल जगत् पशुतारूपी मोहके पाशमें पड़ गया है, इसलिये कलियुगमें दीक्षाका अवलम्बन करना चाहिये।

यहाँ कलौ इस पदसे यह स्पष्ट प्रकट होता है कि अन्यान्य युगोंमें यह पशुता नहीं थी, कारण इतर युगोंमें युग-धर्म ही इस प्रकार था कि पशुताका सञ्चार ही नहीं होता था।

परन्तु कलियुगका आरम्भ ही पशुतासे हुआ है। अतएव भैरवजी पार्वतीसे यह कह रहे हैं कि कलियुगमें जब तक दीक्षित नहीं होता है तब तक मानव भी पशु ही है और दीक्षा ग्रहण करते ही पशुताके बन्धनसे मुक्त हो जाता है।

श्रीदेवी सेवयादेवि चक्रार्चन पुरस्सरम्।
साधकः पशुभावेन मुक्तो ज्ञानं भजेत्ततः॥

हे देवि! साधक अर्थात् दीक्षित चक्रपूजा पूर्वक देवीकी आराधनासे मुक्त होकर पशुभावसे मुक्त होके तब ज्ञान लाभ करनेमें समर्थ होता है।

भावार्थ यह है कि यन्त्रात्मक जो देवीका स्वरूप है उसीकी आराधनासे ज्ञान लाभ होता है। यहाँ ज्ञानका अर्थ है आत्म-ज्ञान और यह ज्ञान बिना यन्त्रके मिलता नहीं।

इस शरीरको ही यन्त्रात्मक बताया गया है। अतएव यन्त्रकी आराधनासे ही आत्म-ज्ञान लाभ होता है।

दीक्षितो याति चरणं दीक्षाहीनो भवेत्पशुः।
दीक्षितस्तु लभेद्ज्ञानं पशुभावोज्झितो विभुः॥

जिसे दीक्षा मिल गयी है वह देवीके परमपदको प्राप्त होता है और दीक्षाहीन पशु है। दीक्षित ज्ञानको प्राप्त होता है

और पशुभावसे मुक्त होकर चन्द्रमाके तरह प्रकाशस्वरूप हो जाता है।

देवीके चरणमें आश्रय ग्रहण करनेके लिये दीक्षाकी एकान्त आवश्यकता है और पशुपाशसे मुक्त करानेवाली भी दीक्षा ही है।

सर्व पातक मुक्तो हि लभेत्स परमां गतिम् ।
यस्य दीक्षा शिवे नास्ति जीवनान्तं च जन्मिनाम् ॥

हे शिवे! जिसने सद्गुरुके मुखारविन्दसे दीक्षाको ग्रहण किया है वह सम्पूर्ण पापोंसे छुटकारा पाकर परमपद अर्थात् देवीपदको प्राप्त होता है और जिसे दीक्षा नहीं है उसका जन्म निरर्थक है या यों भी कह सकते हैं कि उसके जीवनमें ही मृत्युका सञ्चार है।

क्योंकि तन्त्रान्तरोंमें ऐसा भी लिखा है कि दीक्षाहीन मनुष्य जिस स्थानपर पैर रखता है, वह स्थान ही अपवित्र हो जाता है। इसलिये दीक्षा रहित मानव-जीवन मृत है।

सयातु नो त्तरे द्देवि निरयाम्बुनिधेः क्वचित् ।
दीक्षा हीनस्य देवेशि पशोः कुत्सित जन्मनः ॥
पापोधोन्तिक मायाति पुण्यं दूरं पलायते ।
तस्माद् यत्नेन दीक्षैया ग्राह्या कृति भिरुत्तमा ॥

दीक्षाहीन मनुष्य नरक समुद्रमें जाता है और उससे कभी पार नहीं होता है। दीक्षाहीन मनुष्यका जीवन पशु-जीवन है।

और उसके पापपुञ्ज समीप आते जाते हैं तथा पुण्य दूर दूर भागता रहता है। अतएव यत्नशील पुरुषों द्वारा यह उत्तम दीक्षा विधि ग्रहण करने योग्य है।

बाल्येवा यौवनेवापि वार्धक्येपि सुरेश्वरि।
अन्यथा निरयं याति द्वात्रिंशद्वत्सरं नयेत्॥

हे सुरेश्वरि! बालावस्थामें, युवावस्थामें या वृद्धावस्थामें भी दीक्षा ग्रहण करनी चाहिये। यदि न ग्रहण करे तो नरकमें जाता है और उस नरकमें ३२ वर्षोंकी अवधि वहाँ समाप्त करनी पड़ती है।

अन्ते पशु मनुष्यो सौ सर्पयोनिं व्रजेच्छिवे।
पूर्वं पुण्यार्जितां प्राप्य वासनां परमार्थदाम्॥
कुलीनं तंच तन्त्रज्ञं सर्वाङ्गैः सुमनोहरम्।
लब्ध्वा भक्त्या प्रगम्यादौ तोषयित्वाविशेषतः॥
प्रणामै र्वन्दनै र्देवि दक्षिणाम्बर पूर्वकम्।
सिद्धासाध्यारि निर्गीतां दीक्षां देव्यायथाविधि॥
गृह्णीयात् परया भक्त्या साधको येन जायते।
गुरुश्च शिष्यरम्याङ्गं सर्वाङ्गैः सुमनोहरम्।
गुरु भक्तिरतं बालं कुलीनं गर्भ दीक्षितम्॥
देवी भक्तिरतं भक्तं पाप भीतं कृतात्मकम्।
दृष्ट्वा दीक्षां परां दद्यात् कृतभागी भवेत्ततः॥

हे शिवे! अन्तमें वह नरपशु सर्पयोनिको प्राप्त होता है।

पुनः पूर्वजन्मार्जित परमार्थ प्रदात्री वासनाको पाकर, अर्थात् प्राक्तनजन्मार्जित पुण्यमयी भावनाकी प्राप्तिकर, सत्कुलोपन्न, सभी अङ्गोंसे मनोहर, (भावार्थ यह है कि जिनके भी अङ्ग ऐसे न हों कि जिसके देखनेसे मन विरक्त हो जाय) तन्त्रशास्त्रके ज्ञाता गुरुको लाभकर, पहले प्रणाम करके और प्रणाम, वन्दना, वस्त्र, दक्षिणा आदि द्वारा उनको विशेष भावसे प्रसन्न करके, सिद्ध, साध्य, अरि क्रमसे शुद्ध देवीकी दीक्षाको विधिवत् ग्रहण करे।

जिस दीक्षा विधिकी सहायतासे वह साधक हो जाय "साधक उसे कहते हैं जो मन्त्रार्थका ज्ञाता हो और जो मन्त्र सिद्धि लाभके लिये यत्नवान हो।"

गुरु भी सम्पूर्णाङ्गोंसे रमणीय, सभी अवयवोंसे मनोहर, गुरुभक्तिमें लीन, अन्य शास्त्रोंका भी ज्ञाता, परन्तु मन्त्रशास्त्रका अनभिज्ञ अर्थात् तन्त्रके लिये बालक, उत्तम कुलोत्पन्न, जिसकी दीक्षा वंशपरम्परागत है, तथा पापोंसे डरनेवाला, उपकारोंको न भूलनेवाला ऐसा शिष्यको जानकर उत्तम दीक्षा प्रदान करें, जिससे गुरु भी पुण्यलाभके अधिकारी होवें।

पूर्वोक्त वाक्योंसे यह स्पष्ट प्रकट होता है कि दीक्षा उत्तम पात्रमें ही प्रदान करनेसे आचार्य पुण्याधिकारी होते हैं।

श्री देव्युवाच। देवीजी बोली—

भगवन् करुणाम्भोधे साधकानां हितेच्छया।
कदा दीक्षा परा ग्राह्या साधकेन वदस्व मे॥

हे दयासागर ! यह उत्तम दीक्षा किस समयमें ग्रहण करनी चाहिये, साधकोंको हितकामनासे आप मुझे कहें।

श्री भैरवउवाच। भैरवजी बोले—

सुदिने शुभनक्षत्रे संक्रान्तावयने द्वये।
नवरात्रदिने पित्र्योः श्राद्धे स्वजनि वासरे॥
नववर्ष दिने देवि चन्द्रसूर्योपरागके।
शिवरात्र्यां स्वजन्मर्क्षे दीक्षां दद्याद्विचक्षणः॥

हे देवि ! अच्छे दिन, शुभ नक्षत्र, संक्रान्ति, उत्तरायण और दक्षिणायणमें, शारदीया नवरात्रि या वासन्ती नवरात्रिमें, माता या पिताके श्राद्ध दिवसमें, अपने जन्मदिवसमें, वर्षके प्रारम्भिक दिनमें, चन्द्रग्रहण या सूर्यग्रहणकालमें, शिवरात्रिमें, अथवा अपने जन्मनक्षत्रमें तान्त्रिक दीक्षा प्रदान करे।

तत्रादौ शुभनक्षत्रे स्नात्वा सम्पूज्य भैरवम्।
गत्वा नदीतटं देवि तथा देवालयं क्वचित्॥
देवताग्नि गुरुं नत्वा मनः संतोष हेतवे।
द्वीपं वा परमं पुण्यं देवानामपि दुर्लभम्॥
देवता पत्तनं वापि प्राप्त्वासुभ्रमणमेत्ततः।
तत्राद्य वासनं देवि संशोध्य गुरुमर्चयेत्॥

हे देवि ! सर्वप्रथम शुभनक्षत्रमें स्नानकर भैरवको पूजनकर नदीतट या किसी देवालयमें जाके देवता, अग्नि, गुरुको अपनी मानसिक तुष्टिके लिये प्रणाम करके, अथवा परम पवित्र देव-

ताओंके लिये भी दुर्लभ द्वीपको प्राप्तकर या देवनगरी (जैसे पुरी, अयोध्या आदि) को प्राप्तकर, तब भक्ति-भावसे प्रणाम करे।

हे देवि। वहाँ सबसे पहले आसनको शुद्ध करे, तब गुरुको प्रणाम करे।

भूताग्निसाय देवेशि साङ्गं न्यासं चरेत्ततः।
प्राङ्मुखो गुरुमा सीन मुत्तराभिमुखं शिशुम्॥
संस्थाप्य विधिवद्देवि देवीं स्मृत्वा परामयः।
देवताग्रे पराप्रीत्यै दीक्षां दद्याद् यथाविधि॥

हे देवेशि! भूतोत्सारण करके भृग्यादि स्मरणपूर्वक न्यास करे, गुरु पूर्वाभिमुख बैठे और शिष्यको उत्तराभिमुख बैठावे।

विधिवत् देवीकी स्थापना करके देवीको स्मरणकर और अपनेको देवीमय जानकर देवताके आगे परदेवीकी प्रसन्नताके लिये यथाविधि दीक्षाको देवे।

कर्णमूले महाविद्यां श्रीविद्या साधकेश्वरः।
आनन्दा सक्त हृदयः, शनै स्त्रिस्त्रिः समर्पयेत्॥
गणेशस्य च गायत्र्या स्ततो मृत्युञ्जयस्य च।
इष्टदेव्याः शिवस्यापि ततो विद्यां समर्पयेत्॥

श्रीविद्याका साधकप्रवर हृदयसे आनन्दमग्न होकर शिष्यके कर्णमूलमें गणेश, गायत्री, और उसके अनन्तर महाविद्याका मन्त्र तीन बार देवे, तब शिवमन्त्र देकर इष्टदेवी की विद्याको समर्पण करे।

तोषयित्वा प्रणामैश्च दक्षिणाभिः शुभाम्बरैः।
तदाज्ञां शिरसादाय जपाय परमेश्वरि॥

हे परमेश्वरि! उत्तम वस्त्र, दक्षिणा और प्रणामके द्वारा गुरुको प्रसन्न करके और मन्त्रजपके लिये उनकी आज्ञाको शिरोधार्य करे।

पुनर्यातु शिवे शिष्यो गुरवेपिन दर्शयेत्॥

पुनः शिष्य अपने कल्याणके लिये यह मन्त्र गुरूको भी न दिखावे।

इति दीक्षाविधेः सारभूतो गुह्यो महेश्वरि।
पटलः साधकै र्यातु न प्रकाश्यो कदाचन॥

इस प्रकार दीक्षा विधिका सार और अत्यन्त अप्रकट है, हे महेश्वरि! साधकों द्वारा इसे कभी प्रकाश नहीं करना चाहिये।

इति श्री भुवनेश्वरी रहस्ये दीक्षाविधिः
द्वादशः पटलः॥ १२॥

अथ त्रयोदशः पटलः

—:१:—

श्री भैरवउवाच। भैरवजी बोले—

अथ देवि प्रवक्ष्यामि पुरश्चरणमुत्तमम्।
यस्य साधनमात्रेण मन्त्रः कल्प समो भवेत्॥

हे देवि! इसके अनन्तर सर्वोत्तम पुरश्चरण विधिको कहता हूँ जिसके साधनमात्रसे ही मन्त्र कल्पवृक्षके समान होता है।

तत्रादौ सुदिने देवि सुनक्षत्रे सुपर्वणि।
पुरश्चरण कर्मादा वारभेत् साधकोत्तमः॥

हे देवि! पहले उत्तम दिन, शुभ नक्षत्र तथा किसी पर्व समयमें साधकोत्तम पुरश्चरणको आरम्भ करे।

वर्णलक्षं जपेन् मन्त्रं तदर्द्धं वा सुरेश्वरि।
एक लक्षावधिं कुर्यान्नातो न्यूनं कदाचन॥

हे सुरेश्वरि! उत्तम प्रकार पुरश्चरणका यह है कि सम्पूर्ण मन्त्रके जितने वर्ण हों उतने ही लक्ष मन्त्रोंका जप करना चहिये।

मध्यम प्रकार यह है कि सम्पूर्ण मन्त्राक्षरोंके जितने आधे अक्षर हों उतने लाख मन्त्रोंको जपे।

साधारण प्रकार यह है कि एक लक्ष मन्त्र जप करना चाहिये।

श्री देव्युवाच। देवीजी बोलीं—

लक्षजप्तो मनुर्देव यदि कल्पद्रुमो भवेत्।
तदा किं साधको लोके लभेत्तत्वं वदस्व मे॥
कस्य हस्तेन मन्त्रस्य पुरश्चरणकक्रियाम्।
कारयेत् साधक श्चैवत्संशयं छिन्धि धूर्जटे॥

हे देव! लक्ष जप करनेसे यदि मन्त्र कल्पद्रुमके समान होता है तो साधक संसारमें किस तत्वको लाभ करता है, यह आप मुझे कहें और हे धूर्जटे! साधक इस मन्त्रकी पुरश्चरण क्रिया जिसके हाथसे सम्पन्न कराये इस संशयको निर्मूल करें।

श्री भैरवउवाच। भैरवजी बोले—

साधुपृष्टं त्वया देवि शृणु वक्ष्यामि पार्वति।
न कदाचित्स्वयं कुर्या दादौ मन्त्र पुरस्क्रियाम्॥
गुरुहस्तेन देवेशि साधकस्य करेण वा।
कुर्यान्मन्त्रंवर स्यास्य पुरश्चरण कक्रियाम्॥

हे पार्वति! तुमने बहुत उत्तम प्रश्न किया है, इसका उत्तर मैं कहता हूं तुम सुनो। सर्वप्रथम मन्त्रकी पुरश्चरण क्रिया कभी अपने हाथसे न करनी चाहिये।

गुरु द्वारा या किसी मन्त्र विधिज्ञ साधक द्वारा इस श्रेष्ठ मन्त्रकी पुरश्चरण क्रिया सम्पन्न करावे।

सर्वोत्तम विधि यह है कि दीक्षा प्रदान करनेवाले अपने

गुरुदेवसे ही इस मन्त्रका पुरश्चरण करावे और गुरुदेवके किसी कारणवशात् अस्वीकार करनेपर किसी तन्त्र शास्त्रज्ञसे करावे।

जीवहीनो यथा देही सर्व कर्मसु न क्षमः।
पुरश्चरणहीनो हि न मन्त्रः सिद्धिदायकः॥

जिस प्रकार जीवहीन शरीर किसी कार्यको करनेमें असमर्थ होता है, उसी तरह पुरश्चरणहीन मन्त्र सिद्धिको देनेवाला नहीं होता है।

जपाद्दशांश होमस्या त्तद्दशां शंहि तर्पणम्।
मार्जनं तद्दशांशेन तद्दशांशेन भोजनम्॥

जपसे दशांश होम अर्थात् १ लाख मन्त्र जपे तो १० हजार मन्त्रोंसे हवन करे और उससे दशांश तर्पण याने १ हजार मन्त्रोंसे तर्पण करे और उससे दशांश ब्राह्मण भोजन करावे अर्थात् १०० ब्राह्मणोंको भोजन करावे।

मन्त्रस्यादौ प्रमादाच्चे स्वयंकुर्यात्पुरस्क्रियाम्।
तदा जाप्यं भवेद् व्यथ क्षेत्रेष्विवघृतं यथा॥

यदि असावधानीसे मन्त्रका पुरश्चरण स्वयं करे तो जप जमीनमें गिरा हुआ घृत जैसा व्यर्थ होता है।

तस्माच्च गुरु हस्तेन साधकस्य करेण वा।
पुरश्चर्यां स्वमन्त्रस्य कारयेत्साधकोत्तमः॥

अतएव अपने मन्त्रका पुरश्चरण गुरु द्वारा या किसी साधकसे करावे।

पुरश्चरण संकल्पं दत्वादौ गुरवे शिवे।
यथाविधि जपं कुर्याद् गुरोः कुलमनुं प्रिये॥

हे शिवे! पहले गुरुके लिये पुरश्चरण संकल्प देकर गुरुप्रदत्त मन्त्रको विधिपूर्वक जपे।

गुरोः पाद प्रसादेन पुरश्चर्या फलं शिवे।
गृहीयात्साधकोदेवि गुरूं सन्तोपयेत्ततः॥
दक्षिणाभिः शुभैः वस्त्रै र्यथाविभवमात्मनः।
ततः स्वयं पुरश्चर्यां बह्वीं कुर्यात्तु साधकः॥

हे शिवे! गुरुदेवकी कृपासे साधक पुरश्चरणके फलको ग्रहण करके, तब गुरूको उत्तम वस्त्रोंसे अपने विभव और सामर्थ्यके अनुकूल दक्षिणा देकर प्रसन्न करे। तदनन्तर साधक अनेक पुरश्चरणोंको करे।

यहाँ 'विभवं' इस पदका तात्पर्य यह है कि वित्तशाठ्यका आचरण न करे—जैसे सम्पत्ति यदि विशेष देनेयोग्य हो तो कम न देवे और अवस्था यदि सामान्य देने योग्य हो तो अधिक दक्षिणा न देवे; इसे ही कहते हैं यथा विभवं।

येन मन्त्रः कलौ शीघ्र मष्टसिद्धिप्रदो भवेत्।
पर्वताग्रे नदी तीरे देवतायतने तथा॥
एकान्ते च शुचौ देशे जपेन्नियत मानसः।
ब्रह्मचर्य धरो वीरो मिताहारो जितेन्द्रियः॥

जिससे मन्त्र इस कलिकालमें भी अणिमा आदि अष्टसिद्धियों को शीघ्र देनेवाला होता है। पर्वतके अग्रभागमें, नदीके तटमें, अथवा किसी देवालयमें, एकान्तमें, पवित्र देशमें मनको स्थिर करके, ब्रह्मचर्यव्रत धारणकर, नियमके अनुसार भोजन करनेवाला होकर और अपने इन्द्रियोंपर अधिकार कर, तथा वीरव्रती होकर मन्त्रको जपे।

मिताहार उसे कहते हैं कि जो सामान मात्रा और ठीक समयपर जो भोजन किया जाता है।

अनृतं मत्सरं दम्भं त्यजेत्प्रतिग्रहं तथा।
चारुमूल फलं क्षीर दधिमिक्षान्न सक्तवः॥
शाकं चाष्टविधं चान्नं साधकस्योच्यते बुधैः।
तदप्रशस्तं नात्युष्णं नचोच्छिष्टं नचाधिकम्॥
मृदुकोष्णं सुपक्वं च कुर्याद्वै लघुभोजनम्।

अब साधक अर्थात् मन्त्र जप करनेवाले का नियम बताया जा रहा है, यथा—

'अनृतं' का अर्थ होता है सत्य भाषण, सत्य भाषण वही कर सकता है जो मानव मितभाषी होता है, अर्थात् अल्प भाषण करनेसे ही सत्यभाषण करना संभव पर होता है, अन्यथा बहु-भाषी सत्यभाषण कर ही नहीं सकता है।

'मत्सरं' मत्सर कहते हैं दूसरोंसे द्वेष करनेको जैसे कोई किसीके विभव या सौन्दर्य अथवा स्वास्थ्यको देखकर जलता है

भावार्थ यह है कि किसीकी कोई प्रकारकी उन्नति देखकर अपने भीतर ही भीतर जलना मत्सर पद वाच्य है ॥

'दम्भ' कहते हैं अहंकारको यथा श्रीमद्भगवद्गीतामें भगवान् कृष्णचन्द्रने अर्जुनको उपदेश देते हुए कहा है,

यथा—इश्वरोहमहं योगी सिद्धोऽहं वलवान् सुखी।
आढ्योभिजनवानस्मि कोन्योस्ति सदृशो मया ॥ इत्यादि

'प्रतिग्रह' उसे कहते हैं जो कि किसी मानवने किसीको अपनी मङ्गलकामनासे दान दिया हो।

कारण यह है कि धर्मशास्त्र और नीतिशास्त्रका यह मत है जो दानसे दुर्गतिका नाश होता है, अर्थात् किसी पीड़ित मानवको किसी आचार्यने यह उपदेश दिया कि तुम्हारे पापग्रहके योग प्रवल हैं। इसलिये ग्रहोंके दोष निवारणार्थ तुम्हें किसी वेदपाठी उत्तम ब्राह्मणको बुलाकर संकल्प पूर्वक अमुक अमुक वस्तु दान देना चाहिये।

इसमें यह भी समझ लेना नितान्त आवश्यक है कि तथा-कथित मानव जिसे दान दिया जाता है, उसका पुण्य क्षीण होता है और तद्वारा दान देनेवालेका कल्याण होता है।

अनृत, मत्सर, दम्भ और प्रतिग्रह पुरश्चरणीके लिये त्याज्य है और उत्तम फलमूल, दूध, दही, सत्तू, शाक (भाजी)। और गीतामें भी लिखा है—

आयुः सत्त्वबलारोग्य सुख प्रीति विवर्धनाः।
रस्या स्निग्धा स्थिरा हृद्या आहाराः सात्त्विकप्रियाः॥

इसका अर्थ यह है कि जो जीवनी शक्तिको प्रोत्साहन देता हुआ आयुको पुष्ट करे और जिससे शरीरमें बल उत्पन्न हो बलका अर्थ है आत्मबल। कारण बलकारक दो प्रकारके खाद्य हैं। १ उष्णवीर्य जिससे कामबल या तामसी शक्ति परिपुष्ट होती है। २ शीतवीर्य जिसके भोजन करते ही चित्त प्रसन्न हो जाय तथा उस प्रसन्नतासे आत्मबल स्वतः उन्नत होता है। इसमें द्वितीय बल ही इष्ट है तथा जिस भोजनसे शरीर आरोग्य रहे। जिस पदार्थ के भोजन करनेसे भजन या जप पूजा आदिमें विशेष प्रेम हो, जिसमें रस हो इसका अर्थ आनन्द भी है, परन्तु यह अर्थ इस श्लोकमें उल्लेख करने योग्य नहीं है। इसमें इसका अर्थ यह है कि जिसके भोजन करनेसे शरीरमें रसका सञ्चार हो सके, इसकी उपादेयता इस हेतु है कि सरसता आनेसे ही मधुर-भाषिता आती है जो कि नम्रताका प्रथम सोपान है।

स्निग्ध—स्निग्ध भोजन उसे कहते हैं जिससे शरीरमें स्नेह अर्थात् तरलरसका सञ्चरण हो।

स्थिर—अर्थात् जो भोजन उदरस्थ होकर अपने पाकस्थलमें नियमित समय तक भोजनसे उत्पन्न होनेवाली तृप्तिको प्रदान करे तथा जिससे उदरकी क्रिया स्थिर रहे।

हृद्य—हृद्य भोजन वह है जो मन पसन्द हो ये ही सात्त्विक भोजन हैं।

विद्वान लोग उपरोक्त भोजन साधकके लिये साधना अर्थात् पुरश्चरणकी सिद्धिका सहायक बता गए हैं।

इससे विपरीत जितने प्रकारके खाद्य पदार्थ हैं सभी साधकोंके लिये प्रशस्त नहीं है और गरम इससे केवल स्पर्शमें ही उष्णता न समझनी चाहिये, अपितु जितने भी उष्णवीर्य खाद्य हैं सब साधकोंके त्याज्य हैं।

उच्छिष्ट जूठा भोजन भी साधक त्याग करे तथा साधक अधिक भोजन भी न करे।

पुरश्चरणार्थी कोमल, किञ्चित् उष्ण, अच्छी तरह जिसका पाक हो गया हो और हल्का भोजन करे।

नेन्द्रियाणां विकारः स्यात्तथा भुञ्जीतसाधकः।

साधक उस प्रकारका भोजन करे जिससे इन्द्रियोंमें विकार न उत्पन्न हो।

यद्वा तद्वा परित्याज्यं दुष्टान्नं कुत्सितं फलम्।
प्रशस्तान्नं समश्नीयान् मन्त्रः सिद्धिं समीहया॥

साधक जैसा-तैसा भोजन न करे और दूषित अन्न तथा अहितकर फलोंको त्यागकर मन्त्रसिद्धिकी कामनासे प्रशस्तान्न भोजन करे।

तपोव्रतस्यसिद्धिः स्याल्लक्षेणैव न संशयः।
शाकभक्ष्यो हविष्याशी फलौ लक्षत्रयं जपेत्॥

[illegible] और [illegible] सिद्धि तो लक्षमन्त्र जपनेसे ही हो

जाती है, परन्तु शाक तथा हविष्य भोजन करनेवालेको कलियुगमें तीन लाख मन्त्र जप करना चाहिये।

यति श्च ब्रह्मचारी च भिक्षान्नजीविनौ मतौ।
सर्वधर्म बहिर्भूतो गृही भिक्षान्न जीवनात्॥

यति और ब्रह्मचारी यही दोनों भिक्षाके अन्नसे जीवन-धारण करने के अधिकारी हैं, यदि गृहस्थाश्रमी भिक्षान्नसे जीवन-धारण करे तो वह आर्य-प्रचलित जितने धर्म हैं सबसे बाहर हो जाता है।

लवणं पललं चैव क्षारं क्षौद्रं रसान्तरम्।
माषमुद्ग मसूरादि कोद्रकान् चणकानपि॥

साधक नीमक, मांस, खारापदार्थ, मधु और मीठे-खट्टे आदि रसपाक, उड़द, मूँग, मसूर, कोदो और चनाको भी छोड़ देवे।

असम्भाषण मन्यायं वर्जयेदन्यपूजनम्।
विना श्रमोचितं नित्य मथ नैमित्तिकं च यत्॥

स्त्री शूद्र पतित व्रात्य नास्तिकोच्छिष्ट भाषणम्।
असत्यभाषणं चैव कौटिल्यं च परित्यजेत्॥

असंगत बातें न करे, अन्याय न करे और दूसरोंका पूजन भी न करे तथा अनायास नित्य, नैमित्तक कर्म करनेकी कामना न करे, अर्थात् नित्य या नैमित्तिक कर्म करनेमें अपने मनमें परिश्रमको स्मरण करके परित्याग न करे, स्त्री शूद्र "पतित—पतित उसे कहते हैं जिसे कोई पापजनित प्रायश्चित्त करना अनिवार्य हो,

परन्तु उसने न किया हो" और व्रात्य यह संज्ञा ब्राह्मणकी सोलह वर्ष तक यज्ञोपवीत न होनेसे होती है और क्षत्रियकी २२ वर्ष तक यज्ञोपवीत न होनेसे होती है, तथा वैश्यकी २४ वर्ष तक जनेउ न होनेसे होती है, तथा नास्तिक (जिसे ईश्वरके अस्तित्वपर विश्वास न हों) से भाषण न करे, उच्छिष्ट भोजन न करे, असत्य भाषण न करे और कुटिलताको परित्याग करे।

सद्भिरपि न भाषेत जपहोमार्चनादिषु।
वाग्यतः कर्मनिर्वर्त्यं निस्पृहस्य वनादिषु॥
वर्जयेद्गीतकाव्यादि श्रवणेऽनृत दर्शनम्।
ताम्बूल गन्ध लेपं च पुष्पधारण मेवच॥

जप, होम तथा पूजनके समय संतोंसे भी बातें न करे, मौनावलम्बनपूर्वक पूजनादि कर्मको समाप्त करके वन आदि अर्थात् बाग-बगीचोंमें सैर-सपाटा करनेकी भी कामना न करे और गीत भजन आदि साहित्यिक सरस काव्योंको न सुने तथा जिसके देखनेसे मानसिक विकार उत्पन्न हो उसे न देखे। पान खाना, खुशबू लगाना और फूलकी माला या फूल धारण करना छोड़ देवे।

मैथुनं तत्कथालापं तद्गोष्ठी परिवर्जयेत्।
कौटिल्यं क्षौद्रमभ्यङ्ग मनिवेदितभोजनम्॥
असंकल्पित कृत्यंच वर्जयेन्मर्दनादिकम्।
स्नायाश्च पञ्चगव्येन केवलामलकेन च॥

मैथुन अर्थात् स्त्री सहवास, तत्सम्बन्धी बातें और यह कर्म करनेवालोंकी मण्डलीको भी छोड़ देवे। कुटिलता न करे, मधु न खाय, तेल न लगावे, विना बुलाये भोजन न करे। विना विचारे कर्म न करे, बदनका मालिश न करावे। पञ्चगव्यसे या केवल आंवलेसे स्नान करे।

श्रुतिस्मृत्यागमोक्तैश्चमन्त्रैः स्नायादनन्तरम्।
स्नानं त्रिषुवणं प्रोक्त मसक्तौद्विः सकृत्तथा॥
अस्नातस्य फलं नास्ति नचातर्पयतः पितॄन्।
पुरश्चरणकाले तु तद्धोमावरणे तथा॥

इसके बाद वेद, धर्मशास्त्र प्रतिपादित मन्त्रोंसे स्नान करे, स्नान प्रातः, मध्याह्न और सायंकालमें करना चाहिये यदि त्रिकाल-स्नान करनेमें असमर्थ हो तो प्रातः तथा सायंकालमें स्नान करे, यदि इसमें भी असमर्थ हो तो प्रातःकालमें अवश्य ही स्नान करे। कारण पुरश्चरणकालमें तथा होम-कालीन पूजाके समय आवरण पूजनमें जो स्नान और पितृतर्पण नहीं करता है, वह फलका अधिकारी नहीं होता है।

स्नान करनेका मतलब हो जलस्नान है, क्योंकि मलनिर्मोचन करना ही स्नानका प्रयोजन है और विना स्नानके मलनिर्मुक्त होना असंभव है। इसलिये गीता माहात्म्यमें लिखा है कि ‘मलनिर्मोचनं पुंसां जलस्नानं दिने दिने।”

मूलं जप्त्वैकलक्षं तु कृत्वा होमं दशांशतः।
साधकैः क्षत्रियेनापि दशांशं होम माचरेत्॥

एक लक्ष मूलमन्त्र जपके दशांश हवन करे, तथा क्षत्रिय साधक भी दशांश ही हवन करे।

तर्पयेत्सहिते देवीं भोजयेत्साधकांस्ततः ।
पुरश्चर्या विधिश्चैष वर्णितः कुलसुन्दरी ॥

हे कुलसुन्दरि ! सपरिवार देवीका तर्पण करके तब साधकोंको भोजन करावे यह पुरश्चरण विधि मैंने तुम्हारे आग्रहसे बतला दिया।

अथवान्यप्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते ।
अष्टम्यां च चतुर्दश्यां पक्षयोरुभयोरपि ॥
सूर्योदयात्समारभ्य यावत्सूर्यास्तयो भवेत् ।
तावज्जप्त्वा निरातंको मन्त्रः कल्पद्रुमो भवेत् ॥

अथवा पुरश्चरणके दूसरे प्रकार भी हैं, यथा दोनों पक्षकी अष्टमी, चतुर्दशीको सूर्योदयसे सूर्यास्त पर्यन्त निर्भीक भावसे यदि मन्त्रको जपे तो यह मन्त्र कल्पद्रुमके समान होता है।

चन्द्रसूर्य ग्रहेवापि ग्रासावधि विमुक्तितः ॥
यावत्सख्यो मनुर्जप्त्वा तावद्धोमादिकं चरेत् ॥

चन्द्रग्रहण और सूर्यग्रहणमें ग्रासके समयसे लेकर मोक्षकाल तक जितने मन्त्रोंको जपे उतना ही होम करे।

सर्वसिद्धिश्वरोमन्त्रो भवेत्साधक वन्दिते ।
शरत्काले रवौ देवि जपेन्मन्त्रं यथाविधि ॥

हे साधकप्रणते ! शरत्कालमें रविवारके दिन विधिपूर्वक मन्त्रको जपनेसे सम्पूर्ण सिद्धियोंका प्रदाता होता है।

निशीथे रचये द्धोमं क्षत्रन्यस्ताहुतिं शिवे ।
तत्क्षणात् साधको देवि क्षत्रियोपि शुभं लभेत् ॥

हे शिवे ! मध्यरात्रिमें क्षत्रिय होमकी रचना करे और क्षत्रिय ही आहुति देवे, हे देवि ! क्षत्रिय भी तत्क्षग शुभको लाभ करता है ।

अथवान्य प्रकारेण पुरश्चरणमिष्यते ।
गुरुमानीय संस्थाप्य देवतापूजनं चरेत् ॥

अथवा प्रकारान्तरसे भी पुरश्चरणविधि सम्पन्न की जा सकती है, यथा—गुरुको लाकर उन्हें बैठाकर देवतापूजन आदि करे ।

वस्त्रालङ्कारहेमाद्यैः सन्तोष्य गुरुमेवच ।
तत्सुतं तत्सुतांश्चैव तस्य पत्नीं तथैव च ॥
पूजयित्वा मनुं जप्त्वा सर्वसिद्धिश्वरो भवेत् ।

वस्त्र, अलङ्कार और सुवर्ण आदिसे गुरुके लड़के, तथा लड़कियाँ, गुरुपत्नी सहित गुरुदेवको भी प्रसन्न करके मन्त्र जपकर मानव सम्पूर्ण सिद्धियोंका प्रभु होता है ।

अथवान्य प्रकारेण पुरश्चण मिष्यते ॥
सहस्रारे गुरोः पादपद्मं ध्यात्वाप्रपूज्य च ।
केवलं देवभावेन सर्वसिद्धिश्वरो भवेत् ॥

अथवा और भी पुरश्चरण के निम्नोक्त प्रकार हैं । यथा—सहस्रारचक्रमें देवता भावसे गुरुका ध्यान और मानसिक उपचारोंसे पूजन करके १ अणिमा, २ लघिमा, ३ गरिमा, ४ महिमा;

५ प्राप्ति, ६ प्राकाम्य, ७ ईशित्व और वशित्व इन अष्टसिद्धियोंका ईश्वर होता है।

गुरवे दक्षिणां दद्यात् यथा विभवमात्मनः।
गुरो रनुज्ञामात्रेण दुष्टमन्त्रोपि सिध्यति ॥
जपश्रान्तस्तुताध्याये ध्यानश्रान्तस्तु तं जपेत्।
जपध्यान समायुक्तो मन्त्री सिध्यति नान्यथा ॥

अपनी सम्पत्तिके अनुसार गुरुदेवको दक्षिणा देवे। गुरुकी आज्ञा पाते ही दुष्ट मन्त्र (अर्थात् जो मन्त्र दूषित हो) भी सिद्ध हो जाता है।

जपसे यदि श्रान्त हो गया हो, ध्यान करे और ध्यानसे श्रान्त होनेपर जप करे, इस तरह जप और ध्यानमें लगा हुआ साधक सिद्धिको प्राप्त करता है, प्रकारान्तरसे सिद्धि नहीं मिल सकती है।

इत्येष पटलो गुह्यो मन्त्रसारमयो ध्रुवम्।
अप्रकाश्यो प्यदातव्यो नाख्येयो ब्रह्मवादिभिः ॥

भैरव बोले—हे देवि ! इस प्रकार अप्रकट और जिसमें मन्त्रतत्व की ही प्रधानता है यथा ब्रह्मके जो प्रकट करनेवाले हैं ऐसे महात्माओंसे भी प्रकाश न करने योग्य है और कहने तथा देने योग्य भी नहीं है, सो मैंने तुम्हें कह दिया।

इति श्री भुवनेश्वरी रहस्ये पुरश्चरणविधि नामकः
त्रयोदशः पटलः ॥१३॥

अथ चतुर्दशः पटलः

—:०:—

श्रीभैरवउवाच। भैरवजी बोले—

अथ होमविधिं वक्ष्ये सर्वतन्त्रेषु गोपितम्।
सारं श्री भुवनेश्वर्या मन्त्रराजस्य पार्वति॥

हे पार्वति! इसके अनन्तर अर्थात् पुरश्चरविधि कहनेके बाद सभी तन्त्रोंमें गुप्त श्री भुवनेश्वरी मन्त्रराज के सर्वस्व होम-विधिको कहता हूं।

ध्यात्वा देवि परां देवीं गुरूं ध्यात्वा सशक्तिकम्।
जपेच्छ्रीचक्र पुरतो निशीथे मन्त्र मीश्वरी॥
अयुतं चैकलक्षं वा दशांशं होम माचरेत्।
कोटि लक्षं प्रजप्तस्य मन्त्रस्य सुरसुन्दरि॥
विना दशांश होमेन न तत्फलमवाप्नुयात्।
विना श्मशान गमनं नित्य होम जपादयः॥
न सिध्यति वरारोहे कलौ भैरव शापतः।
घृत पायस मृद्वीका गुडपुष्पशिवा शरैः॥
होमं दशांशतः कार्यो जपस्य सुरवन्दिते।
पञ्चामृतेन देवेशि! तद्दशांशेन मार्जयेत्॥
तर्पयित्वा दशांशेन पञ्चामृतमुखं सुधीः।
भोजयित्वा दशांशेन दीक्षितांश्च द्विजोत्तमान्॥

ततो देवि पुरश्चर्याफलमाप्नोति साधकः।
अन्यथा सिद्धि हानिः स्याज्जप्तस्यापि मनोः सदा॥

हे देवि! परदेवी अर्थात् भुवनेश्वरी और सपत्नीक गुरुका ध्यानकर श्रीयन्त्रके आगे मध्यरात्रिमें दश हजार या एक लाख अपने इष्ट मन्त्रको जपे और दशांश हवन करे।

हे सुरसुन्दरि! करोड़ों मन्त्रोंको जपकर भी बिना दशांश हवनके जपका फल नहीं प्राप्त करता है।

हे वरारोहे! बिना श्मशान गये तथा बिना नित्यहोम जपादि किये कलियुगमें मन्त्र भैरवके शापसे सिद्ध नहीं होते हैं।

घी, पायस, दाख गुडपुष्प, महोवेके फूल, मिश्रीसे जपकर दशांश हवन करे और हवनके दशांश पञ्चामृतसे मार्जन पञ्चामृतसे ही मार्जनका दशांश तर्पण करे, तर्पणसे दशांश दीक्षित उत्तम ब्राह्मणोंको भोजन करावे।

हे देवि! तब साधक पुरश्चरणके फलका अधिकारी होता है, यदि पूर्वोक्त कर्मोंको न करे तो जप किए हुए मन्त्रोंकी सिद्धि भी हानिको प्राप्त होती है।

श्री देव्युवाच। देवीजी बोलीं—

यस्य नैतावता शक्तिः होमं कर्तुं दशांशतः।
स कथं क्रियते होमं तद् वदस्व महेश्वर॥

हे महेश्वर! यदि साधकमें पूर्वोक्त दशांश हवन आदि करनेकी शक्ति न हो तो वह किस प्रकार हवन करे यह कहिये।

श्री भैरवउवाच। भैरवजी बोले—

यस्य होमं शिवे कर्तुं शक्तिर्नास्ति दशांशतः।
तस्य युक्तिं प्रवीम्यद्य कौलिकानां हिताय च॥

हे शिवे! जिसे दशांश हवन करनेका सामर्थ्य नहीं है, ऐसे कुलाचार पालन करनेवाले की हित-कामनासे मैं युक्तिको कहता हूं।

शुभेह्नि सायं देवेशि गत्वो पवनमण्डलम्।
श्मशानं सुमुखं धृत्वा पृष्ठेवा परमेश्वरि॥

हे देवेशि! शुभदिन सायंकालमें किसी वागमें जाकर श्मशानकी ओर मुख करके अथवा चिताभूमिकी ओर पीठ करके—

श्मशानं प्रणमेद्भक्त्या साधकः साधकैः समम्।
ज्वालाकरालवदने कल्पान्त दहनप्रिये॥
प्राणे प्राणलयोद्भूते चित्ते मे ऽनुग्रहं कुरु।
इति नत्वा महादेवि ज्ञात्वा दिग्भूत भैरवान्॥

साधक साधकोंके साथ यह कहकर श्मशानवासिनी भैरवीको प्रणाम करे, यथा—हे ज्वालोपम भयङ्कर वदने, प्रलयकालमें संसारको भस्म करनेवाले भैरवकी प्रिये! लयोन्मुख प्राणमें तथा मेरे चित्तमें अनुग्रह करो, हे महादेवि! (यह भैरवजी पार्वतीको कह रहे हैं) इस प्रकार प्रणाम कर और दिशाओंके भूत, भैरव आदिको जानकर—

निवसेत्तत्र रात्रौ तु कुर्याद्धोमं कुलेश्वरि !
ऐशान्यां दिशि देवेशि श्रीचक्रं तु विभावयेत् ॥
सम्पूज्य विधिवन्मत्रै र्दिक्पालांस्तत्र पार्वति ।
गणेशं पूजयेत्तत्र पूजयेत् कुलयोगिनी ॥
तत्पूर्वतः खनेत्कुण्डं हुनेदाज्यं च विद्यया ।
त्रिकोणं कुण्डमीशानि हस्ताधोगाधमद्रिजे ॥

हे कुलेश्वरि ! वहाँ निवास करे और रात्रिमें हवन करे। ईशानकोणमें श्रीचक्रकी भावना करे। वहाँ विधिवत् मन्त्रोंसे दिक्पाल, गणेश और चतुषष्ठी योगिनियोंका पूजन करे तथा उसके पूर्वमें कुण्ड खने, उस कुण्डमें इष्टविद्यासे आज्यकी आहुति देवे। कुण्ड त्रिकोण और एक हाथ गहरा होना चाहिये,

हस्तैक विस्तृतंविश्व तस्मिश्चक्रं विभावयेत्।
विन्दु त्रिकोण षट्कोणं वसुपत्रं त्रिवर्तुलम् ॥

एक हाथ लम्बाई एक हाथ चौड़ाई विन्दु त्रिकाण, षट्कोण, आठपत्र और तीन गोलाई।

भूगृहाङ्कं समाख्यातं वह्निचक्रं सुरेश्वरि ।

और पृथ्वीका चिन्ह यही अग्निके चक्र हैं ।

गणेशधर्मवरुणाः कुवेरसहितास्ततः ।
पूजनीयाः विशेषेण गन्धाक्षत प्रसूनकैः ॥

कुवेर सहित गणपति, धर्मराज और वरुणका विशेषकर गन्ध और अक्षतसे पूजन करे ।

ब्राह्माद्याः मातरः पूज्याः असिताद्याश्च भैरवाः।
वसु पत्रेषु सम्पूज्या वह्निचक्रे महेश्वरि॥

ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी, चामुण्डा और चण्डिका इन माताओंका पूजन तथा असिताङ्ग, रुरु, चण्ड, क्रोध, उन्मत्त, कपाली, भीषण संहार इन आठ भैरवोंका वह्निचक्रके आठों दलोंमें पूजन करे।

माया च मोहिनी चैव तृतीया च मनोन्मना।
मुक्तकेशी च मातङ्गी, मचिराक्षी षडश्रके॥

षट्कोणमें क्रमसे माया, मोहिनी, मनोन्मना, मुक्तकेशी, मातङ्गी तथा मचिराक्षीका पूजन करे।

त्रिकोणे यमुना गङ्गा सम्पूज्या च सरस्वती।

त्रिकोणमें गङ्गा, यमुना तथा सरस्वतीका पूजन करे। (पूजन सामग्रीमें गन्ध, अक्षत और पुष्प समझना चाहिये)

बिन्दौ श्रीभुवनेशानी गन्धाक्षत प्रसूनकैः।
विन्द्वावरणिनामध्ये मूलमन्त्रेण मान्त्रिकः॥

मन्त्रज्ञ मध्यबिन्दुमें आवरणके साथ भुवनेश्वरीका गन्ध, अक्षत और पुष्पोंसे मूलमन्त्र द्वारा पूजन करे।

वह्निमावाह्य मूलेन तदावाहन मुद्रया।
ॐ ॐ रां अग्नये स्वाहा मन्त्रेणेति सुरेश्वरि॥

हे सुरेश्वरि! आवाहन मुद्रा और मूलमन्त्रसे अग्निका आवाहन करे—अग्निका मूलमन्त्र ॐ ॐ रां अग्नये स्वाहा।

वह्निं मूलेन संस्कृत्य कृत्वाज्यं घृतमीश्वरि ।
दशांशं होमसंकल्पं कुर्यान् मूलस्य साधकः ॥

हे ईश्वरि ! मूलमन्त्रसे अग्नि और घृतका संस्कार करके साधक मूलमन्त्रके दशांश हवन करनेका संकल्प करे ।

मालया दहने दद्या दाहुतीनां शतत्रयम् ।
आहुतिः क्षत्रियर्यन्यस्तातत्रवह्नौ हुनेत् प्रिये ॥

हे प्रिये ! हाथमें माला लेकर अर्थात् मालासे संख्या रखके ३०० आहुतियां देवे । क्षत्रियके द्वारा वह्नि स्थापन करके तब हवन करे ।

पुष्पैः फलै राज्यमिश्रैस्ततो दद्या त्वलिंप्रिये ।
मकारैः पञ्चाभिर्देवि पुनर्जप्त्वात्र पूर्ववत् ॥
आहुतीनां शतं दद्यात् अष्टोत्तरमधोमुखः ।
ततः साधकचक्रस्य क्षत्रियस्य च पार्वती ॥
पूजां विधाय चक्रेस्मिन् स्तोपयेन्नतिभिर्गुरुम् ।
अशीभि र्वर्धयेत् क्षेत्रं येनासु क्षोणिपो भवेत् ॥
क्षत्रियोपि वदेत्तत्र पुरश्चर्या फलं मनोः ।
लभस्व साधकश्रेष्ठ ततः पूर्णाहुतिं हुनेत् ॥

हे प्रिये ! फूल और फलों घृत मिलाकर आहुति देकर तब पञ्चमकार (मद्य, मांस, मीन, मुद्रा और मैथुन यह अर्थ सामयिक है) से बलिप्रदान करके पुनः पूर्वोक्त प्रकारसे जप करके नीचेकी ओर मुख करके १०८ आहुति देवे ।

तदनन्तर साधकचक्र तथा क्षत्रियका भी इसी चक्रमें पूजन करके प्रणामसे गुरुको प्रसन्न करे और क्षत्रियको आशीर्वादसे उन्नत करे, जिससे शीघ्र पृथ्वीनाथ हो जाय।

क्षत्रिय भी यह कहे कि साधकप्रवर! इन मन्त्रोंके पुरश्चरण जनित फलको लाभ करो, तदनन्तर पूर्णाहुति देवे।

तत्तो वर्म पठे द्देवि येन देवीमयो भवेत्।
ततो देवीं चसशिवां मन्त्री संहार मुद्रया॥
साधकां स्तर्पयित्वादौ भक्ष्यपानादिभिः शिवे।
विसृज्य साधकान् देवीं सशिवां सपरिच्छदाम्॥

हे शिवे! तब कवचका पाठ करे, जिससे साधक देवीमय हो जाय। अनन्तर साधक नाना प्रकारके खाने-पीने आदि सामग्रियोंसे आमन्त्रित साधकोंको तृप्त करके, संहारमुद्रासे शिव-सहित और साङ्ग, सायुध, सपरिवार, सावरण, देवी भुवनेश्वरीको विसर्जित करके—

पुरश्चर्या फलं प्राप्य साधको मुक्ति भाग्भवेत्।
इत्येष पटलो दिव्यो होमपूजामयो ध्रुवम्।
सवतत्त्वैकनिलयो गोपनीयो मुमुक्षुभिः॥

साधक पुरश्चरणके फलको पाकर मुक्तिका अधिकारी होता है। होम और पूजन प्रधान यह स्वर्गीय पटल सम्पूर्ण तत्त्वोंका स्थान मोक्षकी कामना करनेवालोंसे गोपनीय है।

इति श्री भुवनेश्वरी रहस्ये होमविधिश्चतुर्दशः पटलः॥१४॥

अथ पञ्चदशः पटलः

—:o:—

श्री भैरवउवाच । भैरवजी बोले—

अधुना चक्रपूजान्ते वक्ष्यामि नगनन्दिनी ।
वरदा भविता शीघ्रं यथा श्रीभुवनेश्वरी ॥

श्री भैरवजी बोले—हे नगनन्दिनि ! अब चक्रपूजाके बाद की विधि बताता हूं, जिस तरह भगवती श्रीभुवनेश्वरी शीघ्र ही वरको देनेवाली होती हैं।

एकादशाधिकादेवि साधकाः परमार्थदाः ।
एकादशापि चक्रे तु वर्णिताः साधकाः शुभाः ॥
उत्तमा नव देवेशि मध्यमाः पञ्च साधकाः ।
अधमास्तु त्रयोदेवि न पूज्याश्चक्रमध्यगाः ॥
विना चक्रार्चनं नैव नित्यपूजा जपादयः ।
फलदायोगिनी शापात्तस्माच्चक्रं प्रपूजयेत् ॥

हे देवि ! एकादशसे अधिक साधक परमार्थको देनेवाले होते हैं। चक्रपूजनमें ग्यारह साधक भी शुभदायक हैं। हे देवेशि ! नौ साधक उत्तम होते हैं, पांच साधक मध्यम बताये गये हैं और तीन साधक अधम होते हैं, चक्रमध्यस्थ पूजने योग्य नहीं हैं। बिना चक्रपूजाके नित्य होम-जपादि योगिनीके शापसे फलदात्री नहीं होती हैं। अतएव चक्रका पूजन अवश्य करे।

कुहूपूर्णेन्दु संकान्तौ चतुर्दश्यष्टमीषु च ।
नवम्यां मङ्गले देवि चक्रपूजा शुभप्रदा ॥

अमावस, पूर्णमासी, संक्रान्ति, चतुर्दशी, अष्टमी, नवमी तिथि और मङ्गलवारमें चक्रकी पूजा शुभको देनेवाली होती है।

साधकास्तु सतीर्थ्याश्च लिखिताशवमन्दिरे ।
देवतापत्तने वापि शून्ये शृङ्गाटकेऽथवा ॥
दिग्भैरवान् विचार्यादौ ततस्तु पर साधकः ।
उपविश्यासने देवि संसोध्य वीरमण्डलम् ॥
साधकानुपवे श्याथ कुर्यात्संकल्पमादरात् ।
न्यासं विधाय सर्वाङ्गे भूतशुद्ध्यादिकं चरेत् ॥
तत्र प्राणान्प्रतिष्ठाप्य श्रीचक्रं पूजयेच्छिवे ।
आत्म श्रीचक्रयोर्मध्ये कुम्भस्थापन माचरेत् ॥

साधक और तीर्थोंके साथ उत्तम साधक किसी श्मशानगृहमें या देवपुरीमें अथवा शून्यस्थानमें किंवा किसी चौवहेमें एकत्रित होकर पहले दिशाओंके भैरवोंका विचार कर, आसन पर बैठ और वीरमण्डलको शुद्धकर साधकोंको बैठाकर आदरपूर्वक संकल्प करे। तब सम्पूर्ण अङ्गोंमें न्यास करके भूतशुद्धि आदिको करे। वहाँ प्राणप्रतिष्ठा करके श्रीचक्रका पूजन करे। अपने और श्रीचक्रके मध्यमें घटस्थापन करे।

गौडीं माध्वीं तथा पैष्टीं चासवं पूजयेत् शिवे ।
एतेषां रसमादाय तत्वतो भैरवार्चने ॥

आनन्दरस पूजायां तुष्यते परमेश्वरि ।

हे शिवे ! गौडी, माध्वी तथा पैष्टी आसवका पूजन करे, इन आसवोंका रसग्रहण कर भैरवके पूजनमें वस्तुतः आनन्दरस प्राप्त होता है और भगवती भुवनेश्वरी प्रसन्न होती हैं।

विप्राश्च क्षत्रिया वैश्या शूद्राः पूज्याः सुपावनाः ।

पवित्रतम ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चारों वर्णोंका पूजन करे।

गौडी विप्रेषु शुभदा माध्वी क्षत्रेषु चोत्तमा ।
वैश्ये तु शुभदापैष्टी शूद्रेषु शिवमासवम् ॥

गौडी आसव ब्राह्मणोंमें शुभदेनेवाली है, माध्वी क्षत्रियोंमें उत्तम है, पैष्टी वैश्योंमें शुभदा हैं और शूद्रोंमें शिवासव है।

ब्रह्मक्षत्रियवैश्याना मानदेस्तु शुभावहाः ।
आसवं दूरतस्त्याज्यं साधकैश्च मुमुक्षुभिः ॥

ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्योंके आनन्द ही शुभदायी हैं। परन्तु मोक्षकी कामना करनेवालोंसे आसव दूर ही से त्याग करने योग्य है।

अभावेतु सुरानन्द रसनां परमेश्वरि ।
मधुना पूजयेद्देवि देवमानन्द भैरवम् ॥

हे परमेश्वरि ! सुरानन्द रसके अभावमें आनन्द-भैरव देवताकां मधुसे पूजन करे।

द्रव्यं संशोध्य देवेशि मकारान्पञ्चशोधयेत् ।
श्रीचक्रामेऽर्चयेत्तत्र साधकान् भैरवागमे ॥

तत्र संपूज्य यन्त्रेशं देवमावाह्य भैरवम् ।
योगिनीं पूजयेत्तत्र बटुकं पूजयेत्ततः ॥
गणेशं क्षेत्रपालं च पूजयेच्चक्रनायिकाम् ।

हे देवेशि ! द्रव्योंको शुद्ध करके पञ्चमकारोंको शुद्ध करे, श्रीचक्रके आगे साधकोंका पूजन करे, वहां यन्त्रेश्वरका पूजन करके और देवाधिदेव भैरवका आवाहन कर, योगिनी, बटुक, गणेश क्षेत्रपाल और चक्रकी प्रधान नायिकाका पूजन करे ।

संतर्प्य देवान् पितृंश्च मुनीन् दिव्यान् महेश्वरि ॥

हे महेश्वरि ! देवता, पितर और मुनियोंको तर्पण द्वारा प्रसन्न करके—

श्रीचक्राग्रे जपेन्मूलं पठेत्कवच मीश्वरि ।
मन्त्रनामसहस्रं तु स्तोत्रं तत्वनिरूपणम् ॥

श्रीचक्रके आगे मूलमन्त्रको जपे और कवच, सहस्रनाम तथा तत्वनिरूपनस्तोत्रका पाठ करे ।

ततो देव्यै वलिं दत्वा साधकां स्तर्पयेच्छिवे ।
भैरवां स्तर्पयेदष्टदीक्षितां स्तर्पयेत्ततः ॥

हे शिवे ! तब वलि देकर साधकोंको तृप्त करे, अनन्तर अष्टभैरवोंको तृप्त करके दीक्षितोंको तृप्त करे ।

उत्तमं नव पात्राणि पञ्चपात्राणि मध्यमम् ।
अधमं त्रीणि पात्राणि चैकपात्रं न पूजनम् ॥

नौ पात्र उत्तम हैं, पाँच पात्र मध्यम हैं तथा तीन पात्र अधम हैं और एक पात्र कर्तृक पूजन नहीं होता है ।

प्रवृत्ते भैरवी तन्त्रे सर्वे वर्णा द्विजातयः।
निवृत्ते भैरवी तन्त्रे सर्वे वर्णाः पृथक् पृथक्॥

भैरवी तन्त्रकी जब प्रवृत्ति होती है तो सब वर्ण द्विजाति हो जाते हैं और जब भैरवी तन्त्रकी निवृत्ति होती है तब सभी वर्ण अलग-अलग समझे जाते हैं।

नवकन्याः समभ्यर्च्य वीरेशो भैरवार्चने।
रेतसा तर्पयेद्देवीं कुलकोटिं समुद्धरेत्॥

नवसंख्य कुमारियोंका पूजन करके, वीर्यका स्वामी होकर अर्थात् ऊर्ध्वरेता-वीर्यक्षरणके दो मार्ग बताये गये हैं एक अधोभागसे जो सांसारिक जनोंके प्रवृत्ति मूलक हैं और निम्नभागसे जिस वीर्यकी गति है उससे मानवके आयुः सत्व, बल और आरोग्य आदि क्षीण होते हैं तथा इस प्रवृत्तिवाले मानव अजितेन्द्रियपद वाच्य हैं।

दूसरा वीर्यका ऊर्ध्वगमन हैं, इसमें शुक्र-सञ्जीवनका काम करता है। कारण षट्चक्र सम्मेलन करके सहस्रार स्राविणी अमृतधारासे मिलकर इस शरीरमें अतुलनीय सत्त्व, मनोभिलषित परमायु, भीमके समान बल, प्रशंसनीय आरोग्य आदिका चिर-निवासस्थान बनाता है।

पूर्वोक्त वीरेश भैरवके पूजनमें कन्याओंका पूजन करके—

रेतससे—अर्थात् अपनी सम्पूर्ण इन्द्रियोंको देवीके आधीन करके देवीको प्रसन्न करे, इस प्रसन्नतासे अपने समेत देवीकुलके करोड़ों भक्तोंका उद्धार करता है।

शक्त्युच्छिष्टं पिवेद्द्रव्यं वीरोच्छिष्टं च चर्वणम्।

भगवतीके प्रसादको पान करे और भैरवका प्रसाद चवण करे।

मकार पञ्च संयुक्तं कुर्याच्छ्री चक्रमण्डले।
स्वगुरूं पूजयेत्तत्र तर्पयेच्छक्तितः परम्॥

पञ्च मकारोंको श्रीचक्र मण्डलके अधीनस्थ कर देवे और वहीं अपने गुरूका पूजन तथा अपनी शक्तिसे तर्पण करे।

मकार पञ्चक इस प्रकार हैं :—

ब्रह्मरन्ध्रेण मध्यस्थं दिव्यकुम्भ समुद्भवम्।
सद्योमद्यमयीपूर्णा (वारुणी) परिकीर्त्तिता॥
कामःक्रोध स्तथालोभः पशावस्त्रयमुच्यते।
ज्ञानखड्गेन हननं द्वितीया (मांसं) परिकीर्त्तिता॥
अहंकार महामत्स्य वैराग्ये जाल निक्षिपेत्।
तपः संयोजितोयेन तृतीया (मत्स्यं) परिकीर्त्तिता॥
विवेक विस्वासयो मध्ये रागद्वेषादि चूर्णवत्।
तच्चूर्णं मुद्रिकां कृत्वा चतुर्थं (वीरोच्छिष्टं च चर्वणम्) परिकीर्त्तितम्॥
कुण्डलिनी नादरूपा विन्दुरूप स्तथाशिवः।
उभौ संयोजितो यत्र पञ्चमं (मैथुनं) परिकीर्त्तितम्॥

ब्रह्मरन्ध्रसे मध्यस्थ अमृत घटसे उत्पन्न सद्योमद यह प्रथम है, काम, क्रोध, लोभ ये ही पशु कहे जाते हैं, इन्हें ज्ञानरूपी खड्गसे मारना द्वितीय मकार है, अहंकाररूपी बड़ी मछली

फांसनेके लिये वैराग्य सागरमें जाल गिरावे और उस मछलीको फांसकर तपमें मिला देना ही तृतीय मकार है। विवेक और विस्वासके मध्य रागद्वेपादि चूर्णके समान रहते हैं, उस चूर्णको मुद्रिकामें परिणत करना चतुर्थ मकार है। कुण्डलिनी नादरूपा है और शिव बिन्दुरूप, इन दोनोंको संयुक्त करना पञ्चम मकार है।

तोषयित्वा गुरूं देवि दक्षिणाभिश्च वन्दनैः।
तदाज्ञां शिरसादाय कुर्यादानन्दमात्मनः॥

हे देवि! दक्षिणा तथा प्रणामसे गुरूको प्रसन्न कर और उनकी आज्ञाको शिरोधार्य करके अपना आनन्द करे।

इत्येष पटलो देवि चक्रसर्वस्व संज्ञकः।
तव भक्त्या मया ख्यातो गोपनीयो मुमुक्षुभिः॥

इति श्री भुवनेश्वरी रहस्ये चक्रपूजाविधिः पञ्चदशः पटलः ॥१५॥

अथ षोडशः पटलः

—:o:—

श्री भैरवउवाच। भैरवजी बोले—

शृणुदेवि प्रवक्ष्यामि सारात् सार तरं परम्।
आचाराणां विधिं येन कलौ देवी प्रसीदति॥

द्वौमार्गौ चागमे स्यातां वामाचारस्तु दक्षिणः ।
तयो स्तत्वं कुलाचारः शृणु तेषां विधिं शिवे ॥
साधको दीक्षितो येन सिद्धिमवाप्नुयात् ।
वद्वदामि तव स्नेहाद् न चा ख्येयं दुरात्मने ॥

हे देवि! परम सारस्वरूप आचारविधिको कहता हूं जिससे कलियुगमें देवी प्रसन्न होती हैं, तुम सुनो! तन्त्रः शास्त्रमें वाम और दक्षिण भेदसे दो आचार वर्णित हैं—इन दोनों आचारोंका निचोड़ है, कुलाचार अब इन्हींको विधिको सुनो, जिससे दीक्षित साधक सिद्धिको पाता है। तुम्हारे स्नेहसे तुम्हें कह रहा हूं दुरात्माओंसे न कहना।

प्रथमो दक्षिणाचारो वामाचारो द्वितीयकः ।
तृतीयस्तु कुलाचारो विधिं तेषां शृणु प्रिये ॥

पहला दक्षिणाचार है, दूसरा वामाचार है तथा तीसरा कुलाचार है, हे प्रिये इन तीनोंकी विधिको सुनो!

प्रभाते स्नानसंध्यादि मध्याह्ने जपमीश्वरि ।
और्णमासन मात्मार्थं भक्ष्यं पायस शर्करा ॥
मालारुद्राक्षसंभूता पात्रं पाषाण संभवम् ।
भोगः स्वकीयकान्ताभि र्दक्षिणाचारइत्ययम् ॥

हे ईश्वरि! प्रातःकालमें स्नान सन्ध्या आदि सम्पादन करना, दोपहरके समय जप करना, अपने लिये ऊनी आसन और खानेके लिये खीर और शर्करा नियत रखना। माला

रुद्राक्षकी धारण करनी, पत्थरके पात्र अपने लिये रखने, और अपनी कान्तासे भोग ये सब दक्षिणाचार कहलाते हैं।

द्रव्येण मधुना देवि सिद्धि हानिकरोमतः ॥

हे देवि! मधुद्रव अर्थात् मदिरासे सिद्धि हानि होती है।

वामाचारं प्रवक्ष्यामि भुवनेश्याः सुसाधनम्।
यं विधाय कलौ शीघ्रं मान्त्रिकः सिद्धि भाग्भवेत् ॥

अब वामाचारको कहता हूं जो भुवनेश्वरी विद्यामें सिद्धि-लाभ करनेका सुगम साधन है।

मालानृदन्त सम्भूता पात्रं पाषाणमुण्डकम्।
आसनं सिंह चर्मादि कङ्कणं स्त्री कचोद्भवम् ॥
द्रव्य मासव तत्वाद्यं भक्ष्यं मांसादिकं शिवे।
चर्वणं वाल मत्स्यादि मुद्रा वीणा रवा कथा ॥
मैथुनं वरकान्ताभिः सर्ववर्णसमानता ।
वामाचार इति प्रोक्तः सर्वसिद्धि प्रदः शिवे ॥

मनुष्यके दांतोंकी माला, पत्थर या नरकपालके पात्र, सिंह आदि वन्य पशुचर्मका आसन, औरतके केशोंका कङ्कण, द्रव पदार्थमें मदिरा, मांसादि खाद्य, छोटी मछलियोंका चवण, मुद्रा बतानी, वीणा बजाना और बातें करनी, सुन्दर स्त्रियोंसे संभोग तथा सभी वर्णोंको समान मानना, यह वामाचार है, हे शिवे! यह वामाचार सम्पूर्ण सिद्धियोंको देनेवाला कहा गया है।

अन्यथा सिद्धि हानिः स्यात् मन्त्रस्यास्य महेश्वरि ॥

हे महेश्वरि! इस वामाचारको अस्वीकार करनेसे इस भुवनेश्वरी मन्त्रकी सिद्धिमें हानि होती है।

तस्माद्वामं भजेन्नित्यं वामएव परागतिः।
दक्षिणं च कुलं चैव वीरैः साधक सत्तमैः॥
त्याज्यं दूरात्कलौ देवि वाममेव भजेत्कलौ।

ततः निश्चित भावसे वामको भजन करे। क्योंकि वाम ही परमगति है। हे देवि! साधकोत्तम वीरोंके द्वारा दक्षिणाचार; दूर ही से कलियुगमें त्याग करने योग्य है और वामाचारकी उपासना ही उत्तम है।

कुलाचारं प्रवक्ष्यामि सेव्यं भोगिभिरुत्तमैः॥
कुलस्त्रियं कुलगुरुं कुलदेवीं महेश्वरि।
नित्यं यत्पूजयेद्विश्वं सकुलाचार उच्यते॥

हे देवि! अब कुलाचारको कहता हूं, जो उत्तम भोगियोंसे सेवन करने योग्य है। जिसमें नित्य, कुलस्त्री, कुलगुरु और कुलदेवी तथा विश्वका पूजन हो उसे कुलाचार कहते हैं।

कुलस्त्रियं शिवे ज्ञात्वा नत्वा नत्वा महेश्वरि।
हठादानीय सम्पूज्य तया भोगं विधाय च॥
रेतसा तर्पयेद्देवीं चक्रेशीं भुवनेश्वरीम्।
ईश्वरश्चैव विधिवत् जपं कुर्याद्विशेषतः॥

हे शिवे! कुलाङ्गनाको जानकर बारम्बार प्रणाम करके; हठपूर्वक उसे लाकर उसका पूजन करके उसके साथ भोग करके देवी भुवनेश्वरीको रेतसे तृप्त करे और ईश्वरका भी विधिवत् तर्पण करे और विशेषकर जप करे।

तत्पूर्वकं चरेद्धोमं कुलकान्तां विभूषयेत् ।
पानैः पेयै स्तथा भक्ष्यैः संतर्प्य कुलयोषितम् ॥
प्रत्यहं वै चरेदेवं कुलाचार इति स्मृतः।
इत्याचारपरो देवी कुलज्ञी गुरुपूजकः ॥
वामाचारपरो मन्त्री मुक्ति भाग्भविताध्रुवम्।

पूर्वोक्त नियमसे हवन करे और कुलकान्ताको पान-भोजन आदिसे तृप्त तथा अलङ्कार वस्त्रादिसे विभूषित करे, प्रतिदिन ऐसा ही आचरण करे, इसे ही कुलाचार कहते हैं। हे देवि! इस प्रकार आचार-परायण तथा कुलज्ञी, कुलगुरूका पूजन करनेवाला वामाचारका पालनकर्ता साधक अवश्य ही मुक्तिका अधिकारी होता है।

इत्येष पटलो गुह्यो देव्याश्चाचार वल्लभः।
अदातव्योन्य भक्तेभ्यो न प्रकाश्यो मुमुक्षुभिः ॥

आचारप्रिय यह पटल गुप्त तथा देवीका प्रिय है और जो देवीका भक्त न हो उसे न देना चाहिये, एवं मोक्षार्थियोंसे यह पटल प्रकाश करने योग्य भी नहीं है।

इति श्री भुवनेश्वरी रहस्ये आचारविधिः षोडशः पटलः ॥१६॥

अथ सप्तदशः पटलः

—:o:—

श्री भैरवउवाच। भैरवजी बोले—

शृणुष्व कथयाम्यद्य पूजां सामयिकीं पराम्।
यस्याः श्रवण मात्रेण कोटि पूजाफलं लभेत्॥
विना समय पूजाभि र्देवि दीक्षापि निष्फला।
तस्मात् समय पूजान्ते वक्ष्यामि पार लौकिकीम्॥
न सिध्यन्ति महादेवि नित्य पूजा जपादयः।
यज्ञ होमादयो देवि विना समय पूजया॥
अष्टोत्तर शत प्रख्याः समयाः सन्ति पार्वति!
तासु यः पूजयेद्देवि देवीं श्रीभुवनेश्वरीम्॥

हे महादेवि! आज सर्वोत्तमा सामयिकी पूजाको कहता हूं, तुम सुनो। जिसके सुननेसे ही करोड़ों पूजनका फल मिलता है।

हे देवि! सामयिकी पूजाके बिना दीक्षा भी निष्फल है। अतएव समय-पूजाके अन्तमें पारलौकिकी विधिको बताता हूं। नित्य पूजा, जप, यज्ञ, हवन आदि सामयिकी पूजाके बिना सिद्ध नहीं होते। समया १०८ सामयिकी पूजाधिकारिणी हैं, उन्हींमें जो देवी भुवनेश्वरीका पूजन करे।

स याति परमेशानि श्रीदेवीगणतां पराम्।
तेषामपि महादेवि समयास्सन्ति चोत्तमा॥

हे परमेशानि! भुवनेश्वरीका पूजक देवीका गण हो जाता है। सभी देवियोंमें भुवनेश्वरी सर्वोत्तमा हैं।

सूर्यग्रहणकालोवा चन्द्रग्रहणवासरः।
भूकम्प समयो देवि नवरात्र दिनानि च॥

सूर्य या चन्द्रग्रहणका समय हो, अथवा भूमिकम्पका समय हो या नवरात्रिका दिन हो।

कन्या संक्रान्ति समयो देवानामपि दुर्लभः।
एतेषु समयेष्वेव यः शिवां पूजयेच्छिवे॥
ससाक्षाद् भैरवो ज्ञेयो वरदानक्षमः शिवः।
अत्रादौ पूजनं वक्ष्ये सूर्यग्रहणपूर्वकम्॥
यस्मिन्काले भवेद्राहु सूर्ययोश्च समागमः।
तदैव साधकः स्नात्वा पूजां सामयिकीं चरेत्॥

कन्या राशिमें जब सूर्य हों अर्थात् कन्याकी संक्रान्तिमें पूर्वोक्त देव-दुर्लभ समय में जो देवीका पूजन करता है, वह वर-प्रदानमें समर्थ शिव और साक्षाद् भैरव हो जाता है, इसमें सर्व-प्रथम सूर्यग्रहण पूजन प्रकार कहता हूं। जिस समय राहु और सूर्यका समागम हो, उसी समय स्नान करके सामयिकी पूजाको करे।

स्नात्वा विलिख्य धरणीं भूमौ यन्त्रं लिखेच्छिवे।
सिन्दूरेण महादेवि सर्वाशापरि पूरकम्॥
त्रिकोणं बिन्दु संयुक्त मष्टकोणं महेश्वरि।

वृत्तमष्टदलं देवि भूगृहेणोप शोभितम् ॥
विभाव्य यन्त्रं देवेशि पूजां मन्त्री समारभेत् ।

स्नान करके भूमिको शुद्ध करके साधक इस प्रकार सिन्दूरसे भूमिमें यन्त्र लिखे। इस यन्त्रका नाम है सर्वाशापूरक, इसका क्रम यह है पहले भूगृह सुशोभितवृत्त, तब अष्टदल त्रिकोण तथा बिन्दुसंयुक्त अष्टकोण। हे देवेशि! इस प्रकार यन्त्र लिखकर पूजा आरम्भ करे।

आसनं देवि संशोध्य भूतशुद्धिं विधाय च ।
प्राणान् समर्प्य न्यासैश्च देहं व्याप्य महेश्वरि ॥

हे देवि! आसन शुद्ध करके भूतशुद्धि विधिकर प्राणोंको अर्पण करके न्यासोंसे सम्पूर्ण शरीरमें व्यापक कर।

श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौंः मन्त्रेण पूजां कुर्याद्विमान्त्रिकः ॥
सर्वाशापूरकायादौ श्रीचक्राय महेष्टिकृत् ।
दत्वा पुष्पाञ्जलिं देवि चतुरस्रे समर्चयेत् ॥
गणेशं धर्मराजं च वरुणञ्च कुबेरकम् ।
करालं विकरालं च संहारं रुरुभैरवम् ॥
महाकालं च कालाग्निं सुप्त मुन्मत्तभैरवम् ।
अष्ट पत्रेषु देवेशि पूजयेद् गन्ध पुष्पकैः ॥

ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं सौंः इस मन्त्रसे पूजन करे और सर्वाशापूरकादि श्रीचक्रके लिये पुष्पाञ्जलि देकर चतुष्कोणमें गणेश, धर्मराज, वरुण और कुबेरका पूजन करे तथा अष्टदलोंमें, कराल,

विकराल, संहार, रुरु, महाकाल, कालाग्नि, सुप्त और उन्मत्त भैरवका पूजन करे, इन्हींका पूजन चन्दन, अक्षत तथा पुष्पोंसे करना चाहिये।

वशिनी परमेशानि कामेश्वरि ततः परम्।
मोदिनी विमला चैवा प्यरुणा जयिनी तथा॥
सर्वेश्वरी कौलिनी च पूजनीयाष्टकोणके।
वामावर्तेन देवेशि गन्धाक्षत प्रसूनकैः॥
पीतपुष्पै र्महादेवि पयसा मधुनार्चयेत्।
गङ्गा च यमुना चैव सरस्वती च पार्वति।
त्रिकोणे शान क्रमतः पूजनीया च साधकैः॥

वशिनी, कामेश्वरी, मोदिनी, विमला, अरुणा, जयिनी, सर्वेश्वरी और कौलिनी इन आठोंका वामक्रमसे अष्टकोणमें गन्ध, अक्षत, पीलेफूल, दुग्ध और मधु द्वारा पूजन करे। हे पार्वति! तब ईशान क्रमसे तीनों कोणमें गङ्गा, यमुना और सरस्वतीका पूजन करे।

नील पुष्पै श्च दध्ना च घृत मत्स्याण्डपद्मकैः।
बिन्दौ श्रीपरमेशानि पूजयेद् भुवनेश्वरीम्॥

हे परमेश्वरि! बिन्दुमें नीलपुष्प, दही, घृत, मत्स्याण्ड और कमलोंसे भुवनेश्वरीका पूजन करे।

ईश्वरं नन्दिरुद्रं च भैरवं भैरवेश्वरम्।
ॐ ह्रीं श्रीं ऐं राहवे फट् स्वाहा मन्त्रेण साधकः॥

विन्दौ सम्पूजयेद्राहुं त्रिवारश्चस्वशक्तितः ।
तत्र प्रपूजयेद्देवि श्रीसूर्यंग्रहनायकम् ॥
सूर्यमन्त्रेण देवेशि गन्धाक्षत प्रसूनकैः ।
नैवेद्याचमनीयाद्यै स्ताम्बूलैश्च सुवासितैः ॥
तत्रोपरि महादेवि ताम्रस्य च तुलादश ।
दत्वा यन्त्रस्य पुरतो जपं कुर्यान्महेश्वरो ॥
आयुतार्धं तदर्धं वा सहस्रैकं च वा जपेत् ।

तब ईश्वर, नन्दि, रुद्र, भैरव और भैरवेश्वरका पूजन करके ॐ ह्रीं श्रीं ऐं राहवे फट् स्वाहा। इस मन्त्रसे साधक राहुका बिन्दुमें पूजन करे और अपनो शक्तिके अनुकूल तीन बार सूर्यके मन्त्रसे ग्रहनायक सूयका पूजन करे, (सूर्यका पूजन चन्दन, अक्षत, फूल, नैवेद्य, आचमन तथा सुगन्धयुक्त ताम्बूल आदिसे करे) हे महादेवि! उसके ऊपर दश तुला (दश तांबेका पैसा) देकर पाँच हजार, ढाई हजार या एक हजार मन्त्र जप करे (अपना इष्टमन्त्र ही जपना चाहिये)

जपाद्दशांशतो होमः कार्यः सर्पिस्तिलैर्यवैः ॥
उद्दग्रे कवचं नाम्नां सहस्रं स्तोत्रमेवच ।
पठेद्देवि ततो देव्यै सशिवायै समर्पयेत् ॥

हे देवि! यव, तिल, घृतसे जपकी जितनी संख्या हो उसके दशांश मन्त्रोंसे हवन करे। स्पष्टोच्चारणपूर्वक कवच, सहस्रनाम और स्तोत्र पाठ करके देवी श्रीभुवनेश्वरीको समर्पण कर देवे।

राह्वेकुलसूर्याय गुरवे साधकोत्तमः ।
जपं समर्प्य विधिन्नत्वा साष्टाङ्गमीश्वरि ॥

राहु, कुलगुरु, सूर्य इन्हें यथाविधि जप समर्पण करके साष्टाङ्ग नमस्कार करे—

ब्राह्मणान् भोजयेद्देवि दक्षिणाभिस्समर्चयेत् ।
य एवं पूजयेद्देवि देवीं श्रीभुवनेश्वरीम् ॥
ग्रहणे ग्रहनाथस्य सूर्यस्यामिततेजसः ।
कोटि वर्ष सहस्राणां पूजायाः फलमाप्नुयात् ॥
इत्येष पटलो देवि गोपनीयो मुमुक्षुभिः ।
सूर्यग्रहण पूजायाः साधकेष्टफलप्रदा ॥

हे देवि ! ब्राह्मणोंको भोजन करावे और दक्षिणासे पूजन करे, अतुलनीय तेजस्वी ग्रहादिनाथ सूर्यके ग्रहणकालमें जो मानव इस प्रकार देवी श्रीभुवनेश्वरीका पूजन करता है, वह दस करोड़ वर्षों तक पूजन करनेसे जो फल प्राप्त हो सके उस फलका अधिकारी होता है।

यह पटल जिसमें सूर्यग्रहण-कालीन पूजन-प्रणाली बतायी गयी है, यह साधकोंको अभिलषित फल देनेवाली है। इसलिये गोपनीय है।

इति श्री भुवनेश्वरी रहस्ये सूर्यग्रहण पूजाविधिः
सप्तदशः पटलः ॥१७॥

अथ अष्टादशः पटलः

—:o:—

श्री भैरवउवाच। भैरवजी बोले—

शृणुष्वावहितो भूत्वा कथयामि महेश्वरि।
रहस्यं भुवनेश्वर्याः पूजासारमनुत्तमम् ॥

हे महेश्वरि! भुवनेश्वरीका रहस्य तथा सर्वोत्तम पूजाविधि को कहता हूं, एकचित्त होकर सुनो।

चन्द्रोपराग समये स्नात्वा साधक सत्तमः।
विलिप्य धरणीं धीमान् लिखेद् यन्त्रं महेश्वरि ॥

हे महेश्वरि! चन्द्रग्रहणके स्पर्शकालमें स्नान करके साधक भूमिको गोमयसे पवित्र करके यन्त्रको लिखे।

त्रिकोणं बिन्दु संयुक्तं दशारं पञ्चकोणकम्।
वृत्त मष्टदलं देवि भूगृहेणोप शोभितम् ॥
सिन्दूरेण महादेवि लिखित्वाष्ट हरिद्रया।
कुर्यादासनशुद्धिं च भूतशुद्धिं ततः परम् ॥
प्राणान् समर्प्य देवेशि न्यासं कुर्याद्यथा विधि।
भैरव्यादि न्यासेन देहं व्याप्य महेश्वरि ॥
मातृकान्यास भेदेन श्रीकण्ठ न्यासकेन च।
ध्यात्वा सोमस्थितां देवीं व्योमकोटिसमप्रभाम् ॥

पात्र स्थापन्न कर्मादौ कृत्वा वाह्य महेश्वरीम्।
सशिवां मनसावाह्य राहुं चैव सशक्तिकम्॥

त्रिकोण, विन्दु, दशार, पञ्चकोण, वृत्त, अष्टदलधरा गृहसे सुशोभित, सिन्दूर, अष्टगन्ध और हलदीसे यन्त्र लिखकर, आसन शुद्धि तथा भूत शुद्धि करे। हे देवि! पञ्चप्राणोंको समर्पण करके, भैरव ऋष्यादि न्याससे सम्पूर्ण शरीरमें व्यापक करके विधिवत् न्यास करे. पुनः जितने प्रकारके पट पटलमें मातृकान्यास हैं सब करे, तब श्रीकण्ठन्यास करके करोड़ों चन्द्रके समान कान्तिमती चन्द्रस्थिता देवीका ध्यानपूर्वक प्रथम पात्र स्थापन कर्म कर देवीका आवाहन करके—मनसा शिव समेत भगवती भुवनेश्वरी का ध्यान करें और शक्ति समेत राहुका भी ध्यान करे।

आवाह्य सोमं देवेशि स्वागतं चेत्युदीरयेत्।
स्थाने संमुखे ध्याने कुर्यान्मुद्राः पृथक्-पृथक्॥
पाद्यार्घ्यादि निवेद्यादौ परश्चात्पूजां समारभेत्।
गणेशं नन्दिरुद्रं च पुष्पदन्तं किरीटिनम्॥
दक्षावर्तेन गन्धाद्यैः पूज्यास्ते चतुरस्रके।
मङ्गला पिङ्गला धान्या भ्रामरी भद्रिका तथा॥
उल्का सिद्धा संकटाच पूजनीयाष्टपत्रके।
वामावर्तेन देवेशि पीवपुष्पैं महेश्वरि॥
श्रीमहात्रिपुराचैव तथा त्रिपुर मालिनी।
त्रिपुराविजया देवि तथा त्रिपुरवासिनी॥

पञ्चकोणे सदा पूज्याः पञ्चदेव्यो महेश्वरि ।
वामावर्तेन गन्धार्घ्यं धूपदीप प्रसूनकैः ॥

हे देवि ! चन्द्रका आवाहन करके, स्वागतं अस्तु ऐसा कहे । स्थान, संमुख और ध्यानमें अलग-अलग मुद्रायें होनी चाहिये ।

पहले पाद्य, अर्घ्यं आदि देकर पीछे पूजन आरम्भ करे, गणेश, नन्दिरुद्र, पुष्पदन्त, किरीटि, इन्हींका पूजन गन्ध, अक्षत, प्रसून उपादानोंसे दक्षिणावर्त क्रमपूर्वक चारों कोणमें करे और मङ्गला, पिङ्गला, धान्या, भ्रामरी, भद्रिका, उल्का, सिद्धा, सङ्कटा इन्हींका अष्टदलोंमें पीले रंगके फूलसे वामावर्त क्रमानुकूल पूजन करे, तथा श्रीमहात्रिपुरा, त्रिपुरमालिनी, त्रिपुराविजया, त्रिपुरवासिनी इन्हींका पञ्चकोणमें वामावर्तसे गन्ध, अर्घ्य, धूप, दीप और पुष्पों से पूजन करे ।

इन्द्रं देवि धर्मराजं वरुणं च कुवेरकम् ।
ईश मग्निं पलाशं च वायुं विष्णुकुमारकम् ॥

तब इन्द्र, धर्मराज, वरुण, कुवेर, ईश, अग्नि, पलाश, वायु, विष्णु, कुमार,

दशारेषु सितैः पुष्पैर्दक्षावर्तेन पूजयेत् ।

इन्हीं का दशार में स्वच्छ पुष्प से दक्षावर्त क्रमपूर्वक पूजन करे ।

कामेश्वरीं वज्रेश्वरीं पूजयेत्भग मालिनीं ।
त्रिकोणे साधको देवि पीत पुष्पै विशेषतः ॥

सर्वानन्दमये चक्रे वैन्दवे पूजयेत्ततः ।
सेश्वरां भुवनेशानीं श्रीदेवीं भुवनेश्वरीम् ॥
ईश्वरं च महारुद्रं कालाग्नि भैरवेश्वरम् ।
वरं चैवाङ्कुशं चैव पाशं चाभयमेवच ॥
तत्रैव राहुं संपूज्य मूलेनैव सशक्तिकम् ।
चन्द्रं सशक्तिकं चैव कलाः षोड़श कास्तथा ।
भमालां पूजयेत्तत्र रात्रिं चैव समर्चयेत् ॥

तब साधक कामेश्वरी, बज्रेश्वरी और भगमालिनीका त्रिकोणमें पीले फूलसे विशेषकर पूजन करे, पुनः सर्वानन्दमय बिन्दुचक्रमें शिवके साथ देवी श्रीभुवनेश्वरीका और ईश्वर, महारुद्र, काल, अग्नि, भैरवेश्वर, वर, अङ्कुश, पाश, तथा अभय इन्हीं का पूजन करके वहींपर सशक्तिक राहुका मूलमन्त्रसे पूजन करे, अनन्तर शक्ति सहित चन्द्रमा और उनके सोलहों कला तथा नक्षत्रमाला सहित रात्रिका भी पूजन करे।

देव्यै निवेदितान्गन्धाक्षतपुष्पसमन्वितान् ।
धूप दीपादि नैवेद्य ताम्बूलादीन्समर्पयेत् ॥
न्यासं कृत्वा जपेन्मूलं अयुतार्धं सुरेश्वरि ।
तदर्धं वा सहस्रैकं जप्त्वा होमं दशांशतः ॥

तब देवीको निवेदन किये हुए गन्ध, अक्षत, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल आदि समर्पण करे पुनः न्यास करके पाँच हजार, अथवा ढाई हजार या एक हजार मूलमन्त्र जपकर दशांश हवन करे।

वर्मनाम सहस्रादि स्तोत्र पाठं चरेत् पुनः।
दद्याद्यन्त्राय देवेशि रौप्य स्वर्ण तुलां शिवे॥
गुरवे देवदेवीभ्यां जपं मन्त्री समर्पयेत्।
संहार मुद्रया देवि देवदेव्यौ विसर्जयेत्॥

तब कवच सहस्र स्तोत्र आदि पाठ करे पुनः यन्त्रके दक्षिणा द्रव्यमें चाँदी सोनेकी मुद्रा अर्पण करे। गुरू, देवता तथा देवीको जप समर्पण करे, और संहार मुद्रासे देवता तथा देवीका विसर्जन करे।

अनया पूजया देवि श्रीदेवीं भुवनेश्वरीम्।
साधकः पूजयेद्यस्तु ससाक्षाद्भैरवो भवेत्॥

हे देवि! इस प्रकार जो साधक देवी भुवनेश्वरीका पूजन करता है, वह साक्षात् भैरव हो जाता है।

नित्यं पूजां विधायात्र कोटिसंख्यं महेश्वरि।
यत्फलं तत्फलं सद्यः स लभेत्पूजयानया॥
पुरश्चर्यां सहस्रस्य चाश्वमेधायुतस्य च।
फलं भवति देवेशि चन्द्रग्रहण पूजया॥

हे महेश्वरि! इस संसारमें नित्य नियमसे करोड़ पूजन करनेका जो फल होता है, वह फल इस पूजनसे तत्काल साधक लाभ करता है और हजार पुरश्चरणमें तथा दस हजार अश्वमेध-यज्ञ करनेमें जो फल लाभ होता है, वह केवल इस ग्रहण-कालीन पूजनसे प्राप्त करता है।

चन्द्रग्रहण पूजायाः पटलो देवि दुर्लभः ।
गोपनीयो विशेषेण नान्यथा सिद्धि हानिदः ॥

हे देवि ! यह चन्द्रग्रहण पूजा पटल है, अतएव यह यत्नपूर्वक गोपनीय है, गुप्त न रखनेसे सिद्धिकी हानि होती है ।

इति श्री भुवनेश्वरी रहस्ये चन्द्रग्रहण पूजाविधिः
अष्टादशः पटलः ॥१८॥

अथ एकोनविंशः पटलः

—:o:—

श्री भैरवउवाच । भैरवजी बोले—

कथयामि तव प्रीत्या रहस्यं देवि दुर्लभम् ।
तत्वं श्रीभुवनेश्वर्याः भूकम्पार्चन मुत्तमम् ॥
यत्क्षणं कम्पते भूमिः देवासुर भयङ्करी ।
स एव दुर्लभः कालः पूजायाश्चापि पार्वति ॥

हे पार्वति ! तुम्हारी प्रीतिसे दुर्लभ रहस्य जो भुवनेश्वरीकी आराधनाका सार-भूत भूकम्प पूजन-पटल है, उसे कहता हूं । देव तथा दानवोंको भयभीत करनेवाली भूमि कम्पित होती है, वही पूजनका भी दुष्प्राप्यकाल है ।

उत्थाय साधकःस्नात्वा कृत्वाविष्टर शोधनम्।
विभाव्य तत्र श्रीचक्रं यथावद्वर्ण्यते मया ॥
विन्दुत्रिकोण संयुक्तं रसकोणं सवृत्तकम्।
अष्टपत्रं ततो वृत्तं लिखे भूमन्दिरं प्रिये ॥

साधक उठकर स्नान करके आसन शुद्धकर श्रीचक्रकी भावना करे, जैसा मैं वर्णन करता हूं। विन्दु, त्रिकोण, षट्कोण, वृत्त, अष्टदल पुनः वृत्त तब भूमन्दिर।

एतद् भूकम्प पूजायाः चक्रं देवि सुदुर्लभम्।
इत्थं विलिख्य श्रीचक्रं भूत शुद्ध्यादिकं चरेत् ॥

हे देवि! यह भूकम्प पूजन चक्र नितान्त दुर्लभ है। पूर्वोक्त प्रकारसे यन्त्र लेखन कर भूतशुद्धि आदि करे।

मातृका न्यास भागेन देहे देवमयं चरेत्।
ध्यात्वा देवीं भूमिरूपां शेषरूपं महेश्वरम् ॥

मातृका न्यासके अन्तर्बहिरादि जितने भेद षष्ट पटलमें वर्णित हैं, उन्हींसे अपने देहको देवमय समझे तब देवी भुवनेश्वरीको भूमिरूपिणी और शिवको शेषरूप ध्यान करके—

मनसा वाह्य मूलेन सशिवां भुवनेश्वरीम्।
भूमिं सशेषामावाह्य तन्त्र पूजां समारभेत् ॥
संकल्पं साधकः कुर्यात्प्राणायामत्रयं शिवे।
पात्राणि स्थापयेत्तत्र देवीं सन्तर्प्य नित्यवत् ॥

योगपीठार्चनं कृत्वा पूजयेच्चतुरस्रकम् ।
गणेशं धर्मराजं च कुवेर वरुणौ ततः ॥
दक्षावर्तेन सम्पूज्य चतुर्द्वारेषु साधकः ।
करालाय फडित्येवं तत्राशावन्धनं चरेत् ॥
आचम्य कुर्या द्द्वेशि षडङ्गं मन्त्र बीजकैः ।
अणिमाद्यष्ट सिद्धीश्च पूजयेदष्टपत्रके ॥

मूल मन्त्रसे शिव सहित भुवनेश्वरीका मानसिक आवाहन करके शेषके साथ पृथ्वीका आवाहन करे और तब तान्त्रि पूजन आरम्भ करे। साधक संकल्प करके तीन प्राणायाम करे, उसी स्थानपर पात्रोंको रखकर देवीको नित्यकी तरह तृप्त करके, योग-पीठका पूजन करे, पुनः चारो द्वारमें गणेश, धर्मराज, कुवेर और वरुणका दक्षिणक्रमसे पूजन कर, करालाय फट् इस मन्त्रसे दिग्बन्धन करे। आचमन करके बीज मन्त्रसे षड्ङ्ग न्यास करे और अष्टपत्रोंमें अणिमा आदि अष्टसिद्धियोंका पूजन करे।

वामावर्तेन गन्धार्घ्य सितपुष्पै र्यथाविधि।
गङ्गायै नमः इत्येवं तत्वबीजै स्त्रिराचमेत ॥
सर्वरक्षाकरे चक्रे गुरून् सन्तर्प्य साधकः।
श्रीदेवीं सशिवांध्यात्वा भूमिदेवान् समर्चयेत् ॥

अणिमा आदि अष्टसिद्धियोंका पूजन श्वेतपुष्प गन्ध अर्घ्यादि से वामावर्तक्रम द्वारा पूजनकर, ॐ गङ्गायै नमः आत्मतत्वं शोधयामि, ॐ गङ्गायै नमः विद्यातत्वं शोधयामि, ॐ गङ्गायै

नमः शिवतत्वं शोधयामि, इस प्रकार तीन आचमन करे, पुनः सर्वरक्षा कर चक्रमें गुरुत्रयको तृप्त करे, तब शिव सहित भुवनेश्वरीको चिन्तन करके भूमि देवताओंका पूजन करे, यथा—

शेषं कूर्मं मत्स्यराजं समुद्रं च हिमाचलम् ।
दिग्गजान्परमेशानि पूजयेद्वै षड्स्रके ॥
गङ्गाञ्च यमुनाञ्चैव तृतीयां च सरस्वतीम् ।
त्रिकोणे पूजयेद् वि देवीं श्रीभुवनेश्वरीम् ॥
ईश्वरं पूजये त्तत्र महाप्रेतासनं ततः ।
वरां कुशौ च पाशं वा भीतिं चैव प्रपूजयेत् ॥
भूमिं सम्पूजयेत्तत्र पूजयेत्कुलपर्वतान् ।
गन्धाक्षत प्रसूनाद्यैः धूपदीपादितर्पणैः ॥
नैवेद्याचमनीयाद्यै स्ताम्बूलै श्च सुवासितैः ।
तद्बिन्दौ स्वर्ण रतिका दश दद्यात्स्वसिद्धये ॥
गोदानं साधकः कुर्याद्भूमिदानं तथैवच ।

शेष, कूर्म, मत्स्यराज, समुद्र, हिमाचल तथा दिग्गजोंका षड्स्रमें पूजन करे। तवः त्रिकोणमें गङ्गा, यमुना और सरस्वतीका पूजन करके श्रीभुवनेश्वरी देवीका पूजन करे, पुनः उसी स्थानमें शिवका तथा प्रेतासनका पूजन करे, तब वर, अङ्कुश, पाश, अभय भुवनेश्वरीके इन चारो अस्त्रोंका पूजन करे, वहीं पर पृथ्वी तथा सप्तकुल पर्वतोंका पूजन करे (सप्तकुल पर्वत ये हैं—हिमाचल, निषध, विन्ध्य, माल्यवान्, पारियात्रक, गन्धमादन, हेमकूट) पूर्वोक्त सम्पूर्ण पूजन चन्दन, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, तर्पण, नैवेद्य,

आदि और कर्पूर इलायची आदिसे सुवासित पान द्वारा करना चाहिये। पूर्ववर्णित सर्वरक्षाकर यन्त्रके बिन्दुमें अपनी सिद्धिके लिये दश रति सुवर्ण अर्पण करे, तब साधक गोदान तथा भूमि-दान करे।

यन्त्राग्रे च जपेन्मूल मेक साहस्त्रिका वधि ॥

यन्त्रके आगे भुवनेश्वरीका एक हजार मूलमन्त्र जप करे।

जपाद्दशांशतो होमः कार्यः सर्पितिलेन्द्रुदैः ।

अर्जुनकी लकड़ी, तिल और घृतसे जपकर दशांश हवन करे।

वर्मनाम सहस्राणि स्तव पाठं चरेत्ततः ॥
देव देव्यौ गुरू' देवि समर्प्य जपमादरात् ।
प्रणम्य योनि मुद्राभि र्नत्वा दण्डवदीश्वरि ॥
विसर्जयेद्देवदेव्यौ मन्त्री संहार मुद्रया ।
अश्वमेधसहस्रस्य गोमेधायुतकस्य च ॥
सुवर्णाचलदानस्य यत्फलं साधकेश्वरि ।
तत्फलं त्वरितं मन्त्री भूकम्पार्चन तो लभेत् ॥

तब कवच, सहस्रनाम स्तोत्र आदिका पाठ करे और शिव, भुवनेश्वरी, गुरुदेवको आदरपूर्वक जप समर्पण करे। हे ईश्वरि! साधक योनिमुद्रासे दण्डवत्प्रणाम करके संहारमुद्रासे शिव और भुवनेश्वरी आदि देवदेवियोंको विसर्जित करे। हजार अश्वमेध, दस हजार गोमेध तथा सुवर्णका पर्वत दान करनेसे जो फल प्राप्त

हो सकता है। हे साधकेश्वरि ! वह फल साधक शीघ्र ही भूमि-कम्प पूजनसे प्राप्त करता है।

इत्येष पटलो देवि भूकम्पार्चा प्रकाशकः;
गोपनीयो गोपनीयः सदा सेव्यः मुमुक्षुभिः।
भूकम्पस्य च पूजायाः साधकेष्टफलप्रदा ॥

हे देवि ! यह भूकम्प पूजनका प्रकाशक पटल मुमुक्षुओंसे सदा सेवनीय और नितान्त गोपनीय है तथा यह भूमिकम्प पूजन पटल साधकोंका अभिलषित फलदाता है।

इति श्री भुवनेश्वरी रहस्ये भूकम्प पूजाविधि
एकोनविंशः पटलः ॥१६॥

अथ विंशः पटलः

—:o:—

श्रीभैरवउवाच। भैरवजी बोले—

अथ वक्ष्यामि देवेशि संक्रान्त्यार्चां यथाविधि।
तत्वं श्रीभुवनेश्वर्याः सारात्सारतरां पराम् ॥

हे देवेशि ! अब भुवनेश्वरीका तत्व, परमसारमय संक्रान्ति पूजनको विधिवत् कहता हूं।

मन्दाकिनी ध्वांक्षी अघोरा च महेश्वरि।
मिश्रका पूजनीया च वहिः पट्कोणके शिवे ॥

हे शिवे ! बाहरके पट्कोणमें मन्दाकिनी, ध्वांक्षी, अघोरा, महेश्वरी और मिश्रका इन्हींका पूजन करे।

गन्धार्घ्यं पुष्प धूपाद्यैं र्वामावर्तेन पार्वति !
राक्षसी डाकिनी चैव शाकिनी गुप्तयोगिनी ॥
हाकिनी लाकिनी पूज्या मध्यपट्कोणके ततः।
गङ्गाञ्च यमुनाञ्चैव तृतीयाञ्च सरस्वतीम् ॥
त्रिकोणे पूजयेद्देवि साधको मन्त्र साधकः।

तब मध्यके पट्कोणमें वामावर्तक्रमसे चन्दन, अर्घ्य, पुष्प, धूप, दीप आदि उपचारोंसे राक्षसी, डाकिनी, शाकिनी, गुप्त-योगिनी, हाकिनी, लाकिनी इन्हींका पूजन करे, पुनः मन्त्रको सिद्ध करनेवाला साधक त्रिकोणमें गङ्गा, यमुना और सरस्वतीका पूजन करे।

सर्वानन्दमये चक्रे वैन्दवे परमेश्वरि।
श्रीदेवीं पूजयेद्देवि साधको भुवनेश्वरीम् ॥
गन्धाक्षत प्रसूनाद्यै र्नैवेद्याचमनीयकैः।
वस्त्रै श्च परमानन्दे स्ताम्बूल छत्र चामरैः ॥
सम्पूज्य यन्त्रराजस्य बिन्दौ दद्यान्महेश्वरि।
स्वर्ण रौप्यादि पुष्पाणि कांस्यपात्रं तथैवच ॥

निवेद्य मूल मन्त्रेण सुरेति कलशं तथा ।
बिन्दौ देवीं स्मरेन्मन्त्री सशिवां हसिताननाम् ॥

बिन्दुप्रधान सर्वानन्दमय चक्रमें चन्दन, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, आचमन, वस्त्र, ताम्बूल, छत्र, चामर आदिसे तथा परमानन्दसे देवी श्रीभुवनेश्वरीका पूजन करे, इस प्रकार पूजन करके साधक यन्त्रराजके बिन्दुमें सुवर्ण-रजत तथा पुष्प, कांस्य-पात्रको मूलमन्त्रसे अर्पण करे। पुनः साधक बिन्दुमें शिवके साथ हास्यमुखी भुवनेश्वरीको चिन्तन करे।

पूर्ववद्देवि संकल्प्य जपं कुर्याद्यथाविधि ।
जपाद्दशांशतो होमः कार्यः सर्पि यवाङ्कुरैः ॥

हे देवि! पूर्ववत् संकल्प करके यथाविधि जप करे और जपका दशांश हवन घृत और यवके अङ्कुरसे करना चाहिये।

वर्मनाम सहस्राणि स्तव पाठं प्रकल्पयेत् ।
समर्प्य देव्यै तत्सर्वं विप्रान्संभोजयेत्ततः ॥

विशेषतः साधकांश्च साधको मन्त्र साधकः ।
तथैव दक्षिणां दत्वा प्रणमेद्योनि मुद्रया ॥

तब मन्त्रको सिद्ध करनेकी कामनावान साधक, कवच सहस्रनाम, स्तव आदि पाठ करे और देवीको पाठ समर्पण करके ब्राह्मणोंको भोजन करावे, विशेषकर साधकोंको भोजन करावे, पूर्वोक्तक्रमसे दक्षिणा देकर योनिमुद्रासे प्रणाम करे।

इत्येवं पूजयेद्देवीं कन्यां संक्रान्तिवासरे ।
गोदान कोटि सदृशं फलं भवति पार्वति ॥

इस प्रकार कन्या संक्रान्तिमें भुवनेश्वरीका जो पूजन करता है, हे पार्वति ! उसे कोटि गोदानका फल प्राप्त होता है ।

सप्तजन्मानि यो देवीं पूजयेन्नित्य कर्मणा ।
यत्फलं तस्य तत्सद्यो भवेत्संक्रान्ति पूजया ॥
इत्येष पटलो देवि गुह्याद्गुह्य तरोमतः ।
अभक्तेभ्यो न दातव्यो गोपनीयश्च साधकैः ॥

सात जन्म तक जो नित्य-नियमसे देवीका पूजन करनेसे फल प्राप्त होता है, वह फल संक्रान्ति पूजनसे सद्यः प्राप्त होता है। हे देवि! यह पटल अत्यन्त गोपनीय है और अभक्तोंके लिये अदेय है ।

इति श्री भुवनेश्वरी रहस्ये कन्या संक्रान्ति पूजाविधिः
विंशः पटलः ॥२०॥

अथ एकविंशः पटलः

—:०:—

श्री भैरवउवाच । भैरवजी बोले—

अथ वक्ष्यामि देवेशि शक्तिपूजां यथाविधि ।
तत्वं श्रीभुवनेश्वर्याः सारात् सारतरं परम् ॥

हे देवेशि ! अब शक्ति-पूजाको विधिको कहता हूं और इसमें भुवनेश्वरीका बीज है तथा परमसार है ।

दिने शुभे महादेवि स्नात्वागत्वार्चनस्थलीम् ।
समाप्य नित्य कर्मादौ निशादौ शक्तिमर्चयेत् ॥

हे महादेवि ! शुभ दिनमें स्नान करके और नित्यकम सन्ध्या-वन्दन आदि समाप्तकर पूजनको जाकर रात्रिके आरम्भकालमें शक्तिका पूजन करे ।

श्रीशक्तिपूजासारस्य ऋषिः प्रोक्तः सदाशिवः ।
पङ्क्तिश्छन्दं समाख्यातं देवता भुवनेश्वरि ॥
ऐं बीजं सौं तथा शक्तिः क्लीं कीलकमुदाहृतम् ।
धर्मार्थकाममोक्षार्थे विनियोग इति स्मृतः ॥

पूर्वोक्त श्लोकद्वयमें शक्ति पूजाका विनियोग है । वह इस प्रकार है—श्रीशक्तिपूजासारस्य सदाशिवऋषिः पङ्क्तिश्छन्दः श्रीभुवनेश्वरी देवता ऐं बीजं, सौंः शक्तिः, क्लीं कीलकम्, धर्मार्थ-

काममोक्षार्थे विनियोगः। हाथमें जल लेकर इस विनियोगका पाठ करके जलको छोड़ देना चाहिये।

आसनं तत्र संशोध्य भूमिं संशोध्य साधकः।
भूतशुद्धिं विधायाथ प्राणार्पण विधिंततः॥
सदाशिवर्षिन्यासेन मातृकान्यासकेन च।
षोढान्यानक्रमेणैवं देहं व्याप्य महेश्वरि॥

तत्र साधक आसनको शुद्धकर भूमि शुद्ध करे, पुनः भूतशुद्धि और प्राणार्पण विधिको करके, सदाशिवर्षिन्यास तथा मातृकान्यास क्रमसे छः प्रकारके न्याससे देहमें व्यापक करे।

(इन सब न्यासोंकी विधि षष्ठ पटलमें वर्णित है)

भूमौ यन्त्रं लिखित्वाशु सिन्दूरेणात्रवर्ण्यते।
बिन्दु त्रिकोणं षट्कोणं वृत्तं नागदलाङ्कितम्॥
देवेशि भूगृहं शक्ति पूजा-यन्त्र मुदाहृतम्।
यन्त्रं विलिख्याति दीर्घं विस्तृतं परमेश्वरि॥

पृथ्वीपर सिन्दूरसे इस प्रकार यन्त्र लिखे, यथा—बिन्दु, त्रिकोण, षट्कोणवृत्त, अष्टदल भूगृह इस तरह खूब लम्बा चौड़ा यन्त्र लिखकर—

स्वशक्तिं परशक्तिं वा नग्नां मुक्तकचां शिवे।
मालाभरण शोभाढ्यां स्वर्ण कङ्कण राजिताम्॥
स्नाता मानीय देवेशि स्वयं नग्नोत्र साधकः।
करालं विकरालं च संहारं कुरु संस्मरन्॥

कालाग्निं च महाकालं सुप्तं सुन्मत्त भैरवम् ।
अष्टपत्रेषु संपूज्य गन्धाक्षत प्रसूनकैः ॥

अपनी शक्ति हो या परशक्ति हो, स्नान की हुई, नग्ना जिसके केश खुले हुए हों, माला आदि अलङ्कारोंसे विभूषिता, जिसके हाथमें सुवर्णके कङ्कण सुशोभित हो रहे हों, ऐसी शक्तिको लाकर साधक भी इसमें स्वयं नग्न हो। इसके अनन्तर यन्त्रके अष्टपत्रोंमें कराल, विकराल, संहार, रुरु, कालाग्नि, महाकाल, सुप्त और उन्मत्त इन आठ भैरवोंका गन्ध, अक्षत तथा पुष्पोंसे पूजन करे।

त्रिपुरां भैरवीं तारां बालां च सुमुखीं प्रिये ।
भगमालां च षट्कोणे पूजयेद्गन्धपुष्पकैः ॥

हे प्रिये! अष्टदलका पूजन करके षट्कोणमें त्रिपुरा, भैरवी, तारा, बाला, सुमुखी और भगमालाका गन्धादिसे पूजन करे।

षट्कोणञ्चैव सम्पूज्य त्रिकोणं पूजयेत्ततः ।
गङ्गां च यमुनां देवि तृतीयाञ्च सरस्वतीम् ॥
गन्धाक्षत प्रसूनाद्यै र्धूपदीपादि तर्पणैः ।
बिन्दौ सम्पूजयेद् देवि देवीं श्रीभुवनेश्वरीम् ॥
ईश्वरञ्चैव कालाग्निं कामराजं महेश्वरि ।
गन्धाक्षतैश्च सम्पूज्य तत्र घण्टारवं चरेत् ॥

हे महेश्वरि! षट्कोणका पूजन करके तब त्रिकोणका पूजन करे, त्रिकोणमें गङ्गा, यमुना, सरस्वतीका गन्धादिसे पूजनकर, बिन्दुमें देवी श्रीभुवनेश्वरी, शिव, कालाग्नि, कामराजका जल,

चन्दन, अक्षत, सुगन्ध, धूप-दीप, नैवेद्यादिसे पूजन करके वहाँ घण्टाको बजाकर शब्द करें।

भूतानुत्सार्यमन्त्रेण निबध्याशास्त्रमूलतः ।
शक्तिं देवीमयीं ध्यात्वा स्वयं शिव मयं स्मरेत् ॥

भूतोत्सारणके प्रकरणीय सम्पूर्ण मन्त्र पञ्चम से षष्ठ पटल तक आ गये हैं, उन्हीं मन्त्रोंसे भूतोत्सारण करके तब मूलमन्त्र (मूलमन्त्रकी अनेकों बार पुनरुक्ति हो चुकी है) से दशदिग्-बन्धन करके "दिग्बन्धनक्रममें सतत छोटिका चुटकी बजानेका प्रयोग करना चाहिये" शक्ति (जिसका प्रसङ्गोपात्त इसी पटलमें परिचय प्राप्त है) को देवीमयी अर्थात् देवी शक्तियोंकी जिसमें प्रधानता हो और विशेषता हो ऐसी समझकर ध्यान करें। इस ध्यात्वामें बहुत ही अन्तर्गर्भ अर्थ है, इस ध्यात्वासे चिन्तनका बोध होता है और वह चिन्तन चैतन्य रहनेसे ही विद्यमान रहता है, अब यह स्पष्ट समझना चाहिये कि यह शक्ति जिसका साधक आगे चलकर पूजन करेगा शारीरिक सप्तधातु तथा पञ्च महाभूतादिसे बनी हुई हैं ऐसा यदि जाने तो ध्यात्वाका वास्तविक अर्थ ही सिद्ध नहीं होता है। कारण अष्टाङ्गयोगमें ध्यान सप्तम-योग है और ध्यानसे समाधि प्राप्त होती है। अतएव अपनेको समाधिस्थ होनेकी कामना करते हुए शक्तिको सर्वचैतन्यरूपा मानकर और अपनेको शिवमय चिन्तन करते हुए—

यन्त्रे शक्तिं निवेश्यादौ तद्दक्षिणकराचले ;

उपविश्य स्वयञ्चैव पूजां कुर्याद्यथाविधि।
मूलमन्त्रेण देवेशीं गन्धाक्षत प्रसूनकैः॥

पहले शक्तिको यन्त्रपर बैठाकर, उस शक्तिके दाहिने हाथके निम्नभागमें बैठकर देवी श्रीभुवनेश्वरीके मूलमन्त्रसे विधिवत् पूजन करे, यथा—

अब पूजन किन किन अङ्गोंमें किस प्रकार और किस शक्तिका करना चाहिये इसका प्रकरण आरम्भ होता है।

हृल्लेखा मस्तके पूज्या कराली कुन्तले तथा।
ललाटे विकराली च भ्रुवोश्चोमा प्रकीर्तिता॥
नेत्रयोः कर्णयोश्चैव श्रीः पूज्या परमेश्वरि।
देवि दुर्गा नासिकायां पूषा च गण्डयोस्तथा॥
मुखे लक्ष्मीः कण्ठदेशे श्रुतिश्च स्कन्धयोःस्मृतिः।
धृतिश्च हस्तयोर्देवि श्रद्धावक्षसि संस्मृता॥
कुचयोः संस्मृता मेधा मतिः कुक्षौ महेश्वरि!
कान्तिश्च पार्श्वयो देवि पूज्यार्या पृष्ठदेशके॥
नाभावनङ्गरूपा च योनौ भुवन पालिका।
अनङ्गमदना देवि सम्पूज्या गुह्य देशके॥
उर्वोर्भुवनवेगा च जान्वोश्चानङ्ग वेदना।
जंघयोः सर्वशिशिरा सम्पूज्याः पादयोस्तथा॥

गन्ध, अक्षत, पुष्प आदिसे मस्तकमें हृल्लेखा, केशोंमें कराली ललाटमें विकराली, भ्रू युगलमें उमा, नेत्रों तथा कानोंमें श्री,

नासिकामें दुर्गा, गालोंमें पूषा, मुखमें लक्ष्मी, कण्ठमें श्रुति, कन्धोंमें स्मृति, हाथोंमें धृति, वक्षमें श्रद्धा, कुचोंमें मेधा, उदरमें मति, दोनों बगलमें कान्ति, पीठमें आर्या, नाभिमें अनङ्गरूपा, योनिमें भुवनपालिका, गुह्यदेशमें अनङ्गमदना, दोनों उरूमें भुवन-वेगा, जानुद्वयमें अनङ्ग वेदना, जङ्घोंमें सर्वशिशिरा आदि।

अनङ्गमेखला देवि साधकैः मन्त्रसिद्धये।
पादादिमूर्धं पर्यन्ते गात्रे श्रीभुवनेश्वरी ॥
पूजनीया महादेवि गन्धाक्षत प्रसूनकैः।
विविधैः कुसुमै देवि भक्ष्यै भोग्यै विशेषतः॥
द्रव्येण विविधाहारैः शक्ति सन्तर्प्य पार्वति।

चरणयुगलमें अनङ्गमेखला और चरणसे मस्तक पर्यन्त सम्पूर्ण गात्रमें भुवनेश्वरी इस प्रकार साधक अपनी मन्त्रसिद्धिके लिये प्रसङ्ग वर्णित शक्तिके सर्वाङ्गोंमें उक्त देवियोंका गन्ध, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, सामयिक विविध पुष्प, भक्ष्य, भोग सामग्री और द्रव्य तथा विविध उपहारोंसे पूजन करके प्रसन्न कर देवे।

भगं सम्पूज्य लिंगेन लिंगं सम्पूजयेत्तथा ॥

भगको लिंगसे और लिंगको भगसे पूजन करे।

आत्मानं शिव रूपं तां शक्ति देवी स्वरूपिणीम्।
विभावयेन्महेशानि साधकः सर्वसिद्धयो ॥

साधक सम्पूर्ण सिद्धियोंको लाभ करनेके लिये अपनेको शिवरूप और उस पूजन की गयी शक्तिको देवी स्वरूपिणी समझे,

अर्थात् अपनेको तो शिवोऽहं ऐसा समझें तथा जिस शक्तिके सर्वाङ्गोंमें शक्तियोंका पूजन किया गया है, उसे देवीस्वरूपिणी समझे।

रेतसा वै जपेन्मूलं यथा शक्त्या महेश्वरि।
रेतसा तर्पयेद्धीमान् देवीं श्रीभुवनेश्वरीम्॥
सम्पूज्य विविधैः पुष्पैः प्रणमेद्योनिमुद्रया।
विसर्जयेच्चतां शक्ति नत्वा संहारमुद्रया॥

हे महेश्वरि! अपनी शक्तिके अनुकूल रेतससे मूलमन्त्रको जपे तथा बुद्धिमान रेतससे देवी भुवनेश्वरीको तृप्त करे, पुनः अनेक प्रकारके पुष्पोंसे पूजन करके योनिमुद्रासे प्रणाम करे और संहारमुद्रासे भी प्रणाम कर उस शक्तिका विसर्जन करे।

इत्येष पटलो देवि शक्तिपूजाप्रकाशकः।
अदातव्योऽन्यभक्ताय गोपनीयः स्वयोनिवत्॥

हे देवि! शक्ति पूजा प्रकाशक यह पटल अभक्तोंके लिये अदेय और अपनी योनिकी तरह गोपनीय भी है।

इति श्री भुवनेश्वरी रहस्ये शक्तिपूजाविधिः
एकविंशः पटलः ॥२१॥

इस पटलका उपरोक्त अर्थ विधिनिषेधके पक्षपाती सामयिक मतावलम्बियोंके शब्दार्थानुसंधानके अनुकूल भले ही हो सकता है। परन्तु वास्तविक इस प्रकार है, यथा—

हे महादेवि ! शिष्यको शिक्षाके लिये सम्बोधनपद दिया गया है।

कल्याणदायी समयमें अर्थात् दिनकी नाड़ी पिङ्गला है और रात्रिकी इडा, प्रकरणमें "निशार्धे" लिखा है। अतएव इडा नाड़ीके प्रवाहमें पड़् दलात्मक सम्पूर्ण शरीरको शुद्धकर, तब अर्चनस्थली पूजन करनेकी भूमि, जिस आम्नायके अनुसार जो मन्त्र जिस स्थानपर जपना है वहांपर नियक्रम रेचक पूरक द्वारा प्राणायाम करके सुषुम्नाके उदयमें मूलशक्ति हृल्लेखाका पूजन करे।

इस शक्ति-पूजा-सारको बतानेवाले सदाशिव ऋषि हैं। इसमें पङ्क्ति छन्द है। भुवनेश्वरी हृल्लेखा देवता हैं। वाग्भव-बीज है, शक्ति-बीजसे इसमें शक्ति आती है। काम-बीज इसका कीलक है। अर्थात् स्वाधिष्ठानमें जहांपर कन्दर्प नामक वायु है, वहांपर इसका कीलक (स्तम्भन) है। यह क्रिया चतुर्वर्गको देनेवाली है, यही इसका विनियोग है। इस प्रकार मानसिक विनियोग करे। तब मन्त्रको सिद्ध करनेवाला साधक स्वाधिष्ठानरूपी आसनको शुद्ध करके शुभेच्छा, तनुमानसा, तत्त्वापत्ति आदि जो सात भूमिका हैं, इन्हें शुद्धकर, भूतशुद्धि पञ्चभूतात्मक देहको पूर्वोक्त विधानसे शुद्ध करे। तब प्राणायाम करे और अपने देहको शिवरूपी बनानेके लिये शिवन्यास तथा सारे देहमें शक्तिका सञ्चार (विकाश) के लिये मातृकान्यास, अनन्तर इस देहको विश्वरूप समझकर षोढान्यास करे, पुनः बिन्दु, त्रिकोण, षट्कोण, वृत्तनागदल, यह सब

जैसे श्रीयन्त्रमें बताया गया है, वैसी भावना सम्पूर्ण शरीरमें करे।

तब अपनी बीजाक्षरकी शक्ति या पराशक्ति जो अर्धमात्रात्मिका हैं, इसमें मल-विक्षेपके आवरणको दूरकर, आरोह, अवरोह क्रमकी मालासे स्वर्ण-कङ्कण अर्थात् मन्त्रोंके प्रकाशसे सुशोभितकर उसे पवित्रकरके साधक ध्यान द्वारा स्वयं नग्न (प्रकृतिके आवरणको हटाकर) कराल, विकराल आदि को अष्टदलमें आठ शक्तियोंका जो विकाश होता है, उन्हींपर ध्यान लगाकर मानसोपचारसे पूजनकर, उन्हीं कोणोंमें त्रिपुरा, भैरवी, तारा, बाला, सुमुखी, भगमाला, इनका भी षट्कोणमें पूजन करके बीचके त्रिकोणमें गङ्गा, यमुना, सरस्वतीका पूजन करे। पुनः मूलविन्दुमें भगवती भुवनेश्वरीका पूजन करे। वहींपर ईश्वर, कालाग्नि, कामराजका गन्धाक्षतसे पूजन करके अनाहत शब्दको अनुसन्धान करते हुए ध्यान देना यही इनका पूजन है। पुनः पञ्च-भूत-जन्य जो इस शरीरमें पाप हैं उन्हें मन्त्रोंसे हटाकर मूलबन्ध करे।

तब दिव्य-शक्ति भुवनेश्वरीका ध्यानकर अपनेमें शिवोऽहं इसकी भावना करता हुआ उस शक्ति (हृल्लेखा) को मन्त्राक्षरमयी मूर्ति और मन्त्राक्षरोंके स्वरूपका ध्यानकर, कुलकुण्डलिनी अर्थात् इडाका ऐसा ध्यान करे कि मैं उस शक्तिके दाहिनी ओर बैठा हुआ हूं और इस प्रकार पराशक्ति महाकुण्डलिनीका पूजन करे। पुनः योगविधिके अनुसार महाकुण्डलिनीका पूजनकर, मूलमन्त्रसे

कुण्डलिनो शक्तिके ऊपरी भागमें हृल्लेखा, कुन्तलस्थानमें कराली, ललाटमें विकराली, भ्रूमध्यमें सरस्वती, नेत्र तथा कर्णमें लक्ष्मी, नासिकामें दुर्गा, गण्डस्थलमें पूषा, मुखमें लक्ष्मी, कण्ठदेशमें वेद, स्कन्धोंमें स्मृति, हाथोंमें धृति, वक्षस्थलमें श्रद्धा, कुचोंमें मेधा, कुक्षिमें मति, दोनों पार्श्वमें कान्ति, पृष्ठमें आर्या, नाभिमें अनङ्ग-रूपा, योनिमें भुवनपालिका, गुह्यदेशमें अनङ्गमदना, ऊरुमें भुवनवेगा, जानुमें अनङ्गवेदना, इस प्रकार कुण्डलिनी शक्तिको मूर्तिमती ध्यानकर, पूर्वोक्त अङ्गोंमें तत्स्थानीय देवियोंका पूजन करे और पैरमें अनङ्गमेखला तथा पैरसे शिर तक समग्र शरीरमें देवी भुवनेश्वरीका ध्यान करके पूजन करे।

अनन्तर त्रिकोण मूलमें जो आदि शिवलिङ्ग हैं उनका पूजन करे, अपनेको शिवस्वरूप और देवोको कुण्डलिनी शक्तिकी भावनाकर ब्रह्मरन्ध्रसे अमृतरूपी रेतस क्षरण करता हुआ मूल-मन्त्र यथा शक्ति जप करे। उसी ब्रह्मरन्ध्रसे निकले हुए अमृतरूप रेतससे देवी भुवनेश्वरीका तर्पण करे।

तदनन्तर योनि मुद्रासे प्रणाम कर, अवरोह क्रमसे विसर्जन कर देवे, इसीको संहार-मुद्रा भी कहते हैं, अर्थात् समग्र प्रपञ्चोंका लय कर देना।

हे देवि! यह पटल कुण्डलिनी शक्तिका प्रकाशक है। अतएव जिसे गुरू और योगमें श्रद्धा न हो उसे न बताया जाय और इसे गुप्त भी रखना चाहिये।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

अथ द्वाविंशः पटलः

—:०:—

श्रीभैरवउवाच। भैरवजी बोले—

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि कुमारीणाञ्चपूजनम्।
यं विधाय कलौ मन्त्री सर्व सिद्धीश्वरो भवेत्॥
मन्त्री स्नात्वाथशुद्धात्मा कृत्वा देवि क्रमार्चनम्।
कुर्यात्तत्र कुमारीणां पूजामाश्विनमासके॥
प्रतिपद्दिवसेमन्त्री कुमारीं सुमनो हराम्।
अभ्यङ्गस्नानशुद्धां तां पूजा संस्थानमानयेत्॥
देवता सन्निधौ बाला मुपवेश्य समर्चयेत्।
गन्धपुष्पाक्षतै धूंप दीपैश्च कदली फलैः॥
भक्ष्य भोज्यान्न पानाद्यैः क्षीराज्य मधुमांसकैः।
कदली नारिकेलादि फलै स्तां परितोषयेत्॥
सशक्तिकः स्वयं देवि यौवनोल्लास संयुतः।
यथाशक्ति जपेन्नैकोत्तर वृद्ध्याथवामनुम्॥
बालामलंकृतां पश्यन् चिन्तयेत्स्वेष्टदेवताम्।
ततस्तां देवता बुद्ध्या नमस्कृत्य विसर्जयेत्॥
द्वितीयायां द्विवर्षान्ता मेकवर्षां च पूजयेत्।
एवंविधि कुमारीं च यजेत्पूर्वदिनेर्चिता॥
नवम्यामेकवर्षादि नववर्षान्त कन्यकाः।
बाला शुद्धा लक्षिता च मालिनी च वसुन्धरा॥

सरस्वती रमा गौरी दुर्गा च नव कीर्तिताः।
त्रिताराद्यैर्नमोन्तैश्च देवता पद पश्चिमैः॥
नामभिः सचतुर्थ्यन्तैः पूजयेत्ता पृथक्-पृथक्।
वटुकं पञ्चवर्षं च नववर्षं गणेश्वरम्॥
गन्धपुष्पाम्बराकल्पैर्यथा विभव विस्तरम्।
अभ्यर्च्य देवता बुद्ध्या पदार्थैः परितोषयेत्॥
स्वकार्यफल सिद्ध्यर्थं वित्तशाठ्य विवर्जितः।
नवरात्रं जपे देकोत्तरवृद्धि क्रमेणच॥
नवरात्रि कृतां पूजां देवि देव्यै समर्पयेत्।
ताम्बूलं दक्षिणां दत्वा कुमारीं तां विसर्जयेत्॥

भैरवजी बोले, हे पार्वति! अब कुमारी पूजनकी विधि कहता हूं, तुम सुनो। साधक जिस पूजनको करके कलियुगमें सम्पूर्ण सिद्धियोंका स्वामी होता है।

साधक स्नान करके पहले भूतोत्सारण आदि करके पञ्चभूतात्मक शरीरको शुद्धिकर अपने शरीरको आराधना योग्यकर भुवनेश्वरी भगवतीकी नित्य पूजा सम्पादन करके आश्विन मासकी नवरात्रिके समय कुमारियोंका पूजन करे।

प्रतिपत् तिथिके दिन साधक तैलाभ्यङ्ग तथा स्नानसे शुद्ध (पवित्र) मनोहराङ्गी कुमारीको पूजास्थलमें लावे, तब देवी श्रीभुवनेश्वरीकी पूर्ववर्णित यन्त्रमयी मूर्तिके सामने बैठाकर उस कुमारीका गन्ध, अक्षत, धूप-दीप, वैजयन्तीफल, भक्ष्य, भोज्य

अन्न, पान आदि तथा दूध, घृत, मधु, जटामांसी, केला, नारिकेल आदि पूजनोपादानसे पूजन करके प्रसन्न करे।

पूजनकालमें अपनी शक्ति भी साथ रहनी चाहिये अर्थात् सपत्नीक ही पूजनका अधिकारी हो सकता है और सादर साधक यौवनके उल्लाससे प्रफुल्लित होकर अपनी शक्तिके अनुकूल एक-एक क्रमसे मालाकी संख्याकी वृद्धि क्रमसे अपनी इष्ट देवीका मूलमन्त्र जप करे।

अलङ्कारोंसे सुशोभित कुमारीको देखकर अपनी इष्टदेवीका चिन्तन करे, उसके अनन्तर उस कन्याको देवी जानकर प्रणाम करके विसर्जित करे।

इसी प्रकार द्वितीया तिथिमें दो वर्षकी कन्या, अथवा एक वर्षकी भी, कुमारीका उपरोक्त क्रमसे पूजन विसजन आदि करे। तृतीयामें ३ वर्षकी, चतुर्थीमें ४ वर्षकी, पञ्चमीमें ५ वर्षकी, षष्ठीमें ६ वर्षकी, सप्तमीमें ७ वर्षकी, अष्टमीमें ८ वर्षकी और नवमीमें ९ वर्षकी कन्याओंका उक्त नियमसे पूजन करे। यह तिथि कुमारिकायें कहलाती हैं, इन्हींके क्रमसे यह नाम हैं—१ बाला २ शुद्धा ३ लक्षिता, ४ मालिनी, ५ वसुन्धरा, ६ सरस्वती, ७ रमा, ८ गौरी, ९ दुर्गा यही नवदुर्गा भी मानी गयी हैं। इन देवियोंके पूजन इस वाक्यसे करे यथा तीन प्रणव, अन्तमें नमः उसके पूर्व देवता पद तथा नामको चतुर्थी युक्त करके—

पृथक्-पृथक् पूजन करे, तब ५ वर्षके बटुक और ९ वर्षके गणपतिका वस्त्र, गन्ध आदि सामग्रियोंसे अपनी सम्पत्तिके

अनुकूल पूजनकर, उन्हें देवता जानकर पदार्थोंसे प्रसन्न कर देवे। अपने कार्यकी सिद्धि हेतु वित्तशाठ्यसे रहित होकर एक-एक दिनकी वृद्धि क्रमसे जपको विस्तार करता हुआ नवरात्रि सम्पादित समस्त पूजा-कल्पको देवीके लिये अर्पण करे, तब ताम्बूल और दक्षिणा देकर विसर्जन करे।

अब कुमारी पूजनका फल इस प्रकार है—

एवं नवकुमारीणा मर्चनं प्रतिवत्सरम् ;
यः करोति सपुण्यात्मा देवता प्रीतिमाप्नुयात् ।
मनोभिलषितं प्राप्य निवसेत्तव सन्निधौ ॥

भैरव पार्वतीसे कहते हैं, हे देवि ! इस तरह ६ कुमारियोंका जो पुण्यात्मा प्रतिवर्ष पूजा करता है, वह देवताकी प्रसन्नताको प्राप्त करता है और इस लोकमें अपने जीवनकालमें मनोभिलषित पदार्थोंको पाकर अन्तमें तुम्हारे समीपमें निवास करता है।

इत्येष पटलोदेवि कुमारी पूजनात्मकः ।
गोपनीयः प्रयत्नेन मन्त्रसिद्धिकरोमतः ॥

हे देवि ! यह कुमारी पूजनात्मक पटल मन्त्र सिद्धिप्रद है और यत्नपूर्वक गोपनीय है।

इति श्री भुवनेश्वरी रहस्ये कुमारी वटुक पूजाविधिः,
द्वाविंशः पटलः ॥२२॥

तिथिनिबन्धः

—: कलापकम् :—

तत्व, व्योम, रव, पक्ष, संख्यकशुभे संवत्सरे वैक्रमे।
वारे दैत्य गुरो स्तया सितदले मासे च पौषे शिवे॥
अष्टम्या मुदिते दिवाकरमणौ श्रीसुन्दरी सेवकः।
गर्गाचार्यकुलेऽवनौ हिमगिरे भूमिष्ठतां प्रापितः॥
श्रीकाली चरणानुराग कृपया रूपान्तरे प्रेरित
आनन्दीभूतवर्षिणां भगवता सीलंधवाग्नै भवः॥
श्रीदेवी भुवनेश्वरी प्रियकरं ह्येतद्रहस्यं मुदा।
मोक्षद्वारकपाट मोचनकरं लोकेऽपि सिद्धि प्रदं॥
सर्वैश्वर्य प्रदायकं वसुमतौ साम्राज्य संसाधकं।
गौरी प्रीतिकरं धरातलविधौ माहेश्वरं विश्रुतं॥
द्वाविंशत्पटलै र्युतं सुगहनं गुप्तञ्च तन्त्रात्मकं।
आचारादि नियामकं विधिमयं विज्ञानसंदीपकं॥
नाना पूजन यन्त्र मन्त्र सहितं वैचित्र्य पूर्णं तथा।
सर्वाशापरिपूरकं भवमहामोहाम्बुधेस्तारकं॥
शास्त्री "श्रीहरिदत्त" संज्ञकद्विजो "श्रीकृष्णदत्तात्मजः"।
भाषाबद्धमयं करोमि कृतिनां लाभाय संक्षेपतः॥

